॥ श्रीः ॥

ज्ञानवैराग्यप्रकाश ।

(भाषावेदान्त)



जिसको

मुमुक्षु पुरुषोंके कल्याणार्थ काशीनिवासी स्वामी **परमानंद** परमहंसने निर्माण कियाहै. (जिसके देखनेसे विषयी पुरुषोंका भी चित्त संसारसे उपरामको प्राप्त होजाताहै, तब वैराग्यवानोंकी कौन कथा है ?)

वही

खेमराज श्रीकृष्णदासने

बम्बई

(खेतवाडी ७ वीं गली खम्बाटालैन)

निज " श्रीवेङ्कटेश्वर " स्टीम्-मुद्रणालयमें मुद्रितकर प्रसिद्ध किया ।

संवत् १९७२, शक १८३७.

यह पुस्तक खेमराज श्रीकृष्णदासने बम्बई खेतवाडी ७ वीं गली खम्बाटा लैन स्वकीय "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेसमें अपने लिये छापकर यहीं प्रकाशित किया ।

भूमिका।



यह वार्ता तो सर्व पुरुषोंके अनुभव करके सिद्ध है, जो यह संसार महान् दुःखरूप है। और इसमें रहकरके बडे २ महान् पुरुषोंको भी दुःख हुआ है फिर इतर जीवोंकी कौन कथा है ? जो कि, अवतार कहलाये हैं उनको भी इसमें क्लेश हुआ है और उन्होंने भी इसको दुःखरूप करके कहा है । तिसमें भी जो कि, पुनः २ जन्म होना और मरण होना है यह असह्य दुःख है। फिर बाल्यावस्था, युवावस्था और वृद्धावस्था अर्थात् तीनों अवस्थाएं दुःखरूप हैं। और भी शारीरिक और मानसिक दुःख अनंत हैं अर्थात् दुःखोंकी खान है या दुःखोंका एक महान् समुद्र है । इससे तरनेके लिये एक आत्मज्ञानही साधन है, वह आत्मज्ञान बिना वैराग्यके किसीको भी प्राप्त नहीं होता है और बिना वैराग्यके किसीको भी सुख नहीं मिलता है और न पूर्व हुआ है और न आगे होगा। इसलिये वैराग्यका स्वरूप जानना और वैराग्यवानोंके इतिहासोंको जानने और सुनानेकी आवश्यकता है। क्योंकि बिना वैराग्यके चित्तकी स्थिरताभी नहीं होती है । और वैराग्यके प्रभावसेही अनेक पुरुष आत्मज्ञानको प्राप्त हुए हैं और वैराग्यही आत्मज्ञानके साधनोंमें मुख्य साधन है और संसारमें वैराग्यवान् यति हो या गृहस्थ हो किसी आश्रममें वा किसी वर्णमें हो उसीकी प्रतिष्ठा और कीर्ति होती है, रागवान्की नहीं होती है। दत्तात्रेय, जडभरतादिक और भरथरी आदिक सब वैराग्यके प्रभावसेही पूज्य होगये हैं और इदानीं कालमें भी वैराग्यवान्ही जहाँ तहाँ पूजा जाता है । इसलिये जिज्ञासु पुरुषोंके अवलोकन करनेके लिये इस ग्रन्थकी रचना कीगई है। अस्सी इतिहास वैराग्यवानोंके दृष्टांतके लिये इस ग्रन्थमें लिखे गये हैं । और ५१ एक ऊपर पचास इतिहास ज्ञानवानोंके दृष्टांतके लिये इस ग्रन्थमें लिखे गये हैं और जीव ईश्वरके निर्णयमें बहुतसे मत दिखाये हैं और अज्ञानका स्वरूपभी भलीभाँतिसे दिखाया गया है मुमुक्षुओंको उचित है कि, इस ग्रन्थको अवश्य

देखें । यह ग्रन्थ मुमुक्षुओंके लाभार्थ मैंने बडे परिश्रमसे निर्माणकर मुंबईस्थ परम माननीय ग्रन्थोद्धारक सेठ **खेमराज श्रीकृष्णदास,** अध्यक्ष " **श्रीवेङ्कटेश्वर** " स्टीम्–मुद्रणालयको पुनर्मुद्रणादि सर्व हक समेत **अर्पण** किया है । ॐ शान्तिः ॥

द० स्वामी परमानन्दजी.





ज्ञानवैराग्य भाषा ।



प्रथम किरण.

मंगलाचरण ।

दोहा—नमो नमो तेहि रूपको, आदि अन्त जेहि नाहिं ।
सो साक्षी मम रूप है, घाट बाढ कहुँ नाहिं ॥ १ ॥
अविगत अविनाशी अचल, व्याप रह्यो सब थाहिं ।
जो जानै अस रूपको, मिटै जगत भ्रम ताहि ॥ २ ॥
हंसदास गुरुको प्रथम, प्रणवों बारंबार ।
नाम लेत जेहि तम मिटै, अघ होवत सब छार ॥ ३ ॥

चौपाई ।

परमानँद मम नाम पछानो । उदासीन मम पथको जानो ॥
रामदास मम गुरुको गुरु हैं । आतमवित जो मुनिवर मुनि हैं ॥४॥

दोहा ।

परसराम मम नगर है, सिन्धु नदी उसपार ।
भारत मण्डलके विषे, जानै सब संसार ॥ ५ ॥
ज्ञानवैराग्यप्रकाशक, ग्रन्थ नाम अस जान ।
जे अवलोकन येहि करैं, सोई चतुर सुजान ॥६॥
जन्म मरण दुख नाश हित, जानेही बुधिमान ।
जो धारण अस को करै, पावै पद निर्बान ॥७॥

ग्रन्थारम्भ ।

बडा महात्मा और विरक्त विवेकाश्रम नामवाला एक संन्यासी बहुत कालसे अपने निवासके योग्य मठकी तलाश करता था, तलाश करते २ उसने इस संसारमें एक कम चौरासी लाख मठोंको देखा, उनमेंसे किसी मठकोभी उसने अपने निवासके योग्य न देखा । तब वह बडी चिंता करके आतुर हुआ और एक देशमें बैठकर विचार करने लगा । विना एकांतमें निवास करनेसे परमार्थका चिंतन होना कठिन है और ऐसा कोई निर्दोष रमणीक स्थानभी नहीं मिलताहै जिसमें बैठकर आत्माका विचार किया जाय और ध्यान धारणादिक सब किये जाँय । इसी सोचमें वह पडा था कि, इतनेमें एक बडा सुन्दर मठ उसको दिखाई पडा,कैसा वह मठहै ? दो हैं नीचे खम्भे जिसके और नव हैं द्वार जिसमें और स्वेच्छाचारीभी है और अनेक प्रकारकी दिव्य रचना करके जो विभूषित है देखनेमें भी जो कि बडा सुन्दर है, तिस मठको देखकरके विवेकाश्रमका मन अति प्रसन्न हुआ और अपने निवासके योग्य जानकर तिसमें विवेकाश्रमने अपना आसन लगादिया । आसन लगानेके पश्चात् विवेकाश्रम क्या देखते हैं कि, नवीन अवस्थावाली बडी सुन्दर रूपवाली एक स्त्री हाथमें कमलका फूल लिये हुए वहांपर आकरके खडी होगई और नेत्रोंके कटाक्षसे वह विवेकाश्रमकी तरफ देखने लगी । तिस स्त्रीको देखकर विवेकाश्रम बडे दुःखी होकर कहने लगे, हमने मठकी खोजमें महा कष्टोंको उठाया है और बडाभारी परिश्रम किया है तब हमको निवासके योग्य यह मठ मिला है, तिसमें यह महान् विघ्नरूप सम्पूर्ण अनर्थोंका कारण स्त्रीरूपी पिशाची कहींसे आकर हमारे सन्मुख खडी होगई है । मोक्षमार्गकी तो यह शत्रुरूपही है, इसी वास्ते यतीको स्त्रीके दर्शनकाभी निषेध किया है ॥

अद्वैतामृतवर्षिणी–

जिताहारोऽथवा वृद्धो विरक्तो व्याधितोपि वा ।
यतिर्न गच्छेत्तं देशं यत्र स्यात्प्रतिमा स्त्रियः ॥ १ ॥

यति जिताहार हो, अथवा वृद्ध हो, या विरक्त हो, वा रोगकरके पीडित हो, तबभी उस देशमें न जाय जहाँपर स्त्रीकी मूर्त्तिभी लिखी हुई हो ॥ १ ॥

धर्मशास्त्रम् ।

संभाषयेत्स्त्रियं नैव पूर्वदृष्टां च न स्मरेत् ।
कथां च वर्जयेत्तासां नो पश्येल्लिखितामपि ॥ २ ॥

यति स्त्रीके साथ संभाषण न करै और पहलेकी देखी हुईका मनमें स्मरणभी न करै और स्त्रियोंकी कथाओंकोभी न करै और लिखी हुई स्त्रीकी मूर्तिकोभी न देखै ॥ २ ॥

यस्तु प्रव्रजितो भूत्वा पुनः सेवेत्तु मैथुनम् ।
षष्टिवर्षसहस्राणि विष्ठायां जायते कृमिः ॥ ३ ॥

जो संन्यासी होकर फिर स्त्रीके साथ मैथुनको करता है वह साठ हजार वर्ष विष्ठामें कृमिकी योनिको प्राप्त होता है ॥ ३ ॥

विषयासक्तचित्तो हि यतिर्मोक्षं न विन्दति ।
यत्नेन विषयासक्तिं तस्माद्योगी विवर्जयेत् ॥ ४ ॥

जिस यतिका चित्त विषयोंमें आसक्त रहता है वह यति मोक्षको कदापि नहीं प्राप्त होता है । इसलिये यति यत्न करके विषयासक्तिसे चित्तको हटावे ॥ ४ ॥

ऐसे २ धर्मशास्त्रके वाक्योंका विचार करके फिर विवेकाश्रम अपने मनमें कहते हैं—यदि यह सुंदरी इस जगहमें रहजायगी तब हमारा छोटा भाई जो वैराग्य आश्रम है, वह कैसे यहांपर रहेगा ? वह तो बडा भीरु है, स्त्रीकी परछाँईसे भाग जाता है । और जो कि शमदमादिक संन्यासी हैं वह कैसे इसके साथ सहवास करेंगे ? किंतु कदापि नहीं करेंगे । और फिर मुमुक्षाभी यहांपर नहीं आवेगी । इन सबके न आनेसे संसारमें मुक्तिकी रेखाभी उच्छिन्न होजायगी । इसलिये इसको यहांसे निकालनेका कोई उपाय करना चाहिये । ऐसा विचारके फिर विवेकाश्रम यह विचार करते हैं, प्रथम इससे पूँछना चाहिये तू कौन है और क्यों यहांपर आई है ? सो दूसरा आदमी तो इदानींकालमें इस स्थानमें है नहीं जो कि इससे बात चीत करे इसलिये हमही इससे पूछते हैं। विवेकाश्रम कहते हैं—हे ललने ! तू कौन है और किसकी है, और

कहांसे तू आई है, क्या तुम्हारा प्रयोजन है, यहांपर तू अब रहेगी या चली जायेगी ? विवेकाश्रमके ऐसे मधुर वचनोंको सुनकर वह ललना हँसकरके बोली । हे विवेकाश्रम ! तू मेरेको नहीं जानता है, मैं तेरी बडी भगिनी हूं, चित्तवृत्ति मेरा नाम है, मेरेको तू इसवास्ते नहीं जानता है जो तू मेरेसे पीछे पैदा हुआ है और संसारमण्डलमें भ्रमण करके जिन २ मठोंको तूने त्याग दिया है अपने निवासके योग्य नहीं जाना है, उन सब मठोंमें निवास करके मैंने उनको सुशोभित किया है और यह जो तूने पूँछा है तुम्हारा क्या प्रयोजन है ? इसके उत्तरको सुनो—सुन्दर भोगोंको भोगना, सुंदर गीतोंको श्रवण करना, सुंदर स्त्रियोंके साथ क्रीडा करनी, सुंदर सुगंधियोंको लगाना, सुंदर वस्त्रोंको पहरना, सुंदर भोजनोंके रसोंको आस्वादन करना, सदैवकाल प्रसन्नमन रहना और जहाँतक बनसके विषयानंदको लेना । संसारमें इतर पुरुषोंकोभी विषयानन्द लेनेका उपदेश करना यही मेरा मुख्य प्रयोजन है और यह जो रमणीक मठ है जिसमें कि तुम इदानींकालमें विराजमान हो, इसी मठमें मेराभी रहनेका संकल्प है, क्योंकि यह भोगके योग्य अतीव अच्छा मठ है, इसीमें निवास करके मैं अब पूर्ण रीतिसे भोगोंको भोगूंगी । चित्तवृत्तिके विचारको सुनकर विवेकाश्रम बोले हे चित्तवृत्ते ! यह मठ मिथ्या भोगोंके भोगनेके लिये नहीं है, क्योंकि स्त्री पुत्रादिरूप भोग तो इतर मठोंमें जो कि मैंने त्याग दिये हैं उनमेंही होसक्ते हैं, यह मठ तो केवल आत्मानंदकी प्राप्तिके लिये है । यदि तेरेको भोगोंकी इच्छा है तब तो इस मठसे अतिरिक्त जो मठ हैं, जो कि मैंने त्याग दिये हैं, उनमें जाकर तू भोगोंको भोग । इस मठका त्याग करदे, क्योंकि यह मठ विरक्त मुमुक्षु संन्यासियोंके योग्य है, या हम सरीखे ज्ञानवान् आत्मानंदके आस्वादन करनेवालोंके लिये है । यदि तुम्हारेको भी आत्मानंदके लेनेकी इच्छा हो तब इन सुंदर वस्त्र और आभूषणोंका त्याग करके मुंडित होकर हमारे साथ निवास करो । चित्तवृत्ति कहती है हे भ्राता ! तुम्हारी तरह बुद्धिहीन मूर्ख मैं नहीं हूं जो मुंडित होकर भस्म लगाकर शून्य मंदिरोंमें और श्मशानोंमें भ्रमकर स्वादहीन और कल्पित आत्माकी प्राप्तिके लिये दुःखको उठाऊँ, प्रत्यक्ष आत्माका त्याग करके अप्र-

त्यक्षके पीछे राखको छानती फिरूं। मैं तो सुन्दर भोगोंको भोगतीहूं, सुन्दर वस्त्रोंको पहरतीहूं, सुगन्धीवाले द्रव्योंको लगातीहूं, अनेक प्रकारके रसोंवाले भोजनोंको खाती हूँ, अनेक प्रकारके वीणा आदिक बाजोंके शब्दोंको श्रवण करतीहूं, कोमल २ शय्यापर शयन करतीहूं, सदैवकाल विषयानंदको अनुभव करती हूं। यह तो आत्मानंद है और इसीका नाम स्वर्गसुख है। जो लोक इस लोकमें सुन्दर स्त्री आदिक भोगोंको भोगते हैं, वेही मानो स्वर्गवासी कहे जाते हैं। जिनको यह भोग प्राप्त नहीं है या जो इनका त्याग करके तुम्हारी तरह मुंडित होकर बनोंमें और श्मशानोंमें भ्रमण करते हैं वही मानो नरकवासी कहेजाते हैं। हे मूढ! यह संन्यास तो विधाताने लूले लंगडोंके लिये बनाया है तुम्हारे जैसे सर्वांगसम्पन्न पुरुषोंके लिये संन्यास विधान नहीं किया है सो ऐसाही लिखा है–

अग्निहोत्रं त्रयो वेदास्त्रिदण्डं भस्मगुंठनम्।
बुद्धिपौरुषहीनानां जीविका धातृनिर्मिता ॥ १ ॥

अग्निहोत्र करना, तीनों वेदोंका पाठ करना, तीन दण्डोंको धारण करना, भस्मका लगाना, ये सब बातें उनके लिये ब्रह्माने बनाई हैं जो कि बुद्धि और पुरुषार्थसे हीन पुरुष हैं हे विवेकाश्रम! तुम्हारे जैसे बुद्धिमान् और पुरुषार्थियोंके वास्ते नहीं बनाई हैं ॥ १ ॥

त्रयो वेदस्य कर्तारो मुनिभंडनिशाचराः ॥ १ ॥

मुनि और भांड तथा निशाचर इन तीनोंका बनाया हुआ वेद है, आंख मूंदकर बैठजाना ये मुनियोंका कर्म है सो वेदमें आंख मूंदकर बैठना लिखा है और नाक पकडना ताली बजाना ये भांडोंका काम है, सो वेदमें नाक पकडकर ताली बजानाभी लिखा है और पशुओंको मारकर खाजाना ये पिशाचोंका कर्म है सो वेदमें यज्ञोंमें पशुओंको मारकर खाना भी लिखा है और पंडितोंने निरर्थक शब्द भी जरफरी आदिक और–स्वाहाकार और स्वधाकार बहुतसे बनाकर वेदोंमें भर दिये हैं। हे विवेकाश्रम! और बहुत कष्टदायक कर्म कल्पित

स्वर्गकी प्राप्तिके लिये भी लिख दिये हैं। यदि यज्ञमें पशु मारनेसे स्वर्ग होता है तब यजमान अपने पिताको क्यों नहीं यज्ञमें होम करता ? तिसकोभी तो स्वर्ग कामना बनी है। फिर जितने यज्ञादिक कर्मोंके करनेवाले मरे हैं, किसीने भी आजतक आकरके नहीं कहा जो हमारेको स्वर्ग हुआ है या नहीं हुआ है। इस लिये सब अपने खाने और द्रव्यके वंचन करनेके लिये बना दिये हैं और जो कि मरोंके पीछे पिंड और अन्नको देते हैं यदि उनको मिलता है, तब जो पुरुष विदेशमें जाता है, घरमें भी तिसके पीछे देनेसे उसको मिलना चाहिये, ऐसा तो नहीं देखते हैं। इस वास्ते येभी सब जीविकाके लियेही बनाया गया है, वास्तवमें मरेको कुछभी नहीं मिलता है॥

न स्वर्गो वाऽपवर्गो वा नैवात्मा पारलौकिकः।
नैव वर्णाश्रमादीनां क्रिया च फलदायिका॥ १॥

वास्तवमें न स्वर्ग है और न कोई मोक्ष है और न कोई परलोकमें गमन करनेवाला आत्माही है और वर्णाश्रमोंकी कोई क्रिया भी पारलौकिक फलको देनेवाली नहीं है॥ १॥

यावज्जीवेत्सुखं जीवेदृणं कृत्वा घृतं पिबेत्॥
भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुतः॥ २॥

यावत्पर्यंत पुरुष संसारमें जीता रहे सुखपूर्वकही जीवनको व्यतीत करे, यदि कहो घृतादिकोंके पान करनेके विना कैसे सुखपूर्वक जीवन होसकता है। तब हम कहते हैं ऋणको लेकर घृतको पान करै यदि कहो ऋण फिर कहांसे दिया जायगा तब कहते हैं ऋण देना किसको है देहके भस्मीभूत होनेपर फिर तो कोई देनेवाला रहेगा नहीं इसलिये देनेकाभी भय नहीं है॥ २॥ चित्तवृत्ति कहती है हे विवेकाश्रम ! इस कुरूपताका त्याग करके तुम सुरूपताको धारण करके संसारके भोगोंको भोगो व्यर्थ अपनी आयुको खराब मत करो। विवेकाश्रम कहते हैं हे चित्तवृत्ते ! ऐसा मत भाषण कर विधाताने त्रिदण्ड और संन्यासको आत्मज्ञानकी प्राप्तिका साधन बनाया है तुमने उलटा समझ लिया है इसलिये इस विपरीत बुद्धिको तूं त्याग करके आत्मविषयिणी

बुद्धिको आश्रयण कर। चित्तवृत्ति कहतीहै हे विवेकाश्रम ! जो वस्तु पहले प्राप्त न हो और यत्न करके पश्चात् प्राप्त हो उसकी प्राप्तिके लिये कोई साधन बनसक्ताहै और जो वस्तु कि प्रत्यक्ष नेत्रोंसे दिखातीहै और अपनेको प्राप्तभी है तिसकी प्राप्तिके लिये कोई भी साधन नहीं बन सक्ताहै। हे मूढ ! यह जो स्थूल शरीर है, दो हाथ, दो पाँव, दो कान, दो आँखवाला यही तो आत्मा है। इससे भिन्न और कौन आत्मा है। और इस शरीरसे जो कि, भोग भोगे जातेहैं उनसे जो आनन्द प्राप्त होताहै येही तो आत्मानंदहै, इससे भिन्न दूसरा और कौनसा आत्मानंदहै। संसारमें सबलोग तो शरीरको ही आत्मा मानतेहैं और इन्द्रिय विषयके सम्बन्धसे जो सुख होताहै उसीको आत्मानंद मानतेहैं। तुम्हारी तरह लोग मूर्ख नहींहैं, जो प्रत्यक्ष आत्माको छोडकर अप्रत्यक्षके पीछे खराब होते फिरें। हे विवेकाश्रम ! अब भी तुम्हारा कुछ नहीं बिगडाहै, इस बनावटी वेषका त्याग करके अपने असली वेषको धारण करके तुम भोगोंको भोगो। मूर्ख मत बनो। इस मूर्खतासे तुमको सुख कदापि नहीं होगा। विवेकाश्रम अपने मनमें कहतेहैं यह रांड तो अपनेको बडी पंडिता मानकर बोलरहीहै इस मूर्खाको यदि हम सूक्ष्म विचारसे समझावैंगे तब तो यह नहीं समझेगी क्योंकि एकतो स्त्री, दूसरे बडी चपल, तीसरे विषयोंके सन्मुख यह दौडनेवाली है। इसलिये इसको स्थूल दृष्टांतों करके समझाना चाहिये। क्योंकि जैसा बुद्धिवाला पुरुषहो उसको उसी रीतिसे समझाना ठीक है। फिर महात्माका उपकारी स्वभावभी होताहै और परोपकारके लिये महात्माओंका शरीर उत्पन्न होताहै और मूर्खोंको सच्चे रस्तेपर लगानाही भारी उपकारहै। इसलिये इस मूर्खाको अब हम स्थूल दृष्टांतोंको देकर समझातेहैं। विवेकाश्रम कहतेहैं, हे चित्तवृत्ते ! जैसे विष्टाका कृमि मिश्रीके स्वादको नहीं जानताहै, नीमका कीट ऊखके स्वादको नहीं जानताहै, मद्यपान करनेवाला अमृतके स्वादको नहीं जानताहै, असत्यवादी सत्यभाषणके फलको नहीं जानताहै, व्यभिचारिणी स्त्री पतिव्रताके प्रभावको नहीं जानतीहै तैसे तूभी हे चित्तवृत्ते ! आत्मानंदके स्वादको नहीं जानतीहै जबतक तू विषयानंदकी तरफ दौडतीहै तबतक तेरेको आत्मानन्द-

का कणमात्रभी नहीं मिला है, जिस कालमें एक लवमात्रभी तिसका तुझको प्राप्त होजावेगा फिर कभी तू विषयानन्दकी इच्छाको नहीं करैगी। हे चित्तवृत्ते! इसमें तुमको हम एक दृष्टांतको सुनाते हैं।

एक चींटी निमकके पर्वतपर रहती थी, दूसरी एक चींटी मिश्रीके पर्वत पर रहतीथी,एक दिन वह निमकके पर्वतवाली चींटी मिश्रीके पर्वतवाली चींटीके पास गई और तिसको हृष्ट पुष्ट प्रसन्नमुख देखकर पूँछने लगी, बहिन! तुम्हारा मुख बडा प्रसन्न दिखाता है और तुम्हारा शरीरभी बडा हृष्ट-पुष्ट तैयार है, तुमको ऐसा कौनसा पदार्थ खानेको मिलता है जिसके सेवन करनेसे तुम सदैवकाल आनंदित रहती हो। उसने कहा मैं मिश्रीके पर्वतपर रहती हूं मनमानी मिश्रीको खाती हूं, तिसीके खानेसे मेरा मुख प्रसन्न रहता है और शरीरभी मेरा रोगसे रहित तैयार रहता है। तब तिस नमकके पर्वतवाली चींटीने तिससे कहा हमको भी तूं मिश्रीके पर्वतको बतादे जो मैंभी तिसको खाकर तुम्हारी तरह होजाऊं। मैंने तो कभीभी मिश्रीको नहीं खाया है और न कभी मैंने तिसका नामही सुना है आज तुम्हारे मुखसे मिश्रीके महत्त्वको श्रवण करके हमाराभी मन तिसके खानेके लिये चलागया है, इसवास्ते अब तू जल्दी हमको मिश्रीके पर्वतको बतादे। तिस चींटीने उसकोभी मिश्रीके पर्वतको बतादिया यह तिस पर्वतपर घूमकर आकरके तिस चींटीसे कहनेलगी बहन! यह नीमकका पर्वत है इसमें मिश्रीका तो कहीं नाम निशानभी नहीं है। तब तिस मिश्रीके पर्वतवाली चींटीने अपने मनमें विचार किया क्या कारण है, जो कि मिश्रीके पर्वतपर घूमनेसेभी इसको मिश्री नहीं मिली। फिर जब कि तिसके मुखकी तरफ तिस चींटीने देखा तब तिसके मुखमें एक नमककी डली छोटीसी पडी थी तिसको देखकर उसने जानलिया यही मिश्रीके न मिलनेका कारण है. उस चींटीने निमककी डलीवाली चींटीसे कहा बहन! तेरे मुखमें तो निमककी डली पडी है जबतक तू इस डलीका त्याग नहीं करैगी तबतक तेरेको मिश्री नहीं मिलैगी। उसने तुरन्तही निमककी डलीको फेंक दिया और फिर तिस मिश्रीके पर्वतपर गई तब फिर मिश्रीके मिलनेमें कौन देरी थी जातेही तिसको

मिश्री मिल गई ॥ हे चित्तवृत्ते ! यहतो दृष्टांत है। अब दार्ष्टांतमें इसको सुनो अंतःकरणरूपी मिश्रीका पर्वत है, क्योंकि तिसके भीतर आत्मारूपी मिश्री भरी है। विषयानंदरूपी नमककी डलीको तू मुखसे पकडकर तिस मिश्रीके पर्वतपर रात्रिदिन फिरती रहती है। इसीसे तेरेको वह आत्मानंदरूपी मिश्री नहीं मिलती है जब तूभी तिस नमकवाली चींटीकी तरह अपने मुखसे तिस विषयानंदरूपी डलीको फेंककर मिश्रीके पर्वतपर मिश्रीकी तलाशमें फिरैगी तब तेरेकोभी तुरंत आत्मानंदरूपी मिश्री मिल जावैगी। हे चित्तवृत्ते ! जितने कि संसारमें स्त्री, पुत्र धनादिक विषय हैं, ये सब देखनेमात्र करके सुंदर प्रतीत होते हैं। वास्तवमें यह सब सुंदर नहीं हैं क्योंकि जिनको प्राप्त हैं वहभी सब दुःखी हैं और जिनको नहीं प्राप्त हैं, वहभी सब दुःखी हैं विचार करनेसे तो इनमें सुखका लेशमात्रभी नहीं है। यदि इनमें सुख होता तब विवेकी पुरुष इनका त्याग कभी भी न करते और बहुतसे राजा महाराजोंनेभी इनका त्याग किया है, इसीसे जानाजाता है, स्त्री, आदिक सब विषय दुःखरूप हैं इसी वार्त्ताको हे चित्तवृत्ते ! हम तुमको अनेक दृष्टांतों करके दिखाते हैं ॥ १ ॥

हे चित्तवृत्ते ! एक नगरमें एक बनियां बडा गरीब रहता था एक तिसकी स्त्री थी और एकही तिसका लडका था जब कि वह लडका पांच बरसका हुआ तब बनियां और तिसकी स्त्री दोनों मरगये तब वह लडका अनाथ होगया कोईभी तिसकी सहायता करनेवाला जब न रहा तब एक महात्मा दया करके तिस लडकेको लेगये और अपना चेला बनाकर तिसकी पालना करने लगे और तिसको विद्यादि गुणों करके सुशिक्षित करने लगे। जब कि, लडका पढ लिखकर सुशिक्षित होगया और बीस बरसकी तिसकी आयुभी होगई तब एकदिन लडकेने अपने गुरुसे कहा महाराज ! मेरेको तीर्थयात्रा करनेके लिये आज्ञा दीजिये। गुरुने प्रसन्न होकर कहा जावो, तुम तीर्थ करआवो। जब कि, वह तीर्थयात्राको चला तब एक दिन रास्तामें वह जाता था कि, एक बरात तिसको मिली उसको देखकर तिस लडकेने पूछा यह क्या है ? क्योंकि उसको बरात और विवाहके संस्कार नहीं थे, लोकोंने कहा यह बरात

है उसने कहा वरात क्या होती है? और ये पालकीमें बैठा हुआ सुंदर वस्त्रोंको पहरे हुए कौन है ? लोकोंने कहा यह दूलह है इसकी शादी एक लडकीके साथ कीजावेगी । इस दूलहाको लेकर ये सब लोग लडकीवालेके घरमें जाँयगे वहाँपर गाना बजाना नाच रंग होगा फिर दूलहका तिस लडकीके साथ पाणिग्रहण होगा । फिर लडकीको लेकर अपने घरमें आकर दूलह और दुलहन दोनों रात्रिमें एक पलंगपर शयन करैंगे और विषयानंदको भोगेंगे । उन लोकोंसे सुनकर उस साधुके अंतःकरणमें भी सब संस्कार विवाह करनेके और स्त्रीके साथ सोनेके बैठ गये, जब कि एक ग्रामके समीप पहुँचा तब वहाँपर एक बडा सुंदर पक्का कूप था उस कूपपर उसने आसन लगादिया जब रात्रि पडी तब कूपके किनारे पर वह सोगया नींदमें उसको विवाहके संस्कार सब उद्भूत होगये तब उसने स्वप्नमें देखा कि, मेरा विवाह हुआ है और स्त्री घरमें आई है उसके साथ एक पलंगपर सोये हैं, जब कि सोये हुए थोडीसी देर बीती तब स्त्रीने कहा थोडासा पीछे हटो ज्योंही वह पीछेको हटा त्योंही तडाकसे कूवेमें गिरपडा तिसके गिरनेकी आवाजको सुनकर इधर उधरसे लोगोंने जमा होकर तिसको कूवेमेंसे निकाला और तिससे पूँछा तुमको किसने कूवेमें गिराया है उसने कहा हमको स्वप्नकी स्त्रीने कूवेमें गिरा दिया है । बडे आश्चर्य्यकी वार्त्ता है जो कि स्वप्नकी मिथ्या स्त्रीके साथ सोया वह तो कूवेमें गिरा जोकि जाग्रत्की स्त्रीके साथ सोते हैं वहतो अवश्यही महान् नरकरूपी कूवेमें गिरते होंगे इसमें संदेह नहीं है । हे चित्त-वृत्ते ! स्त्रीके सम्बन्धसे बड़े २ देवतोंकीभी फजीती हुई है । इसलिये स्त्रीही संसाररूपी बंधनका कारण है, चित्तवृत्ति कहती है हे भ्राता ! स्त्रीके संगसे जिस २ देवता और ऋषि तथा मनुष्यकी फजीती हुई है तिस २ देवता और ऋषि तथा मनुष्योंकी कथाओंकोभी संक्षेपसे मेरे प्रति कहो ॥ २ ॥

विवेकाश्रम कहते हैं हे चित्तवृत्ते ! एक समयमें ब्रह्माजीने अपने अंगोंसे अहिल्या नामवाली कन्याको उत्पन्न किया और सब देवता तथा ऋषियोंके सन्मुख गौतमजीके साथ तिसका विवाह करदिया । तिस सुन्दररूपवाली और श्रेष्ठ अंगोंवाली अहिल्याको देखकर इन्द्र मोहित होगया उसी कालसे

इन्द्रके मनमें यह संकल्प हुआ कि किसी प्रकारसे इसके साथ भोग करना चाहिये । इन्द्र इसी फिकरमें रहने लगा जब कि इन्द्रको अहिल्यापर घात लगाये कुछ काल बीत गया तब एक दिन गौतमजी पुष्कर तीर्थमें स्नान करनेको गये पीछेसे अहिल्या उनके पूजाके बर्त्तनोंको साफ करने लगी इतनेमें गौतमका रूप धारण करके इन्द्र गौतमके गृहमें घुसा. अहिल्या उसको पति जानकर खडी होगई तब इन्द्रने कहा हे प्रिये ! आज मैं बडा कामातुर हुआहूं तुम जल्दी मेरे पास आवो । अहिल्याने कहा हे स्वामिन् ! यह तो आपकी पूजाका समय है भोगका समय नहीं है आप पूजा करिये मैंने पूजाकी सब सामग्री तैयार करदी है. इन्द्रने कहा हे प्रिये ! आज मैंने मानसी पूजा करली है तुम जल्दीसे हमारे पास आवो हमको काम जलाये देता है इतना कहकर इन्द्रने अहिल्याको पकडकर अपनी मनमानी प्रसन्नता करली जब कि इन्द्र अहिल्यासे भोग करचुका इतनेमें गौतमजी आगये तब इन्द्र बिलारका रूप धारण करके भागने लगा गौतमजीने कहा तू कौन है ? जो बिलारके रूपको धारण करके भागा जाता है गौतमजीके क्रोधसे इन्द्रको इतना भय हुआ जो तुरन्तही बिलारके रूपको त्याग करके अपने इन्द्ररूपसे कांपता हुवा हाथ जोडकर तिनके सन्मुख खडा होगया । इन्द्रको देखतेही गौतमने शाप दिया हे दुष्ट ! जिस एक भगके लिये यहांपर पाप कर्म करनेके लिये आया था तेरे शरीरमें एक हजार भग होजांयगे और अहिल्याकोभी शाप दिया मांससे रहित पाषाणवत् तेरा शरीर होजायगा । हे चित्तवृत्ते ! स्त्रीके संगसे ऐसी इन्द्रकी फजीती हुई ॥ ३ ॥

अब ब्रह्माकी फजीतीको तुम्हारे प्रति सुनाते हैं—पद्मपुराण स्वर्गखण्ड अ० ६ में यह कथा है, हे चित्तवृत्ते ! शांतनु नाम करके एक ऋषि था, तिसकी स्त्रीका नाम अमोघा था, एक दिन ब्रह्माजी किसी कार्यके लिये तिस ऋषिके घरमें गये आगे वह ऋषि घरमें न था तिसकी स्त्री घरमें थी, उसने ब्रह्माजीका बडा सत्कार किया पाद्य अर्घादिकों करके : और एक आसन उनके बैठनेको दिया जब कि ब्रह्माजी आसनपर बैठे तब तिस पतिव्रताने ब्रह्माजीसे कहा भगवन् !

आपका आना किस निमित्तको लेकरके हुआ है ब्रह्माजीने कहा ऋषिको मिलनेके लिये आये थे, उसने कहा ऋषि तो किसी कार्य्यके लिये कहीं गये हैं ब्रह्माजी तिसके सुन्दर रूपको देखकर मोहित होगये । कामदेवने ब्रह्माजीको ऐसा व्याकुल किया जो ब्रह्माजीका वीर्य उसी आसनपर निकल गया तब ब्रह्माजी लज्जित होकर अपने स्थानको चले आये उधरसे जब ऋषी घरमें आये तब तिस वीर्यको देखकर स्त्रीसे पूंछा यह क्या है ? स्त्रीने सब हाल ब्रह्माजीका कह सुनाया ऋषिने कहा यह कामका महत्त्व है जिसने ब्रह्माकोभी मोहित कर लिया है हे चित्तवृत्ते ! स्त्रीका संग ऐसाही बुरा है जिसके दर्शनसे देवताभी धैर्यको नहीं धर सक्ते हैं । तब इतर जीवोंकी क्या कथा है ? इसी वास्ते विवेकी पुरुष इसके समीपभी स्थित नहीं होते हैं ॥ ४ ॥

हे चित्तवृत्ते ! पद्मपुराणके स्वर्गखण्डमें महादेव और विष्णुकी कथाभी लिखी है उन कथाओंको भी तुम सुनो ॥ ५ ॥

एक कालमें महादेवजी अपने स्थानमें समाधिमें स्थित थे और मर्त्यलोकमें मनुष्योंकी बहुतसी स्त्रियें सुन्दररूप और युवावस्थावाली वनमें क्रीडा कर रही थीं, उनके रूप और यौवनोंको देखकर महादेवजी काम करके बडे व्याकुल होगये और महादेवजीका मन उनके साथ भोग विलास करनेको तैयार होगया तब महादेवजीने अपने मन्त्रके बलसे उन सब स्त्रियोंको आकाशमें खैंच लिया और आपभी आकाशमें स्थिर होकर उनके साथ भोग विलास करने लगे और बहुत कालतक उनको आलिंगन करते रहे और विषयानन्दमें मग्न होगये इधर पार्वतीकी जो समाधि खुली तब तिनने देखा कि महादेवजी अपने आसनपर स्थित नहीं हैं और आकाशमें मनुष्योंकी स्त्रियोंके साथ भोग विलास कर रहे हैं तब पार्वतीजीको बडा क्रोध हुवा और आकाशमें जाकर तिनने उन सब स्त्रियोंको भूमिपर गिरा दिया और महादेवजीको लाकर समाधिमें फिर स्थिर किया । हे चित्तवृत्ते ! सुन्दर स्त्रियोंको देखकर महादेवजीभी भूलगये और उनकी समाधिमें भी विघ्न हुवा तब इतर तुच्छ बुद्धिवाले जीवोंकी कौन कथा है ॥ ६ ॥

एक कालमें देवता और दैत्योंका युद्ध होने लगा दैत्योंका राजा जालंधर था, तिसकी स्त्रीका नाम वृंदा था वह बडी पतिव्रता थी, तिसके पातिव्रतके प्रभावसे वह जालंधर दैत्य देवतोंसे जीता नहीं जाता था, तब देवतोंने विष्णुसे जालंधरके जीतनेके लिये कई उपाय किये । विष्णु जालंधरका रूप धारण करके तिसकी स्त्रीके पास गये और उससे भोग किया जब कि, भोग करके पातिव्रतधर्म नष्ट करचुके तब वृन्दाको मालूम होगया कि यह विष्णु हैं, हमारे पति नहीं हैं, तब तिसने विष्णुको शाप देदिया, जावो तुम पाषाण होजावो । तिसके शापसे विष्णुको पाषाण होना पडा । हे चित्तवृत्ते ! यह स्त्रीरूपी विषय मुक्तिमार्गका विरोधी है इसीलिये विवेकी पुरुष इससे दूर भागते हैं ॥ ७ ॥

हे चित्तवृत्ते ! पद्मपुराणके स्वर्गखण्डमें एक वृद्ध ब्राह्मणकी कथा लिखी है जिसका स्त्रीके दर्शनसे मृत्युही होगया था तिसकी कथाको भी तुम सुनो ।

गंगाजीके किनारेपर एक बडा तपस्वी वृद्ध ब्राह्मण रहता था और लोकोंको सदैवकाल धर्मकाही उपदेश करता था और विप्रोंमें बडा उत्तम अपने नित्य नैमित्तिक कर्ममेंभी बडा तत्पर था और अकेलाही एक मंदिरमें रहता था । एक दिन वह अपने मंदिरके द्वारपर बैठा हुवा था कि इतनेमें एक स्त्री बडी रूपवती युवावस्थावाली अपने पतिके गृहको जातीहुई तिस मंदिरके आगेसे निकली । तिस स्त्रीके रूपको देखकर वह ब्राह्मण मोहित होगया और काम-करके बडा पीडित हुआ । वह स्त्री अपने गृहके भीतर चली गई तब यह देरतक उसके द्वारकी तरफ देखता रहा जो फिर भीतरसे बाहरको निकले तब मैं उससे कुछ बातचीत करूं. जब कि वह फिर बाहरको न निकली तब ब्राह्मण देवता तिसके द्वारपर जाकर पुकारने लगे हे प्रिये ! जल्दी किवाडको खोलो । मैं तुम्हारा पति हूँ, तिसके शब्दको सुनकर तिस स्त्रीने किवाडको खोल दिया और देखा तो एक वृद्ध ब्राह्मण खडे हैं । स्त्रीने कहा तुम कौन हो ? और क्यों हमारे द्वारपर आये हो ? उस ब्राह्मणने कहा मैं ब्राह्मण हूँ, तुम्हारे सुंदर रूपको देखकर हमारा मन काम करके व्याकुल होगया है हम भोग करनेकी इच्छा करके तुम्हारे द्वारपर आये हैं तुम हमसे भोग करो । तिस

स्त्रीने कहा मैं पतिव्रता हूं, फिर हमसे ऐसा शब्द मत कहना । ब्राह्मणने कहा मेरे पास बहुतसा द्रव्य है वह सब द्रव्य हम तुमको देदेवेंगे. तुम हमसे सम्बंध करो हम काम करके बडे पीडित होरहे हैं, तुम्हारे आगे हाथ जोडते हैं, तुम्हारे पांवभी पडते हैं, स्त्रीने कहा तुम हमारे धर्मके सम्बन्धसे पिता लगते हो, हमारे साथ भोग करनेका संकल्प मत करो । जब कि किसी रीतिसे भी स्त्रीने तिस ब्राह्मणका कहा नहीं माना तब वह जबर-दस्ती भीतर जानेके लिये तैयार हुआ और प्रथम उसने अपना शिर द्वारके भीतर जब किया तब स्त्रीने जोरसे दोनों किंवाडोंको बंद कर दिया । उन दोनों किंवाडोंके लगनेसे तिसका शिर कटगया और वह मरगया । लोगोंने तिस स्त्रीसे तिस ब्राह्मणके मरनेका समाचार पूंछा तब तिस स्त्रीने सब कथा सुनाई–लोगोंने कहा यह कामदेवका महत्त्व है । तिसके मुरदेको लेजाकर लोगोंने फूक दिया । हे चित्तवृत्ते ! यह स्त्रीरूपी विषय बडा बली है तुरन्त पुरुषोंके चित्तको व्याकुल करदेता है, जब कि वृद्धावस्थावाले विचारशील षट्कर्मियोंकी इसके संगसे ऐसी बुरी दशा होती है, तब युवावस्थावालोंकी कौन गिनती है ॥ ८ ॥

हे चित्तवृत्ते ! सुन्दर रूपवती अप्सराको देखकर विश्वामित्र तप करना भूल गये थे और उसीके साथ भोग विलासमें मग्न होगये थे । पराशरजी मल्लाहकी कन्याके रूपको देखकर मोहित होगये थे, नदीका रेता और दिनकी रात्रि ये तो सब उन्होंने कर दिया था परन्तु कामको नहीं रोक सके थे । इसीपर कहाभी है–

विश्वामित्रपराशरप्रभृतयो वाताम्बुपर्णाशना–
स्तेऽपि स्त्रीमुखपंकजं सुललितं दृष्ट्वैव मोहं गताः ॥
शाल्यन्नं सघृतं पयोदधियुतं ये भुंजते मानवा–
स्तेषामिन्द्रियनिग्रहो यदि भवेद्विंध्यस्तरेत्सागरम् ॥ १ ॥

विश्वामित्र और पराशरसे लेकर जो कि मुनि पत्तोंको भक्षण करते थे वह भी सुन्दर कमलके तुल्य स्त्रीके मुखको देखकर शीघ्रही मोहको प्राप्त होगये । शालि, दधि, घृतकरके संयुक्त भोजनको जो पुरुष खाते हैं उनके इंद्रिय

यदि अपने वशीभूत होजाँय तब तो विन्ध्याचल पर्वतभी समुद्रमें तरने लग जायगा ॥ १ ॥

तात्पर्य यह है, जैसे विन्ध्याचल पर्वतका तैरना असंभव है, तैसे इंद्रियोंका रोकना भी असंभव है । उसीके इन्द्रिय रुके रहते हैं जो कि स्त्रीका संसर्ग नहीं करता है, संसर्गके होनेपर रुकना कठिन है । आत्मपुराणमें कामकी प्रबलता दिखाई है:—

कामक्रोधौ महाशत्रू देहिनां सहजावुभौ ।
तौ विहाय परं शत्रुं यो जयेत्स तु मंदधीः ॥ १ ॥

जीवोंके काम और क्रोध स्वाभाविकही बडेभारी शत्रु हैं, तिनको छोडकर जो दूसरे शत्रुओंको जीतता है वह मंदबुद्धि है ॥ १ ॥

पितापुत्रौ महावीर्यौ कामक्रोधौ दुरासदौ ॥
विजित्य सकलं विश्वं वर्त्तेते जयकाशिनौ ॥ २ ॥

काम और क्रोध ये पिता और पुत्र हैं और बडे बली हैं, सारे विश्वको जीतकरके जयशाली होकर संसारमें दोनों विराजमान हैं ॥ २ ॥

कामेन विजितो ब्रह्मा कामेन विजितो हरिः ॥
कामेन विजितः शम्भुः शक्रः कामेन निर्जितः ॥ ३ ॥

ब्रह्माको कामने जय करलिया, विष्णुको कामने जय करलिया, महादेवको कामने जय करलिया, इन्द्रको कामने जय करलिया ॥ ३ ॥

संसारमें कामने विना विवेकी पुरुषोंको सबको जीत लिया है । हे चित्तवृत्ते ! वही पुरुष संसारमें आत्मानन्दको प्राप्त होता है जो कि कामको अपने वशीभूत करलेता है । हे चित्तवृत्ते ! स्त्रीके संसर्गसे जिन पुरुषोंकी दुर्गति हुई है उनके और दो एक दृष्टांत तुमको सुनाते हैं ॥

एक राजाने किसी विलायतपर चढाई की, तिस विलायतको जीतकर राजा तिसी देशमें कुछ कालतक रहगये, पीछे राजाकी रानी राजाके विना बडी काम करके व्याकुल होगई, तब वह अपने मंदिरकी खिडकीमेंसे इधर उधर देखने लगी, एक साहूकारका लडका बडा सुंदर अपने मकानपर खडा था, उसको देखकर रानीका मन मोहित होगया क्योंकि, एक तो वह

युवा अवस्थावाला था, दूसरे उसका रूप भी अतिसुंदर था, रानीने अपनी लौंडीको उसको बुलानेके लिये भेजा, लौंडीने उससे जाकर कहा-रानीसाहिबा आपको बुलाती हैं, रानीको कुछ जवाहिरात खरीदनी हैं, वह लडका सुंदर वस्त्र और भूषणोंको पहनकर रानीके पास गया और रानी तिससे बातचीत प्रेमसे करने लगी इतनेमें लौंडीने आकर रानीसे कहा राजा साहिब बाहर आगये हैं अभी थोडी देरमें भीतर आवैंगे, रानीसे तिस लडकेने कहा हमको जल्दी छिपावो, नहीं तो हम मारे जायँगे। रानीने तिसको पाखानेके नीचेके नलमें अन्धेरेमें खडा करदिया, थोडी देरमें राजा भीतर आगये और रानीसे उन्होंने कहा हमारे पेटमें कुछ कसर होगई है हम पाखाने जायँगे, लौंडी पानी लेआई राजा साहिब पाखाने गये, राजाने जब पाखाना फिरा तब वह सब मल तिस लडकेके शिरपर और कपडोंपर गिरा सब कपडे तिसके मैलेसे भर गये, जब राजा पाखाना होकर चले गये तब रानीने भी तिसको निकाल दिया उस लडकेको बडी घृणा हुई और नगरके बाहर नदीपर जाके सब कपडोंको धोकर साफ करके घरमें जाकर दूसरे कपडे बदलकर वह अपने काममें लगा। दूसरे दिन फिर रानीने लौंडीको तिसके बुलानेके लिये भेजा और लौंडीने जाकर तिससे कहा रानीसाहिबा आपको बुलाती हैं, तिस लडकेने कहा एक दिन मैं रानीके पास गया और उससे केवल बातचीतही की थी तिसका फल यह हुवा जो दो घंटा मेरेको पाखानेकी मोरीमें खडा होना पडा और अपने शिरपर दूसरेको हगाना पडा, जो लोग परस्त्रीके साथ भोग विलास करते हैं न मालूम उनको कितने कालतक विष्ठाके नलमें खडा होना पडता होगा और कितने लोकोंको शिरपर हगाना पडता होगा, मेरेको तो वह दो घंटोंका नरकभोग नहीं भूलता है, इसलिये मैं तो फिर कभीभी रानीके पास नहीं जाऊंगा, ऐसा जवाब लेकर वह लौंडी लौटगई। हे चित्तवृत्ते! परस्त्रीके संगसे तो और अधिक क्लेश लोकोंको भोगने पडते हैं। हे चित्तवृत्ते! पराई स्त्री तो क्लेशोंका हेतु है। इसमें सन्देह नहीं है परन्तु अपनी स्त्री भी अपनैही सुखके लिये भतारसे प्रेम करती है, भतारके सुखके लिये वह प्रेम नहीं

करती है, यदि भर्तारके सुखके लिये स्त्री प्रेम करती है तब रोगी ऋषी नपुंसक निर्धन भर्तारसे भी प्रेम करे ऐसा तो संसारमें कहीं भी नहीं देखते हैं और आत्मपुराणमें ऐसा लिखा भी है—

दरिद्रं पुरुषं दृष्ट्वा नार्यः कामातुरा अपि ॥
स्प्रष्टुं नेच्छन्ति कुणपं यद्वच्च कृमिदूषितम् ॥ १ ॥

यदि स्त्री काम करके आतुर भी हो तब भी अपने दरिद्री भर्ताको स्पर्श करनेकी इच्छा नहीं करती है जैसे कृमियोंकरके दूषित मुरदेको कोई स्पर्शकी इच्छा नहीं करता है ॥ १ ॥

ब्राह्मादिभ्यो विवाहेभ्यः प्राप्ता नारी पतिव्रता ॥
भर्तुर्दरिद्रस्य मृतिं वांछति क्षुधयार्दिता ॥ २ ॥

ब्राह्मादि जो धर्मशास्त्रमें विवाह लिखे हैं उन विवाहोंकरके यदि पतिव्रता स्त्री भी किसीको प्राप्त हुई हो वह क्षुधा करके पीडित हुई दरिद्री भर्ताके मरनेकीही इच्छा करती है ॥ २ ॥ संसारमें स्त्री आदिक सब अपनेही सुखके लिये एक दूसरेसे प्रीतिको करते हैं इसीमें तुमको हम एक और दृष्टांत सुनाते हैं ॥ ९ ॥

एक साहूकारका लडका नित्यही सत्संगके लिये एक महात्माके पास जाता था, तिसके माता पिताको यह शोच हुआ कि, हमारा लडका वैराग्यकी बातोंको सुनकर कहीं भागही न जाय इसलिये जल्दी इसकी शादी कर देनी चाहिये ऐसा विचार करके उन्होंने एक सुंदर रूपवती कन्याके साथ तिसका विवाह करदिया। तब भी लडका नित्यही सत्संगके लिये उन महात्माके पास अपने वक्तपर बराबरही जायाकरे। विवाह होजानेपर भी वह नहीं हटा, तब तिसके माता पिताने तिसकी स्त्रीसे कहा तूं ऐसी इसकी सेवा कर जो लडका हमारा महात्माके पास जानेसे हट जाय। वह सेवा करने लगी और लडकेको तिसने अपने वशीभूत करलिया तब लडका धीरे २ जानेसे हटने लगा। पहले तो नित्य जाता था फिर दूसरे तीसरे दिन जाने लगा। एक दिन स्त्रीने कहा तुम जब कि, रात्रिको चलेजाते हो,

तब मैं अकेली रह जाती हूं और स्त्रीका अकेला रहना अच्छा नहीं है और मेरेको अकेले रहते डर भी लगती है, स्त्रीकी वार्ताको सुनकर लडकेने बिलकुल वहांपर जाना छोड दिया। जब कि, बहुत दिन बीत गये तब एक दिन महात्मा कहीं जाते थे लडका उनको रास्तेमें मिलगया उन्होंने लडकेसे न आनेका सबब पूँछा तब लडकेने कहा महाराज! स्त्रीने सेवा करके मेरेको अपने वशमें करलिया है, वह मेरेको बडा सुख देती है और मेरे विना रात्रिको दो घंटातक भी वह अकेली नहीं रहसक्ती है। वह कहती है मैं तुम्हारे वियोगको एक क्षणमात्र भी नहीं सहसक्ती हूँ और मैं भी जानगया हूं जो यह हमारे सुखके लिये सब बातें करती है इसलिये मेरा अब आना छूट गया है। महात्माने कहा वह अपने सुखके लिये तुमसे प्रीति करती है तुम्हारे सुखके लिये वह प्रीतिको नहीं करती है, यदि तुमको हमारी बातपर विश्वास न हो तब तुम एक दिन उसकी परीक्षा करो। महात्माने श्वासोंके रोकनेकी एक युक्ति तिस लडकेको बताकर कहा एक दिन तुम स्त्रीसे कहना आज हम तस्मै और चूरी दोनों खायँगे जब कि, भोजन तैयार होजाय तब तुम हमारी बताई हुई युक्तिसे श्वासोंको रोककरके लम्बे पडजाना वह जानेगी यह तो मरगया है तब तुमको पूरी २ परीक्षा तिसके प्रेमकी होजायगी। लडकेने घरमें आकर स्त्रीसे कहा कल हम तस्मै खायँगे तस्मै बनाना और थोडीसी चूरीभी बनाना, स्त्रीने कहा बहुत अच्छा। दूसरे दिन सबेरे उठकर स्त्रीने तस्मै बनाई और चूरी भी बनाई जब रसोई तैयार होगई तब लडका जहांपर बैठा था वहांपर दो थंभ आपसमें सटेहुए छतके नीचे लगे थे लडका उन दोनों थंभोंके बीचमें पांवको फँसाकर स्त्रीसे कहने लगा हमारे पेटमें कुछ दर्द है, ऐसा कहकर उसने श्वासोंको रोक लिया और लम्बा पड गया। स्त्रीने जब कि, चौकासे उठकरके तिसको देखा तब तिसके श्वास बंद थे स्त्रीने जाना यह तो मर गया है यदि मैं अभीसे रोना पीटना शुरू करती हूं तब तो मैं दिन रात भूखी मरूंगी और तस्मै भी खराब होजायगी इसवास्ते तस्मैको खा लेऊं और चूरीको ऊपर छीं..के रख छोडूं ऐसा विचार करके स्त्रीने तस्मैको खा लिया और चूरीको धरकर रोना पीटना शुरू किया।

इतनेमें अडोस पडोसके लोक सब आगये और उन्होंने पूंछा कैसें मर गया ? तब स्त्रीने कहा इसके पेटमें दर्द पडी थी उसीसे मर गया है । लोकोंने कहा अब देर मत करो जल्दी इसको श्मशानमें लेचलो जब कि, तिसको उठाने लगे तब तिसका एक पांव दोनों थंभोंके बीचमें फँसा हुआ न निकला तब लोकोंने कहा एक थंभको काटकर पांवको निकाल लीजिये स्त्रीने कहा ऐसा मत करो थंभ कटजायगा तब कौन फिर मेरेको बनवादेगा इसलिये थंभको मत काटिये पांवकोही काट दीजिये क्योंकि, पांवको तो जलानाही है। जब कि, पांवको काटने लगे तुरंत वह उठकर बैठगया और कहने लगा हमारे पेटका दर्द अब जातारहा लोक सब अपने २ घरोंको चले गये लडकेने सब हाल आकर महात्माको सुनाया महात्माने कहा हम जो कहते थे वही सत्य हुआ ? अब तो तेरेको इस विषयमें कुछ संदेह नहीं ? लडकेने कहा महाराज ! अब तो मेरेको कुछभी संदेह नहीं है । आपका कहना ठीक है । अपनेहीं सुखके लिये स्त्री पतिसे प्रेम करती है पतिके सुखके लिये स्त्री पतिसे प्रेमको नहीं करती है । हे चित्तवृत्ते ! उसीदिनसे उस लडकेने स्त्रीका त्याग करदिया और परम वैराग्यको प्राप्त होकर महात्माके पासही रहने लग गया ॥ ९ ॥ इसी वार्त्ताको याज्ञवल्क्यजीने भी मैत्रेयके प्रति बृहदारण्यक उपनिषद्में कहा है। जिसकालमें जीवन्मुक्तिके सुखके लिये याज्ञवल्क्यजी गृहस्थाश्रमको छोडकर संन्यासाश्रमको जाने लगे तब तिस कालमें उन्होंने अपनी दोनों भार्याओंसे कहा कि, हम अब इस आश्रमको छोडना चाहते हैं, जितना कि, हमारे पास द्रव्य है उसको तुम दोनों आपसमें आधा २ बांट लेवो, उन दोनों भार्याओं-मेंसे एकका नाम कात्यायनी था, दूसरीका नाम मैत्रेयी था । कात्यायनीने तो अपना हिस्सा धनका लेलिया, मैत्रेयीने कहा भगवन् ! इस धनको लेकर मैं संसारसे मुक्त होजाऊंगी ? याज्ञवल्क्यने कहा जैसे और धनवान्, जीवनको व्यतीत करते हैं तैसे तू भी जीवनको व्यतीत करेगी। धनकरके तो मोक्षकी संभावनामात्र भी नहीं होती है, तब मैत्रेयीने कहा जिस वस्तुके पानेसे मैं मुक्त होजाऊं उसको मेरे प्रति दीजिये मैं धनकी इच्छा नहीं करतीहूं । याज्ञवल्क्यजी मैत्रेयीके प्रति उपदेश करते हैं ॥

न वारे पत्युः कामाय पतिः प्रियो भवति ।
आत्मनस्तु कामाय पतिः प्रियो भवति ॥ १ ॥

अरे मैत्रेयि ! पतिकी कामना करके पति स्त्रीको प्यारा नहीं होता है किंतु अपनी कामनाके लिये पति स्त्रीको प्यारा होता है ॥ यदि पतिकी कामना करके स्त्रीको पति प्यारा हो तब नपुंसक रोगी निर्धन होनेसे भी पति स्त्रीको प्यारा होना चाहिये, ऐसा तो नहीं देखते हैं इसलिये पतिकी कामनाके लिये पति प्यारा नहीं होता है ॥ १ ॥

न वारे जायायै कामाय जाया प्रिया भवति ।
आत्मनस्तु कामाय जाया प्रिया भवति ॥ २ ॥

अरे मैत्रेयि ! जायाकी कामनाके लिये पतिको जाया प्यारी नहीं होती है किंतु अपनी कामनाके लिये जाया पतिको प्यारी होती है । यदि जायाकी कामनाके लिये पतिका जायामें प्रेम हो तब लडाकी कुपित व्यभिचारिणी रोगीमें भी प्रेम हो ऐसा तो नहीं है इसीसे सिद्ध होता है अपने सुखके लिये पतिका जायामें प्रेम होता है ॥ २ ॥

न वारे पुत्राणां कामाय पुत्राः प्रिया भवंत्या-
त्मनस्तु कामाय पुत्राः प्रिया भवंति ॥ ३ ॥

अरे मैत्रेयि ! पुत्रोंकी कामनाके लिये माता पिताका पुत्रोंमें प्रेम नहीं होता है किंतु अपने सुखके लिये पुत्रोंमें प्रेम होता है, यदि पुत्रकी कामनाके लिये प्रेम हो तब कुपात्र पुत्रमें भी प्रेम होना चाहिये ऐसा तो नहीं देखते हैं, इस-लिये पुत्रकी कामनाके लिये माता पिताका पुत्रमें प्रेम नहीं होता ॥ ३ ॥ हे मैत्रेयि ! संसारके जिस २ पदार्थमें पुरुषोंका प्रेम होता है वह अपने आत्माके सुखके लिये होता है, इसीसे सिद्ध होता है सबसे अतिप्रिय अपना आत्माही है और सुखरूप भी आत्माही है, आत्माके सुखके लिये पुरुष स्त्री पुत्रादिक विषयोंमें प्रेम करता है, वास्तवसे उनमें सुख नहीं है, वह दुःखरूप है, सुख-रूप आत्माही है, इसप्रकार याज्ञवल्क्यने मैत्रेयीको उपदेश करके तिसको भी जीवन्मुक्त करदिया ॥ १० ॥

हे चित्तवृत्ते ! शुकदेवजीने भी स्त्रीरूपी विषयकी निंदा की है, यह कथा देवीभागवतमें आतीहै । जिस कालमें व्यास भगवानने शुकदेवजीको विवाह करनेके लिये कहा है उस कालमें शुकदेवजीने स्त्रीके संगसे जो दोष होतेहैं उनको दिखाया है । उनको भी सुनो–

कदाचिदपि मुच्येत लोहकाष्ठादियंत्रितः ॥
पुत्रदारैर्निबद्धस्तु न विमुच्येत कर्हिचित् ॥ १ ॥

लोह काष्ठादिकी बेडी जिसके पाँवमें पडजातीहै उससे कदाचित् वह पुरुष किसी कालमें छूटभी सक्ताहै, परंतु स्त्री--पुत्रादिकोंके मोहरूपी बेड़ीसे पुरुष कभी भी छूट नहीं सक्ताहै ॥ १ ॥

अधीत्य वेदशास्त्राणि संसारे रागिणश्च ये ॥
तेभ्यः परो न मूर्खोऽस्ति सधर्माः श्वाश्वसूकरैः ॥ २ ॥

जो पुरुष वेद और शास्त्रोंका अध्ययन करके फिरभी स्त्रीपुत्रादिरूप संसारमें रागवान है, उनसे बढकर और कोईभी मूर्ख नहींहै क्योंकि स्त्री-पुत्रादिरूप संसारमें रागवान तो कूकर घोडा सूकर आदिकभी हैं तिनको वेद शास्त्रका क्या फल हुआ किंतु कुछभी नहीं ॥ २ ॥

गृह्णाति पुरुषं यस्माद्गृहं तेन प्रकीर्तितम् ॥
क्व सुखं बंधनागारे तेन भीतोस्म्यहं पितः ॥ ३ ॥

शुकदेवजी कहतेहैं, हे पिता ! जिस हेतुसे गृहस्थाश्रम पुरुषको ग्रहण करलेता है इसी हेतुसे इसका नाम गृह रक्खा है इस गृहस्थाश्रमरूपी कैद-खानेमें सुख कहाँ है ? जिस हेतुसे इसमें सुख नहीं है इसीसे मैं भयभीत हुआ हूं ॥ ३ ॥

मानुष्यं दुर्लभं प्राप्य वेदशास्त्राण्यधीत्य च ॥
बध्यते यदि संसारे को विमुच्येत मानवः ॥ ४ ॥

दुर्लभ मनुष्यशरीरको प्राप्त होकर और वेदशास्त्रका अध्ययन करके फिरभी यदि संसारमें बंधायमान होजाय तब फिर संसारबंधनसे छूटेगा कौन ? ॥ ४ ॥

इन्द्रोऽपि न सुखी ताहग्याहग्भिक्षुस्तु निःस्पृहः ॥
कोऽन्यः स्यादिह संसारे त्रिलोकीविभवे सति ॥ ९ ॥

शुकदेवजी कहतेहैं कि, जैसा निःस्पृह भिक्षुक सुखी है वैसा इन्द्रभी सुखी नहीं है, त्रिलोकीके विभव होनेपर जब इन्द्रभी निःस्पृह भिक्षुकके तुल्य सुखी नहीं है तब दूसरा कौन सुखी होसक्ताहै ? किंतु कोईभी नहीं होसक्ताहै ॥९॥ ऐसे वाक्योंको कहकरके शुकदेवजी वनको चले गये। विवेकाश्रम कहतेहैं--हे चित्तवृत्ते ! यदि स्त्रीभोगमें सुख होता तब शुकदेवजी तिसका त्याग क्यों करते ? जिस हेतुसे शुकदेवजीने विवाहही नहीं किया था इसीसे सिद्ध होताहै कि, स्त्रीके साथ भोगमें सुख नहीं है ॥ ११ ॥

हे चित्तवृत्ते ! इसी विषयमें एक और लौकिक दृष्टांत तुमको हम सुनातेहैं—एक ग्रामके बाहर एक महात्मा रहतेथे वहांपर उनके पास बहुतसे लोग सत्संग करनेके लिये जातेथे, एक महाजनका लडका भी उनके पास नित्यही जाताथा एक दिन लडका कुछ देरमें महात्माके पास गया तब महात्माने कहा आज तुम देर करके कैसे आयेहो ? लडकेने कहा आज हमारी सगाई हुईहै, ससुरालसे तिलक चढनेको आयाथा इसलिये देर होगई है, महात्माने कहा आजसे तुम हमारे कामसे गये, फिर कुछ कालके पीछे लडका चार पांच दिन नागाकरके महात्माके पास गया तब उन्होंने पूँछा कि चार पांच दिन क्यों नहीं आया ? तब लडकेने कहा हमारी शादी हुई है उसीकाममें हम बँधेरहे और इसीसे मेरा आना नहीं हुआ है। महात्माने कहा आजसे तू माता पिताके कामसे भी गया, फिर एक दिन लडका कुछ देर करके उनके पास गया, फिर उन्होंने देर करके आनेका कारण पूँछा तब लडकेने कहा आज हमारे घरमें लडका उत्पन्न हुआहै इसीसे आनेमें देर होगईहै, तब महात्माने कहा आजसे तुम अपने कामसे भी गये। लडकेने कहा महाराज ! पहले जब कि, आपने मेरी सगाई होनेका हाल सुनाथा तब आपने कहा था तुम आजसे हमारे कामसे गये, फिर विवाहको सुनकर कहाथा माता पिताके कामसे गये, आज लडकेकी उत्पत्तिको

सुनकर आपने कहा अब तुम अपने कामसे भी गये इसका मतलब मैंने कुछ नहीं समझा इसका मतलब मेरेको समझा दीजिये। महात्माने कहा जबतक तुम्हारी सगाई नहीं हुईथी तबतक तुमको कोई चिंता न थी क्योंकि, तुम तिस कालमें गृहस्थी नहीं कहलाते थे और जो कुछ तुम कमातेथे उसमें कुछ हमारी सेवाभी करतेथे, कुछ माता पिताकी सेवा भी करतेथे। सगाईके होनेपर विवाहकी चिंता पडी, तब तुम जो कुछ कमाते सो विवाहके लिये जमा करते, कुछ माता पिताकी भी कभी २ सेवा करदेते थे, जब कि विवाह होगया तब फिर जो तुम कमाते सो स्त्रीके अर्पण करते, तब माता पिताके कामसे गये. जबतक लडका नहीं हुवा था तबतक जो तुम कमातेथे उसको स्त्रीके साथ मिलकर आप भोगतेथे, अब जो तुम कमावोगे सो सब लडकेके लालनपालनमें खर्च होगा इसलिये अब तुम अपने कामसेभी गये और पूरे गृहस्थ होगये याने ग्रसे गये और कैदमें पडगये ॥ १२ ॥

हे चित्तवृत्ते ! स्त्री बंधनका हेतु है, इसी स्त्रीके पीछे सुन्द और उपसुन्द दोनों परस्पर लडकर मर गये। नहुष राजाको स्त्रीभोगके पीछे स्वर्गसे गिरना पडा। एक स्त्रीके पीछे वाली मारा गया और रावणका भी सारा घर स्त्रीके पीछेही चौपट होगया। शिशुपालका वधभी स्त्रीके पीछे हुवा और स्त्रीके पीछे महाभारत हुवा, जिसमें कि वडे २ शूर वीर भीष्म और कर्णादिक सब स्वाहा होगये और हजारों राजा स्वयंवरोंमें परस्पर कटकर मर गये हैं अर्थात् महान् अनर्थोंका कारण स्त्री है। साँप जब काटता है तब पुरुष मरता है परन्तु स्त्रीके रूपका चिन्तन करनेसेही पुरुष मर जाता है, विष खानेसे एकही जन्ममें पुरुष मरता है स्त्रीरूपी विषके सम्बन्धसे अनेक जन्मोंमें जन्मता मरताही रहता है, इसलिये स्त्रीही बंधनका हेतु है। जिस पुरुषने इसका त्याग करदिया है व स्वप्नमें भी जो इसका स्मरण नहीं करता है, उसने मानो संसारकाही त्याग करदिया है. वही आत्मानन्दको प्राप्त होता है। हे चित्तवृत्ते ! जैसे स्त्री दुःखका कारण है, तैसे पुत्र भी दुःखका कारण है, अब दूसरे विषयमें तुमको एक दृष्टांत सुनाते हैं ॥

हे चित्तवृत्ते ! एक बनियां बडा धनी था परन्तु तिसके घरमें पुत्र नहीं था, पुत्रकी उत्पत्तिके लिये तिसने बहुतसे यत्न किये तबभी तिसके घरमें पुत्र उत्पन्न नहीं हुवा । एक दिन रात्रिके समय वह स्त्रीके साथ पलंगपर सोयाथा इतनेमें तिसकी स्त्रीने कहा यदि परमेश्वर हमको एक लडका देदें तब तिसको हम कहांपर सुलावेंगी बनियांने कहा तिसको हम बीचमें सुलावेंगे, ऐसा कहकर थोडासा पीछे हटा, फिर स्त्रीने कहा यदि परमेश्वर एक और लडका देदें तब तिसको कहां सुलावेंगे बनियां थोडासा पीछे हटकर बोला तिसकोभी बीचमेंही सुलावेंगे, फिर स्त्रीने कहा यदि परमेश्वर एक और लडका देदें तब तिसको कहां सुलावेंगे ज्योंहीं बनियां पीछेको हटने लगा त्योंही तडाकसे नीचेको गिरा और तिसकी टँगडी टूटगई तब तो बनियां रोने लगा और इधर उधरसे लोकभी पहुँच गये । लोकोंने बनियांसे पूँछा किसने तुम्हारी टंगडी तोडदी, बनियांने कहा बिना हुए लडकेने हमारी टंगड़ी तोडदी, यदि सच्चा उत्पन्न होता तब न मालूम क्या उपद्रव करता, हे चित्तवृत्ते ! पुत्रभी दोनों प्रकारसे दुःखकाही कारण है । जिनके पुत्र नहीं है, वह तो पुत्रोंवालोंको देख करके इसीमें दुःखी रहते हैं, जो हमारा द्रव्य क्या जाने कौन लेगा, हम बड़े अभागे हैं, जो हमारे पुत्र नहीं हैं और ये बडे भाग्यशाली हैं, क्योंकि इनके पुत्र हैं । गरीबोंसे धनवानोंको पुत्रके न होनेका बडाभारी सन्ताप होता है और वह उसी सन्तापमें रात्रि दिन जलते रहते हैं और जो कदाचित् उनके पुत्र होकर मरजाता है तब साथही उसके उनका भी मरणही होजाता है और जिनके पुत्र तो है परन्तु कुपात्र है उनको न होनेवालोंसे भी अधिक संताप होता है, जिसके सुपात्र पुत्र है उसको तिसके न जीनेकी ही चिंता रात्रि दिन लगी रहती है, फिर तिसके विवाहकी चिंता रहती है तिसकी संततीकी चिंता रहती है और हजारों चिंता पुत्रवालोंको भी बनी रहती हैं, फिर जिनके पुत्र होहो करके मृत होजाते हैं उनको बडी चिन्ता रहती है जिनके विवाहे हुए पुत्र मरजाते हैं उनको तो जन्मभर पुत्रके शोकमें रोनाही पडता है । हे चित्तवृत्ते ! इसीलिये पुत्रभी महान् दुःखोंकी खान है ॥ १३ ॥

हे चित्तवृत्ते ! इस लोकमेंही पुत्र दुःखसे नहीं छुडा सक्ते हैं तब मरे पीछे

क्या छुडावेंगे, केवल धनके लेनेके वास्ते ही उत्पन्न होते हैं, इसीमें तुमको एक और दृष्टांत सुनाते हैं:–

एक नगरमें एक बडा भारी कोई साहूकार रहता था तिसके पांच पुत्र थे, जब कि, वह साहूकार बूढा होगया तब तिसके सब द्रव्यको पुत्रोंने अपने कब्जेमें करलिया और पितासे कहदिया आप डेवढीमें बैठे रहा करिये और भोजन चौकेमें जाकर कर आया करिये और किसी कामसे सरोकार न रखिये और किसी गैर आदमीको मकानके भीतर न आने दीजिये इतनाही काम आपके जिम्मे रहेगा । पिताने लडकोंकी बातको मानलिया कुछ दिन जब बीते तब तिसके पुत्रोंकी स्त्रियोंने अपने पतियोंसे कहा तुम्हारे पिताके डेव-ढीमें बैठे रहनेसे हमको भीतर बाहर जानेसे बडी दिक्कत होती है और रास्ता भी सब थूक करके बिगाडे देतेहैं और जब कि, चौकामें रोटी खानेको आते हैं तब थूक २ के चौकेको ही भ्रष्ट करदेते हैं और अभी इनके मरनेकाभी कुछ ठिकाना नहीं लगता है, क्या जानै यह कब मरेंगे ? हमको तो इनने बडा तंग किया है अब आप ऐसा करिये अपने पिताको कोठेके ऊपरवाला जो कमरा है उसमें रखिये वहांपर पाखाना और पेशाबकी जगहभी पास है और थूकनेकाभी आराम होगा. जहां चाहे वहां थूका करैं और एक घण्टी इनके पास धर दीजिये जब कि इनको भूँख प्यास लगे तब उस घण्टीको यह हिला दिया करैं उसी जगहमें हम अन्न पानी इनको पहुंचादेंगी । लडकोंने विचारा यह तो अच्छी सलाह है इसमें पिताजीको बडा आराम रहेगा और घरके लोकोंकोभी आराम रहेगा । लडकोंने बापको समझा बुझाकर सबसे ऊपरके कमरेमें उनका डेरा लगा दिया, अब वह बूढे उसी जगहमें रहने लगे । जब कि भूँख लगती या प्यास लगती तब घण्टीको हिला देते अन्न और जल उनको उसी जगहमें पहुंच जाता, जब कि उनको ऊपर रहते कुछ दिन बीते, तब एक दिन उनका छोटासा पोता ऊपर उनके पास चला गया और उस घण्टीसे वह खेलने लगा वहभी तिससे लाड प्यार करनेलगे । थोडी देरके बाद वह लडका घण्टीको लिये हुए नीचे उतर आया पीछे जब उनको भूख प्यास लगी तब देखें तो घंटी नदारद है, आवाज निकलता नहीं नीचे

उतरनेकी शरीरमें ताकत नहीं । अब वह क्या करें अब सिवाय शोकके और क्या होसक्ता है ? तब अपने मनमें बार २ कहते हैं हमने व्यर्थ आयु खो दी जिन पुत्रोंको बडे कष्टसे पाला, वह तो सब धनको लेकर अलग होगये हैं अब कोई जलभी नहीं देता है, अब कोई उपाय भी नहीं बनता, बस ऐसा सोच करते २ थोडी देरमें वह यमपुरमें पहुंच गये । रात्रिको जब लडके घरमें आये तब उन्होंने स्त्रियोंसे पूंछा लालाको खाना दाना ऊपर पहुंच गया है ? उन्होंने कहा आज तो घंटीकी आवाज सुनाई नहीं पडी मालूम होता है उनको आज भूख प्यास नहीं लगी है । लडकोंने जब ऊपर जाकर देखा तो काम तमाम था, फिर लाला २ करके रोने लगे और तुरन्त श्मशानमें ले जाकर फूंकफांक दिया. हे चित्तवृत्ते ! जो पिता अनेक कष्टोंको उठाकर पुत्रकी पालना करता है वही वृद्धावस्थामें पुत्रोंको ग्रहरूप करके प्रतीत होने लगता है और पुत्र पौत्र सब तिसके मरणकाही चिंतन करते हैं, न तो कोई प्रीतिसे सेवा करता है और न कोई कष्टमें सहायक होता है, केवल द्रव्यको लेनाही जानते हैं, तब भी मूर्ख लोक पुत्रोंमें मोहका त्याग नहीं करते हैं ॥ १४ ॥

हे चित्तवृत्ते ! एक और दृष्टांतको सुनो—एक बूढेको तिसके पोतेने किसी वार्त्तापर दो तीन लात मारीं और घरसे बाहर करदिया, तब वह बूढा अपने द्वारपर बैठकर रोता भी जाय और पोतेको गालीभी देता जाय इतनेमें एक महात्मा उस रास्तेसे आनिकले, उन्होंने बूढेसे पूंछा बाबा ! क्यों रोते हो क्या कोई तुमको दुःख है ? बूढेने कहा हमारे पुत्र पौत्र सब बडे नालायक हैं, हमारे सब धनको अपने काबूमें करके अब हमको अच्छा खाने-कोभी नहीं देते हैं, मैं बोलताहूं तब दौडकर मारने लगते हैं, आज हमको पोतेने लातोंसे मारा है, इसीवास्ते मैं अब दुःखी होकर रोताहूँ और गाली भी देता हूँ सिवाय इसके और मेरेसे कुछ बन नहीं पडता है । महात्माने कहा बाबा ! ये पुत्र पौत्र तो सब अपने २ सुखके यार हैं, जबतक तू इनको सुख देता रहा तबतक ये सब तेरी खातिर करते रहे, अब तुम इनको सुख देने लायक नहीं रहे, अब ये सब तुम्हारा निरादर करते हैं, संसारमें सब कोई

अपने सुखके लिये एक दूसरेसे प्रीति करतेहैं जिस कालमें जिसको जिससे सुख नहीं मिलता उस कालमें तिसका वह त्याग कर देताहै या तिसका तिरस्कार करदेता है बाबा ! इन सबका त्याग करके अब तुम हमारे साथ चलो और बाकी आयुको परमेश्वरके भजनमें व्यतीत करो, जो तुम्हारा परलोकभी बनजाय, इस मोह मायाका त्याग करके जल्दी उठो, अब देर करनेका समय नहींहै । बूढेने कहा आपको किसने चौधरी बनाया है, जो हमसे घरको और सम्बन्धियोंके छोडनेका उपदेश करने लगेहैं, वह हमारा पोता हम उसके दादे, तुम कौन हो ? जो उपदेश करनेको खडे होगयेहो, पोता हमारा जीता रहे हमको पडा मारे बालक मारतेभी हैं, तब क्या कोई उनके मारनेके पीछे अपना घर छोड देताहै, जो आप हमको घर छोडनेका उपदेश करते हैं । महात्मा कहने लगे देखो मोहकी महिमा ऐसी दुर्दशा होनेपरभी मूर्खोंको सम्बन्धियोंसे और गृहसे वैराग्य नहीं होता है, महात्मा ऐसे कहकर चले गये ॥ १९ ॥

हे चित्तवृत्ते ! पुत्रकेही विषयमें एक और दृष्टांत तुमको सुनाते हैं:–

एक नगरमें एक साहूकार बडा धनी था, तिसके चार लडके थे जब कि, वह चारों लडके दूकानका काम सँभालने लायक होगये तब साहूकारने थोडा २ धन उनको देकर अलग दुकानें करादीं और बाकी धनको जिस कमरेमें वह रहताथा उसकी दीवारोंके भीतर धरकर ऊपरसे चुनवाकर गच करवा दिया, दैवगतिसे थोडे दिनके पीछे वह बीमार होगया और एकदमसे तिसकी जबान बंद होगई तब बिरादरीके लोक और यार मित्र तिसको देखने आये और तिसकी बुरी हालतको देखकर लोकोंने तिससे कहा अब अंतका समय है कुछ दान पुण्य करिये, तब बनियेने कमरेकी दीवारोंकी तरफ हाथ किया उसका मतलब यह था जो इनमें धन गडा है निकालकर दान पुण्य करावो, लडके तिसके तात्पर्यको समझ गये जो इसने हमसे छिपाकर इन दीवारोंमें धनको गाडा है, तब लडके कहने लगे लाला कहता है जो कुछ कि मेरे पास था वह सब तो मैंने दीवारों

पर लगा दिया अब दान कहांसे करूं । लोकोंने कहा ठीक कहता है तब बनिया माथेपर हाथ धरकर रोने लगा, लडकोंने कहा लाला रोओ मत, हम तुम्हारे पीछे सब काम अच्छी तरहसे चलावेंगे । इतनेमें बनियाके प्राण परलोकमें पहुंच गये । उठाकर लडकोंने फूँकफाँक दिया, मनकी मनमेंही रहगई । हे चित्तवृत्ते ! जिन पुत्रोंके लिये सैकडों अनर्थोंको करके धनको कमाते हैं और लाखों रुपयोंका धन उनको देजाते हैं उन पुत्रोंका यह हाल है फिर भी मूर्खलोक पुत्रोंमें मोहको नहीं त्यागते हैं इसीसे बार २ जन्मते मरते हैं ॥ १६ ॥

हे चित्तवृत्ते ! एक और दृष्टांतकोभी सुनो—एक कालमें नारदजी अपने शिष्य तुम्बुरुको साथ लेकर पृथ्वीपर पर्यटन करने लगे । एक नगरमें जाकर नारदजी बाजारमें एक पीपलका वृक्ष था तिसके थड़ेपर बैठ गये, साथ उनका शिष्य तुम्बुरुभी बैठगया, जहांपर नारदजी बैठे थे । इनके सामनेही एक बनियेकी दूकान थी, उस दूकानके आगेसे एक कसाई बहुतसे बकरोंको लेकर अपने रास्तेसे चला जाता था उन बकरोंमेंसे एक बकरा कूदकर बनियांकी दूकानके भीतर चला गया और अनाजके ढेर-मेंसे उसने एक मुँह मारा, बनियांने उस बकरेके मुखसे दाने निकास लिये और तिसको गर्दनसे पकडकर कसाईके हवाले किया और कसाईसे कहा जब कि इसको हलाल करोगे तब इसकी गर्दनका मांस मेरेको देना. कसाई बकरेको लेकर जब चला तब नारदजी इस वृत्तांतको देखकर हंसे तब तुम्बुरुने नारद-जीसे पूंछा महाराज हँसनेका कारण क्या है ? नारदजीने कहा जिस बकरेने इस बनियांकी दूकानमें घुसकर अनाजसे मुख भरा था वह बकरा पूर्वजन्ममें इस बनियेका पिता था इस दूकानमें जाने आनेका तिसका अभ्यास पडा था इसीसे वह कूदकर इसी दूकानमें गया और एक मुट्ठी अनाजकी उसने अपने मुखमें ली उसको भी तिसके बेटेने खाने न दिया, किन्तु तिसके मुखसे निकास लिया और यह भी कसाईसे कह दिया जब इसको मारोगे तब इसकी गर्दनका मांस मेरेको खानेके लिये देना । जिस बनियेंने बड़ी २ देवतोंके आगे मानत मानकर

पुत्रको पायाथा, उस पुत्रने एक मुट्ठी अन्नकीभी तिसको खाने न दी इसी वार्त्ताको देखकर हम हँसेथे. नारदजी कहते हैं–जिन पुत्रोंसे किसीको सुखका लेशमात्र भी प्राप्त नहीं होता हैं मूर्खलोक उन्हींकी उपासना करते हैं अपने कल्याणके लिये एक क्षणभरभी निष्काम होकर ईश्वरका आराधन नहीं करते हैं यदि कोई घडी दो ईश्वरका स्मरण करताभी है तबभी वह पुत्रोंके सुखके लियेही करताहै जो मेरे पुत्रादिक सब बने रहें अपने कल्याणके लिये नहीं करता है इससे बढकर और क्या अज्ञान होगा ? ॥ १७ ॥

हे चित्तवृत्ते ! जिन धनियोंके पुत्र नहीं होते हैं वह किसी दूसरेके पुत्रको गोदमें लेकर सब धन उसको दे देते हैं, अपने उद्धारके लिये कुछभी नहीं खर्च करते हैं या जन्मभर इसी दुःखमें संतप्त रहते हैं । एक महात्मा अपने शिष्योंको साथ लेकर भिक्षाके लिये एक सेठकी दूकानपर गये और तिस सेठसे भिक्षा करनेको कहा और वह सेठ बडे भारी गद्दे पर बैठाथा सोने चांदी और हीरे पन्नोंका ढेर तिसके आगे लगाथा सेठने नौकरसे कहा इनको भीतर लेजाकर भिक्षा करा देवो । यह महात्मा भीतर जाकर जब भिक्षा करने लगे तब एक शिष्यने गुरूसे कहा महाराज ! आप कहते हैं कि; संसारमें सुखी कोई नहीं है, देखो यह सेठ कैसा सुखी है, लक्ष्मी इसकी नृत्तकारी कर रही है । गुरूने कहा चलती दफा इससे सुखकी वार्त्ता पूँछकर तुमको बतावेंगे । जब भोजन करके महात्मा बाहरको आये तब सेठसे पूंछा तुम तो बडे सुखी प्रतीत होते हो सेठ रोकर कहने लगा मेरे बराबर संसारमें कोईभी दुःखी नहीं है, परमेश्वरने मेरेको बहुतसा धन दिया है परंतु पुत्रके बिना सब धन व्यर्थ है मेरेको यही बडा भारी दाह होरहा है, जो मेरे पीछे इस धनको कौन खायगा । गुरूने चेलेसे कहा तुम कहतेथे यह बडा सुखी है यह तो सबसे दुःखी निकला । अब चलो यहांसे, ऐसे कहकर महात्मा चलेगये । हे चित्तवृत्ते ! पुत्र न हुआ, हुआ भी तो दुःखकोही देता है ॥ १८ ॥

हे चित्तवृत्ते ! पुत्रसम्बन्धी वासना भी परमदुःखकाही कारण है इसलिये विवेकी पुरुषको उचित है जो इन मलिन वासनाकाभी त्यागही करदेवे । हे

चित्तवृत्ते ! यह जो परिवारका मोह है, यह बडा दुःखदाई है, विवेकी पुरुष मोहके हटानेके लिये स्त्री पुत्रादि परिवारका त्याग करदेते हैं, अब इसी विषयमें तुमको एक दृष्टांत सुनाते हैं—

एक नगरमें एक बनियां बडा धनिक रहताथा तिसकी स्त्री नवयौवना बडी रूपवती थी, दैवयोगसे तिसकी स्त्री किसी रोगसे बहुत बीमार होगई अर्थात् उसके बचनेकी कुछ भी उम्मैद न रही, तब वह बनियां स्त्रीके समीप बैठकर बडा रोदन करने लगा। स्त्रीने कहा तुम क्यों रोदन करते हो मेरे मरनेके पीछे तुम तो अपना और दूसरा विवाह भी करलेवोगे, दुःख तो मेरेको है जैसे मैं बिनाहीं सांसारिक सुखके देखे मरजाऊंगी। बनियांने कहा मैं दूसरा विवाह नहीं करूंगा, स्त्रीने कहा इस बातको मैं नहीं मान सक्ती, जो धनी होकर फिरभी दूसरा विवाह न करै। बनियांने मोहके वशमें होकर अपनी इन्द्रींको काट डाला और कहा अब तो तू मानेगी स्त्री चुप हो गई। दैवयोगसे वह धीरे २ अच्छी होगई बनियांको फिर बडा भारी दुःख हुआ, क्योंकि स्त्री पुरुषकी इच्छा करै और बनियांके पास अब वह बात न रही जिससे कि तिसको प्रसन्न करै, तब तिसकी स्त्री परपुरुषोंके साथ खराब होनेलगी, बनियां रात्रि दिन इसी संतापसे जलता रहे, एक दिन दैवयोगसे गुरू नानकजी और भाई मरदाना तिस नगरमें आ निकले, तिस सेठकी विभूतिको देखकर भाई मरदानाने कहा गुरूजी यह सेठ तो बडा सुखी दीखता है। गुरूजीने कहा ऊपरसे सुखी दीखता है परन्तु भीतर कुछ न कुछ इसकोभी जरूर दुःख होगा, देखो तुम्हारे सामने हम इससे पूँछते हैं, गुरूजीने जब उस सेठसे सुख पूँछा तब उसने अपने दुःखका सब हाल कह सुनाया। गुरूजीने भाई मरदानासे कहा इस गृहस्थाश्रममें रहकर कोईभी सुखी नहीं है अज्ञानी पुरुषोंको तो विषय अप्राप्ति कालमेंभी दुःखदाई होते हैं, और विवेकी पुरुषोंको प्राप्तिकालमेंभी दुःखदाईही दिखाई पडते हैं, यह मोहही पुरुषोंको दुःख देता है इसका त्यागही सुखका हेतु है ॥ १९ ॥

हे चित्तवृत्ते ! यह द्रव्यभी अनर्थोंकाही कारण है और अनर्थों करकेही संग्रह भी होता है और संग्रह हुआ भी दुःखकोही देता है क्योंकि एक तो इसकी रक्षा करनेमें बडा कष्ट होता है, फिर धनके लोभसे चोर मारभी डालते हैं. यदि चोरोंने धनको लेकर जीताभी छोड दिया तब तिस धनके चले जानेके रंजसे आपही मर जाता है, फिर धनी लोकोंका परस्पर विरोध भी अधिक रहता है, विवेकी पुरुष इसको दुःखका कारण जानकर इससे अलगही रहते हैं। हे चित्तवृत्ते ! चार पुरुष रास्तामें चले जातेथे आगे रास्तामें एक अशरफियोंकी थैली पडीथी चारोंने मिलकर उठा ली एक बगीचामें जाकर उन्होंने आपसमें बांटनेकी सलाह की तब एकने कहा भूख लगी है दो आदमी ग्राममें जाकर दो रुपइयेकी मिठाई लेआवो उस मिठाईको खाकर बाँटेंगे और सगुनभी होजावैगा। दो आदमी मिठाई लेनेको जब गये तब उन्होंने आपसमें सलाह की कि, मिठाईमें विषको डालकर लेचलो जिससे कि वह खातेही मरजाँय और सब धनको हमहीं दोनोंजने आधा २ बांट लेवैं। इधर तो यह विष डालकर मिठाई लेचले और उधर उन्होंने यह सलाह की कि, जब वह मिठाई लेकर आवें दूरसे आये हुवोंको गोलियोंसे मारकर सब धन हमहीं दोनों आपसमें बाँट लेवैंगे, ज्योंहीं वह दोनों मिठाई लिये हुए आते उनको दिखाई पडे त्योंही उन्होंने गोलियोंको दागा, वह दोनों मरगये तब उन्होंने कहा मिठाईको खाकर बाँटेंगे। ज्योंही उन दोनोंने मिठाईको खाया त्योंही वह दोनोंभी मरगये और वह मोहरोंकी थैली उसी जगहमें पडी रही। हे चित्तवृत्ते ! हजारों लाखों इस धनके ऊपर मरगये धन किसीकाभी न हुआ ॥ २० ॥

हे चित्तवृत्ते ! यह राज्यभी महान् अनर्थोंका कारण है, और दुःखका हेतु है। प्रथम तो राजाको नित्यही शत्रुओंसे भय बना रहता है दूसरा चोरोंसे भय रहता है, तीसरा संबन्धियोंसे भी भय बना रहता है जो राज्यके लोभसे कोई धोखा देकर मार न डाले, फिर अपने पुत्रोंसे और भाइयोंसेभी भय बना रहता है, क्योंकि राज्यके लोभसे पुत्र और भाईभी राजाको विष देकर मार डालते हैं। दुर्योधनने विष दियाथा औरभी बहुतोंने विष देकर राजाको मार

डाला है इन्हीं दु:खोंसे राजोंको रात्रिमें निद्रा भी ठीक नहीं आती है और न वह रात्रिभर एकही पर्यंक पर सोते हैं। कैकेयीने पुत्रके राज्यके लोभसे रामजीको वनवास करादियाथा, सुग्रीवने वालिको मरवा दियाथा, कंसने देवकीके पुत्रोंकी हत्या करडाली, दुर्योधनने राज्यके लोभसे अपने वंशकाही उच्छेदन करदिया और राजमदभी सैकड़ों अनर्थोंको कराता है जिसका फल फिर अन्तमें राजाको नरक भोगना पडता है। इसीवास्ते शास्त्रोंमें राजाका अन्न खानाभी मना लिखा है। मनुस्मृतिमें लिखा है दश कसाईके अन्न खानेमें जितना दोष होता है उतनाही दोष एक कुँभारके अन्न खानेमें होता है और दश कुँभारके अन्न खानेमें जितना दोष होता है उतनाही दोष शराबको जो बेचता है उसके अन्न खानेमें होता है और कलवारोंके याने शराबके बेचनेवालोंके अन्न खानेमें जितना दोष होता है उतनाही दोष एक वेश्याके अन्न खानेमें होता है और दश वेश्याके अन्न खानेमें जितना दोष होता है उतनाही दोष एक राजाके अन्न खानेमें होता है क्योंकि राजाका द्रव्य अनेक प्रकारके अधर्मोंसे मिश्रित होता है इसीसे राज्यभी अनेक अनर्थोंका कारण है। यदि राज्य अनेक अनर्थोंका कारण न होता तो बडे २ राजा इसका त्याग क्यों करदेते और त्याग उन्होंने किया है इसीसे साबित होता है जो राज्यभी अनेक अनर्थोंका हेतु है। जिन्होंने इसको दु:खरूप जानकर स्वीकारही नहीं किया है और जिन्होंने स्वीकार करके फिर पश्चात् इसका त्याग करदिया है उनकी भी दो चार कथाओंको तुम्हारे प्रति सुनाते हैं।

हे चित्तवृत्ते! प्रथम तुम महात्मा प्रियव्रतकी कथाको सुनो। प्रियव्रत चक्रवर्ती राजा हुआ है और बहुत कालतक इसने राज्य किया है। एक दिन राजाके चित्तमें विचार उपजा तब राजा कहने लगा अहो बडा कष्ट है, दु:खरूप जो राज्य है इसमें सुख मान कर मैंने अपना जन्म व्यर्थही खो दिया और इन्द्रियोंके वशवर्ती होकर अविद्यारूपी कूपमें अपनेको गिरा दिया और कामके वशमें होकर मैं अपनी स्त्रीका दास बना रहा। जैसे वनका मृग बालकोंकी क्रीडाके लिये होता है, तैसे मैंभी अपनी स्त्रीकी क्रीडाके लिये मृग बना। धिक्कार है मेरेको जो मैंने राज्यके भोगोंमें अपनी आयुको व्यर्थ खो

दिया, मेरे तुल्य संसारमें ऐसा कौन मूर्ख होगा जो ऐसे उत्तम शरीरको पाकर फिर मिथ्या भोगोंमें अपनी आयुको व्यतीत करैगा । अब मैं इस राज्यका त्याग करके आत्मसुखके लिये एकांत देशमें निवास करके आत्मविचार करूंगा। ऐसा विचार करके राजाने पृथिवीका विभाग करके अर्थात् एक२ खंड एक २ पुत्रको देदिया आप वनमें जाकर एकांत देशमें बैठकर आत्मविचार करने लगा । हे चित्तवृत्ते ! यदि राज्यमें अधिक सुख होता तब प्रियव्रत राजा चक्रवर्त्ती राज्यका क्यों त्याग करदेता ? और त्याग तिसने किया है इसीसे जाना जाता है राज्य भी दुःखरूप है॥ २० ॥

हे चित्तवृत्ते ! कृतवीर्य नाम करके एक राजा बडा प्रतापी और धर्मात्मा हुआ है, बहुत कालतक वह पृथिवीका राज्य करता रहा है । जब कि तिसका देहांत हुआ तब मंत्रियोंने और पुरोहितोंने और प्रजाने मिलकर कृतवीर्यके पुत्र अर्जुनको राजसिंहासनपर बैठनेके लिये कहा, तब अर्जुनने कहा हम राजसिंहासनपर नहीं बैठेंगे, क्योंकि अन्तमें इसका फल नरक होता है । राजाके लिये जो धर्म लिखे हैं उनका निर्वाह होना कठिन है, राजाके लिये जो कर लेना प्रजासे लिखा है उसी द्रव्यसे दीन प्रजाकी पालना करनी और चोरोंसे तिसकी रक्षा करनी कही है अपने आरामके लिये प्रजासे द्रव्य लेना नहीं लिखा है और न अधिक लेना लिखा है, तब भी कहीं २ अधिक लिया जाता है क्योंकि भृत्यलोग भी अपने लोभके लिये प्रजाको सताते हैं, अकेला राजा कहांतक सब प्रजाको देख सक्ता है और तिसका हाल जान सक्ता है और जो प्रजा अधर्म करती है तिसका पापभी राजाको लगता है और राज्यके विघातक राग द्वेषादिक शत्रुभी राजाके सिरपर सदैवकाल गरजते रहते हैं, महान् अनर्थोंका कारण राज्य है इसलिये मैं राज्यका ग्रहण नहीं करूंगा ऐसा कहकर वह उपराम होगया । हे चित्तवृत्ते ! यदि राज्यमें सुख होता तब कृतवीर्यका पुत्र अर्जुननामक तिसका त्याग क्यों करता ? ॥ २१ ॥

वैराग्याश्रम कहते हैं—हे चित्तवृत्ते ! इक्ष्वाकु वंशमें एक बृहद्रथ नाम करके बडा प्रतापी राजा हुआ है, जब कि राज्यसम्बन्धी भोगोंको भोगते २ तिसको बहुतसा काल बीत गया तब तिसके मनमें एक दिन बडाभारी वैराग्य उत्पन्न

हुआ, जिस दिन तिसको वैराग्य हुआ उसी दिन उसने अपने पुत्रको राजसिंहासन देदिया और आप वनमें जाकर तप करने लगा। जब कि राजाको तप करते २ बहुतसा काल व्यतीत होगया तब एक दिन शाकायनमुनि तिसके समीप आकर कहने लगे हे वत्स ! हम तुम्हारे पर बडे प्रसन्न हुए हैं, आप अब हमसे मनोवांछित वरको मांगो। राजा मुनिको दंडवत प्रणाम करके कहने लगा यदि आप मेरे पर प्रसन्न हुए हैं, तब आप मेरेको आत्मज्ञानका उपदेश करैं, यही वर मैं आपसे चाहता हूँ। मुनिने कहा "हे राजन् ! यह वर बडा दुष्प्राप्य है और किसी वरको मांगो जो पदार्थ कि आपको न प्राप्त हो उसको मांगो"। राजाने कहा भगवन् ! संसारके किसी पदार्थको भी मैं स्थिर नहीं देखता हूँ क्योंकि सब पदार्थ नश्वर हैं, काल पाकर प्रलयकी अग्निसे समुद्रभी सब सूख जाते हैं और पर्वतभी सब प्रलयकालकी अग्निसे भस्म होजाते हैं और जितने कि ध्रुवसे आदि लेकर तारा गण हैं ये भी सब टूट जाते हैं अर्थात् नष्ट भ्रष्ट होजाते हैं। इसीतरह वृक्षादिकभी सब काल पाकर नष्ट होजाते हैं। और पृथिवी आदिक पाँच भूतभी सब नाशको प्राप्त होजाते हैं। कारणका नाश होनेसे कार्य्यका नाश स्वयंही होजाता है और जितने कि इन्द्रादिक देवता हैं, ये भी सब अपने २ पदसे प्रच्युत होजाते हैं। हे मुने ! संसारमें कोई भी पदार्थ मेरेको स्थिर नहीं दीखता है तब मैं किस पदार्थको आपसे मांगूँ ? हे मुने ! जैसे अंध मेडक तालमें निराश्रय होकर दुःखको प्राप्त होता है, तैसे मैंभी निराश्रय होकर इस संसाररूपी तालमें दुःखको प्राप्त होता हूँ। हे मुने ! मेरेको इस महान् दुःखसे छुडानेके लिये आपही समर्थ हैं मैं आपकी शरणको प्राप्त हुआ हूँ, आप मेरा उद्धार करिये। हे मुने ! यह जो स्थूल शरीर है, सो भी पुरुषके वीर्यसे उत्पन्न हुआ है, इसी हेतुसे यह शरीर अति अपवित्र है, जिसका कारणही अपवित्र होवै, तिसका कार्य कैसे पवित्र होसक्ता है। फिर यह शरीर अस्थियोंका एक कोट है और ऊपर इसके चर्म मढा है. भीतर इसके मल मूत्र भरा है, ऐसे महान् अपवित्र शरीरमें बैठकर अज्ञानी मूर्ख इसका अभिमान करते हैं, ज्ञानवान् नहीं करतेहैं। हे मुने ! यह शरीरही नरक है, आपसे विना कौन मेरेको इस नरकसे छुडानेवाला है इस

प्रकारके वैराग्य करके युक्त राजाके वचनोंको सुनकर ऋषि बोले–"हे राजन् ! हम तुम्हारे पर बडे प्रसन्न हैं, क्योंकि तुम्हारेमें पूर्ण वैराग्य है, इक्ष्वाकुवंशमें तुम पताका हो, तुमने अपना जन्म सफल कर लिया है, अब तुम भय मत करो, तुम कृतकृत्य हो "।

ऋषि कहते हैं हे राजन् ! शब्द स्पर्शादिक जितने विषय हैं, यह सब अनर्थकोही करनेवाले हैं, और नाशी हैं और मनसे लेकर जितने इन्द्रिय हैं, येभी सब अनर्थकारी हैं, अर्थकारी नहीं हैं क्योंकि सदैवकाल पुरुषको विषयोंकी तरफही ये सब लेजाते हैं और उत्पत्ति नाशवाले भी हैं और जो आत्मा है सो इन सबसे परे है और सबका साक्षी है, तिस आत्माकी प्राप्ति सत्यको आश्रय करनेसेही होती है । क्योंकि ऐसा नियम है जिसने सत्यका आश्रय करलिया है, उसने आत्माकाही आश्रय करलिया है, और सत्यका आश्रय करनेसेही मनका निरोधभी होता है, मनके निरोध होनेके अनन्तर हृदयमें आत्माका प्रकाशभी स्पष्ट प्रतीत होता है, शुद्ध मनमेंही आत्माका प्रकाश होता है, अशुद्ध मनमें नहीं होता है, अशुद्ध मन बंधनका हेतु है, शुद्ध मन मुक्तिका हेतु है, मनके शुद्ध होजानेसे शुभ अशुभ कर्मोंका भी नाश होजाता है, कर्मोंके नाश होजानेसेही पुरुष जीवन्मुक्तिको प्राप्त होता है ।

हे राजन् ! जैसे लकडियोंसे रहित अग्नि अपने कारणमें लय होजाती है, तैसे वृत्तियोंसे रहित हुआ मनभी अपने कारणमें लय होजाता है और तिसीकालमें आत्माकाभी साक्षात्कार होजाता है । सो कहाभी है:–

समासक्तं यथा चित्तं जन्तोर्विषयगोचरे ॥
यद्येवं ब्रह्मणि स्याद्वै को न मुच्येत बंधनात् ॥ १ ॥

हे राजन् ! जैसे जीवोंका चित्त विषयोंमें आसक्त होरहा है तैसेही यदि ब्रह्ममें आसक्त होजावै तब कौन पुरुष है जो संसाररूपी बंधनसे न छूटे ॥ १ ॥

वर्णाश्रमाचारयुता विमूढाः कर्मानुसारेण फलं लभन्ते ॥
वर्णादिधर्मं हि परित्यजन्तः स्वानन्दतृप्ताः पुरुषा भवन्ति ॥ २ ॥

हे राजन् ! जो पुरुष वर्णाश्रमके आचारमें अतिशय करके प्रीति रखते हैं, आत्मविचारमें प्रीतिको नहीं रखते हैं, वह मूढ कर्मोंके अनुसार फलको प्राप्त होते हैं । जो पुरुष वर्णाश्रमोंके अभिमानसे रहित होकर आत्मविचारमें प्रीतिवाले हैं, वह पुरुष आत्मानंद करके तृप्त होते हैं ॥ २ ॥

हृत्पुण्डरीकमध्ये तु भावयेत्परमेश्वरम् ॥
साक्षिणं बुद्धिनृत्यस्य परमप्रेमगोचरम् ॥ ३ ॥

हे राजन् ! अपने हृदयरूपी कमलमें परमेश्वरका ध्यान करै, जो बुद्धिकी नृत्तकारीकाभी साक्षी है और जो परम प्रेमका विषय है ॥ ३ ॥

हे राजन् ! एक कालमें मैत्रेय ऋषिने कैलास पर्वतपर जाकर महादेवजीसे कहा हमको आत्मतत्त्वका उपदेश कीजिये । महादेवजीने जो तिसको उपदेश किया है, उसकोभी तुम सुनो—

देहो देवालयः प्रोक्तः स जीवः केवलः शिवः ॥
त्यजेदज्ञाननिर्माल्यं सोऽहंभावेन पूजयेत् ॥ २ ॥

यह जो देह है यही देवमंदिर है, जो कि इस देहमें चेतन जीव है वही केवल शिव है, अज्ञानरूपी शिवनिर्माल्यका त्याग करके 'सोहंभाव' करके तिसका पूजन करो ॥ ३ ॥

अभेददर्शनं ज्ञानं ध्यानं निर्विषयं मनः ॥
स्नानं मनोमलत्यागः शौचमिन्द्रियनिग्रहः ॥ ४ ॥

आत्माको सबमें एकरूप करके जो देखना है इसीका नाम ज्ञान है और मनका विषयोंसे रहित होजानाही ध्यान है, मनके मलका त्याग करनेकाही नाम स्नान है, इन्द्रियोंके निग्रह करनेकाही नाम शौच है ॥ ४ ॥

हे चित्तवृत्ते ! ऋषिने राजाको इसप्रकार उपदेश करके कृतार्थ कर दिया । हे चित्तवृत्ते ! यदि राज्यमें सुख होता तब बृहद्रथ राजा राज्यको त्याग करके वनको क्यों जाते ? इसीसे सिद्ध होता है कि राज्यमें सुख किंचित्भी नहीं है ॥ २२ ॥

हे चित्तवृत्ते ! सत्ययुगमें ऋभु मुनिका पुत्र निदाघ नाम करके मुनियोंमें उत्तम बडा वैराग्यवान् एक मुनि हुआ है, तिस मुनिने बाल्यावस्थामेंही संपूर्ण विद्याओंका अध्ययन करके अपने पितासे तीर्थयात्रा करनेके लिये कहा, पिताने तिसको तीर्थयात्रा करनेकी आज्ञा देदिया, तब वह तीर्थोंमें जाकर बहुत कालपर्यंत भ्रमण करतारहा और साढेतीन करोड तीर्थोंमें तिसने स्नान आदिक कर्मोंकोभी किया और अनेक प्रकारके जप दानादिकोंकोभी तीर्थोंमें किया । इतना बडा परिश्रम करने परभी तिसका मन शान्तिको प्राप्त न हुआ । फिर वह अपने गृहमें लौट आया और अपने पितासे सब तीर्थयात्राका वृत्तांत कहा और फिर पितासे कहा इतने तीर्थोंमें स्नान करनेसेभी मेरा चित्त शांतिको नहीं प्राप्त हुआ है और विना चित्तकी शांतिके पुरुषको सुख नहीं होता है और पुरुष जन्म मरणरूपी संसारसे भी नहीं छूटता है । जो जन्मता है वह अवश्यही मरता है, जो मरता है वह फिर अवश्यही जन्मता है. घटीयन्त्रकी तरह यह चक्र अनादि कालका चलाही जाता है । हे पिता ! इस जन्म मरण-रूपी चक्रसे छूटनेका कोई उपाय कहिये ? और जितने कि व्रतादिक और जपादिक विधान किये हैं उन सबको तो मैं कर चुकाहूँ, ये सब तो भ्रमजालमें डालनेवाले हैं, छुडानेवाले नहीं हैं । हे पिता ! संसारमें वही पुरुष जीता है जिसका मन विषयोंकी तरफ नहीं जाता है, जिसका मन विषयोंकी तरफ जाता है वह पुरुष जीता नहीं है किंतु मराही है । हे पिता ! जैसे विषयोंमें रागी पुरुषोंको आत्मज्ञान एक भार जान पडता है तैसेही विवेकी पुरुषोंको शास्त्रका अध्ययन और पठन पाठन भी एक भारही जान पडता है और जिन पुरुषोंका मन तृष्णा करके व्याकुल हो रहा है वह सदैवकाल इतस्ततः भ्रमतेही रहते हैं । हे पिता ! जितने कि, सांसारिक दुःख हैं उन सबका मूल कारण एक तृष्णाही है, यह तृष्णा कैसी है ? कभी तो स्वल्प पदार्थको पाकर अलं होजाती है और कभी इन्द्रादिकोंके भोगको प्राप्त होकरके भी अलं नहीं होती है । हे पिता ! यह जो स्थूल शरीर है सो मल मूत्रका एक भाजन है, इसीसे अत्यन्तही अपवित्र है और कृतघ्नभी है, नित्यही क्षीणभी होता रहता है, इस शरीररूपी भाजनमें स्थित जो कामदेवरूपी पिशाच है, वह पुरुषका नित्यही

तिरस्कार करता रहता है, तिस कामदेवरूपी पिशाचके वशीभूत होकर यह जीव युवावस्थामें उन्मत्त होकर स्त्रियोंके पीछे दौडता है फिर जब वृद्धावस्थाको प्राप्त होता है तब स्त्री पुत्रादिक और दासी दासभी इसका तिरस्कार करते हैं और हँसी करते हैं। हे पिता! संसारके जितने पदार्थ हैं सब नाशी हैं, कोईभी स्थिर नहीं हैं और जो कि ब्रह्मा विष्णु महादेव आदि देवता हैं, येभी सब कालके वशको प्राप्त होकर नाशको प्राप्त होजाते हैं, एक क्षणमें जीवका जन्म होता है फिर किसी दूसरे क्षणमें इसका नाश होजाता है यानी मरण होता है। हे पिता! सांसारिक जितने पदार्थ हैं, वह सब अनित्य हैं। जो कि नाशसे रहित पदार्थ है उसीका मेरेको उपदेश करिये। ऋभु मुनि, पुत्रके वैराग्यको श्रवण करके अब आत्मतत्त्वका तिसको उपदेश करते हैं। हे निदाघ! जैसे इच्छासे रहित स्थित रत्नोंकी विलक्षण शक्तिसे लोक चेष्टा करने लगते हैं और जैसे सुन्दर रूपकी विलक्षण शक्तिसे लोक मोहको प्राप्त होजाते हैं और जैसे चुम्बक पत्थरकी विलक्षण शक्तिसे लोहा चेष्टा करने लगता है, तैसे ब्रह्मचेतनकी विलक्षण शक्तिसे यह जगत्भी चेष्टा करता है। यह जगत् सब जड है, नाशी है और दुःखरूप है, वह ब्रह्म चेतन है, नित्य है, सुखरूप है और वास्तविक इच्छासे रहित होनेसे वह अकर्ता है, और व्यापक होनेसे सबके साथ सन्निधिमात्र होनेसे वह कर्त्ता है और एकही चेतन उपाधियोंके भेदसें नानारूप हो रहा है फिर एकका एकही है, जैसे एकही आकाश घट मठादि उपाधियों करिके घटाकाश मठाकाश कहा जाता है और उपाधियोंसे रहित महाकाश कहा जाता है, तैसेही जीव ईश्वरका भी भेद जान लेना। अन्तःकरणरूपी उपाधियोंके अन्तर्गत चेतन जीव कहा जाता है, अंतःकरणरूपी उपाधियोंसे रहित ईश्वर कहा जाता है, वास्तवमें जीव ईश्वरका भेद नहीं है क्योंकि चेतन निरवयव निराकार है, निरवयवका भेद विना उपाधिके कदापि नहीं होसक्ताहै इसमें कोईभी दृष्टांत नहीं मिलताहै अतएव जीवही ब्रह्मरूपहै, जैसे ब्रह्म चेतन अकर्त्ता अभोक्ता है, तैसे जीव चेतनभी अकर्त्ता अभोक्ता है। जैसे ब्रह्म नित्य शुद्ध बुद्ध है, तैसे जीवभी नित्यही शुद्ध बुद्ध है। हे निदाघ! ऐसा निश्चय करनेसे पुरुष मुक्त होजाता है सो तुमभी ऐसा निश्चय करो, इसी निश्चयका

नाम आत्मज्ञान है और ऐसेही निश्चयवालेका नाम आत्मज्ञानी है. जो ऐसे निश्चयसे रहित है वही अज्ञानी है। हे चित्तवृत्ते! पिताके उपदेशसे निदाघको अपने स्वरूपका बोध हुआ। हे चित्तवृत्ते! आत्मज्ञानकी प्राप्तिका मुख्य साधन वैराग्य है सो तुमभी प्रथम वैराग्यका आश्रयण करो॥ २३॥

चित्तवृत्ति विवेकाश्रमसे कहती है हे भ्राता! मेरेको अब आप कुछ औरभी वैराग्यवानोंकी कथाओंको सुनाओ जिनकी कथाओंको सुनकर मेराभी चित्त वैराग्यवाला होजावे॥

विवेकाश्रम कहते हैं हे चित्तवृत्ते! किसी नगरमें एक राजाने नवीन चालका एक बडाभारी मकान बनवाया जब कि, वह मकान बन कर तैयार होगया, तब राजाने तिस मकानमें एक दिन सभा की और सब नगरनिवासियोंको निमन्त्रण दिया, सब लोक जिस कालमें तिस मकानके अंदर आनें लगे तिसी कालमें एक विरक्त महात्माभी किसी रास्तासे पर्यटन करते हुए आ निकले और लोकोंको मकानके अन्दर आते देखकर वहभी लोकोंके साथ तिसी मकानमें चले आये, जब कि सब लोक आकर बैठगये तब राजाने कहा " मैंने यह मकान नया बनवाया है और आप लोकोंको इस वास्ते बुलाया है जो आप लोक इस मकानके गुण दोषोंको देखकर हमको बतावैं। यदि किसी तरहकी इस मकानमें कसर रहगई हो तब आप उसको मेरेको बता दीजिये तिस कसरको मैं हटा देऊंगा "। राजाकी वार्त्ताको सुनकर सब लोकोंने कहा यह मकान बहुतही उत्तम बना है किसी प्रकारकीभी कसर बाकी नहीं है। राजाकी और लोकोंकी वार्त्ताको सुनकर वह महात्मा रोने लगे। राजाने उनसे पूँछा आप रुदन क्यों करते हैं? महात्माने कहा इस मकानमें दो कसरें बडीभारी रहगई हैं और वह किसी प्रकारसे भी हट नहीं सक्ती हैं, इसवास्ते रुदन करता हूँ। राजाने कहा आप बता दीजिये उन कसरोंको जहांतक बनेगा हम उनके हटानेकी कोशिश करैंगे। महात्माने कहा एक कसर तो यह है कि जो एक ऐसा दिन आवैगा जिस दिन यह मकान सब नष्ट भ्रष्ट होजावेगा, दूसरी कसर यह है कि एक दिन वह होगा जिस दिन

मकानका बनवानेवालाभी नहीं रहेगा, येही दो कसरें हटनी मुश्किल हैं, इसी-वास्ते हम रुदन करते हैं, जो आप वृथाही मकानका अहंकार कर रहे हैं । महात्माकी वार्त्ताको सुनकर राजाके मनमेंभी वैराग्य उत्पन्न हुआ और तिसी दिनसे राजा वैराग्यवान् महात्माओंकी संगति करने लगगया ॥ २४ ॥

हे चित्तवृत्ते ! इसी प्रकारका एक औरभी दृष्टांत तुमको हम सुनाते हैं । हे चित्तवृत्ते ! एक महात्मा रास्तामें चले जातेथे, चलते २ जब थक गये, तब उन्होंने दो घडी विश्राम करनेके लिये स्थानको इधर उधर देखा तब सडकके किनारेपर एक अति रमणीय मंदिर उनको दिखाई पडा, महात्मा तिसके भीतर चले गये, वहाँपर पलंगके ऊपर राजा बैठेथे और सिपाही लोग आगे तिसके हाथ बांधकर खडेथे, महात्माभी जाकर वहांपर राजाके सामने खडे होगये, तब एक सिपाहीने महात्माको डाट करके कहा तुम यहांपर क्यों आये हो ? महात्माने कहा हम इस मकानको धर्मशाला जानकर दो घडी आराम करनेके लिये यहांपर आये हैं, सिपाहीने फिर डाटकर कहा अरे साधु ! तू कैसा बोलता है, महाराजके मकानको धर्मशाला बनाता है ? महात्माने कहा इस वर्त्तमान महाराजसे पहले इस मकानमें कौन रहताथा ? राजाके सिपाहीने कहा इन महाराजसे पहले इस मकानमें महाराजके पिता रहतेथे । तब कहा उनसे पहले कौन रहतेथे ? सिपाहीने कहा उनके पिता रहतेथे । फिर कहा उनसे पहले कौन रहतेथे ? सिपाहीने कहा उनके पिता रहतेथे । महात्माने कहा जिस मकानमें मुसाफिर हमेशाही आते जाते रहे वह धर्मशाला नहीं तो क्या है ? इस राजाके पूर्वज कितनेही इस मकानमें रह गये हैं और आगेभी कितनेही रहेंगे फिर यह मकानभी धर्मशाला नहीं तो क्या है ? हमने इसमें क्या बेजा कहा है जो तुम हमपर नाराज हुएहो ? महात्माकी वार्ताको सुनकर राजाको बडा वैराग्य हुआ और राजाने अपनी भूलको महात्मासे बखशाया । हे चित्तवृत्ते ! जितनेक संसारमें लोकोंके गृह हैं, ये सब धर्मशालाही हैं, जीवरूपी पथिक तिसमें निवास करके चले जाते हैं, अज्ञानी उनमें ममताको करते हैं, ज्ञानी ममतासे रहित होकर निवासको करते हैं ॥ २५ ॥

विवेकाश्रम कहतेहैं–हे चित्तवृत्ते ! एक और दृष्टांत तुमको सुनातेहैं ॥

पांचाल देशके किसी नगरके एक मंदिरमें एक महात्मा रहतेथे, वह महात्मा बडे अभ्यासी थे, अभ्यास करते २ उनकी अवस्था चढगईथी योगवासिष्ठमें जो जीवन्मुक्त ज्ञानीकी पाँचवीं भूमिका लिखीहै, वह तिस पांचवीं भूमिकामें प्राप्त होगयेथे, सदैवकाल हँसते रहतेथे, किसीसेभी न बोलतेथे न चालतेथे । एकदिन दोपहरके वक्त तिस मंदिरमें खेलनेके लिये चार पांच लडके छोटे २ जा निकले । एक लडकेने दूसरे लडकेसे कहा महात्माकी जाँघें बडी मोटी २ हैं, इनकी एक जांघपर चौपड बनाकर खेलो । लडके तो मूर्ख होते हैं, तुरंत दूसरा लडका अपने घरसे चक्कूको लेआया और चक्कूसे उनकी जांघके ऊपर लकीर खैंचकर चौपड बनाने लगा । महात्मा न तो बोलतेथे और न अपने आप कोई चेष्टाही करतेथे महात्मा उनको मना कैसे करैं, उनको आगे जांघको धरदिया, जब कि लडकोंने दो चार चक्कू जांघ पर चलाये तब रुधिरकी धारैं बहने लगीं लडके तो सब रुधिरको देखकर भाग गये । अब रुधिर बह रहाहै और महात्मा हँस रहेहैं । इतनेमें कोई सयाना आदमी मंदिरमें आ निकला, तिसने देखा तो महात्माकी जांघसे रुधिर बह रहाहै, महात्मा हँस रहेहैं, तिसने जाकर औरोंको खबर की और भी दश बीश आदमी इकट्ठे होगये, उन्होंने इधर उधरसे दर्याफ्त किया तब मालूम हुवा जो यहांपर लडके खेलतेथे, एक लडकेसे पूँछा तब तिसने सब हाल कह सुनाया । फिर लोकोंने सलाह की. किसी जर्राहको बुलाकर जखम सिलाकर मलहम पट्टी करनी चाहिये । एक आदमी उनमेंसे जाकर एक जर्राहको बुला लाया । जब कि, जर्राह टांगको पकडकर सीने लगा तब महात्माने उसके हाथको हटा दिया, कितनाही लोकोंने टांगके जखमको सीनेके लिये यत्न किया परंतु महात्माने जखमको सीने न दिया उसी तरह तीन चार दिन रुधिर बहता रहा । यहांपर किसी और मंदिरमें एक महात्मा रहतेथे, उनको जब कि यह हाल मिला तब उन्होंने एक आदमीसे कहला भेजा कि जिस मकानमें पुरुष रहै मुनासिब है तिस मकानकी सफाई रखनी । आप इस शरीररूपी मकानमें रहतेहैं, आपको उचित है

कि, इसकी दवाई करनी । तब उस महात्माने उस संदेशा लानेवालेसे कहा-- महात्मासे कह देना तुम जब कि तीर्थोंमें गये थे तो रास्तामें बीसों धर्मशालामें एक २ रात्रि रहेथे अब वह धर्मशालायें सब गिरती जातीहैं, उनकी मरम्मत आप जाकर क्यों नहीं करतेहै? जिसतरह आप रात्रिभर रहनेके वास्ते उनकी सफाई और मरम्मतको नहीं करतेहैं, इसीतरह हमेंभी इस शरीररूपी धर्मशालामें आयुरूपी रात्रिभर रहना है, वह रात्रिभी व्यतीत होचलीहै हम अब इसकी सफाई क्या करें? इतनाहीं बोलकर फिर चुप होगये। पांच सात दिनके व्यतीत होनेपर उन्होंने शरीरका त्याग कर दिया। हे चित्तवृत्ते ! जो कि पूर्ण वैराग्यवान् पुरुष हैं, वह इस शरीरको धर्मशाला जानकर इसमें ममताको नहीं करतेहैं ॥ २६ ॥

हे चित्तवृत्ते ! एक और तुमको लौकिक दृष्टांत सुनाते हैं ।

एक नगरके बाहर नदीके किनारेपर एक वैराग्यवान् महात्मा कुटी बना कर रहतेथे और निष्काम होनेसे किसी राजा बाबूके पास नहीं जातेथे किन्तु हमेशा आत्मविचारमेंही रहतेथे। उनके त्याग और वैराग्यकी नगरमें बडी चरचा फैलीथी। एक दिन राजाके दरबारमेंभी किसी वार्तापर एक आदमी उनकी स्तुति करने लगा, तब राजाकोभी उनके दर्शन की लालसा हुई। राजाने अपने वजीरको उनके बुलानेके लिये भेजा, वजीरने जाकर नम्रता-पूर्वक कहा राजाको आपके दर्शनकी लालसा हुई है और कृपाकरके मेरे साथ चलकर राजाको दर्शन दीजिये। महात्माने विचार किया यदि हम अब वजीरके साथ राजाके पास नहीं जातेहैं तब राजा अपना निरादर समझकर हमसे कोई बुराई करदेगा क्योंकि एक तो राजमद करके राजालोक प्रमादी होतेहैं दूसरे हम उसके राज्यमें रहतेहैं और यदि हम जाते हैं तब महात्माओंकी सभामें और परमेश्वरके समीप हमारा मुँह काला होगा क्योंकि महात्मा वैराग्यवान् कहेंगे, देखो निष्काम होकर फिर राजाके द्वारपर गये और परमेश्वर कहेगा हमारेपर भरोसा न रख कर राजाके द्वारपर गये, वह पीछे हमारा मुँह काला करैंगे । इस लिये

प्रथमसेही अपना मुँह काला करके राजाके पास चलना चाहिये ऐसा विचार करके महात्माने स्याहीसे अपना मुँह काला कर मन्त्रीके साथ राजाके पास चल दिया । जब राजाके दर्बारमें गये तब राजाने इनका बडा सत्कार किया और अपने सिंहासनपर बैठाकर मुँह काला करनेका वृत्तांत पूंछा, तब महात्माने अपना सब विचार कह दिया । राजाने कहा सब सत्य है थोडी देर बैठकर महात्मा अपने आसनपर चले आये । तात्पर्य यह है जो कि पूर्ण वैराग्यवान् निष्काम महात्मा हैं वह किसीभी राजा और धनीके द्वारपर अपने शरीरके निर्वाहके लिये नहीं जाते हैं जो सकामी हैं वैराग्यसे शून्य हैं, वही राजा बाबुओंके द्वारोंपर मारे २ घूमते हैं ॥ २७ ॥

हे चित्तवृत्ते ! एक राजाने सम्पूर्ण पृथिवीको जय करके अपना नाम सर्वजीत रखाया तब सब लोग तिसको सर्वजीत करके पुकारने लगे । जब घरमें जाता तब राजाकी जो माता थी वह तिसको सर्वजीत नाम करके न पुकारती किन्तु पूर्ववाले नामसेही पुकारती थी । एक दिन राजाने अपनी मातासे कहा माताजी ! सब लोक तो मेरेको सर्वजीत नाम करकेही पुकारते हैं परन्तु आप तिस नामसे नहीं पुकारती हैं इसमें क्या कारण है ? माता राजाकी बडी विचारशीला थी माताने कहा बाहरकी विलायतोंके जीतनेसे पुरुष सर्वजीत नहीं हो सक्ता है किन्तु अन्दरकी विलायतके जीतनेसे और शरीररूपी विलायतके जीतनेसे पुरुष सर्वजीत होसक्ता है, बाहरके शत्रुओंके जीतनेसे पुरुष शत्रुजित नहीं होसक्ता है किन्तु मन और इन्द्रियरूपी शत्रुओंके जीतनेसेही पुरुष शत्रुजित हो सक्ता है । तुम कहते हो सारी पृथिवी मेरी आज्ञामें है प्रथम तो तुम्हारा शरीरही तुम्हारी आज्ञामें नहीं है, प्रतिदिन यह क्षीण होता जाता है, एक दिन ऐसा होगा जो यह शरीर नाशको प्राप्त होजावैगा, इन्द्रिय और तुम्हारा मनभी तुम्हारे वशमें नहीं है. नित्यही यह तुमको विषयोंकी तरफ और कुकर्मोंकी तरफ भटकाते हैं । पहले तुम शरीर मन इन्द्रियोंको जय करो । जब कि तुम इन सबको जय करलेवोगे तब मैंभी तुमको सर्वजीत नाम करके पुकारा करूंगी । हे राजन् ! व्यासस्मृतिमें ऐसाही लिखा है—

न रणे विजयाच्छूरोऽध्ययनान्न च पंडितः ।
न वक्ता वाक्पटुत्वेन न दाता चार्थदानतः ॥ १ ॥
इन्द्रियाणां जये शूरो धर्मं चरति पंडितः ।
हितप्रायोक्तिभिर्वक्ता दाता सन्मानदानतः ॥ २ ॥

रणमें जय करनेसे शूर नहीं कहा जाताहै और शास्त्र पढनेसे पंडित नहीं होसक्ता है, वाणीकी चातुर्य्यतासे वक्ता नहीं होसक्ता है, धनके दान करनेसे दाता नहीं होजाता है ॥ १ ॥ किन्तु इन्द्रियोंके जय करनेसे शूर वीर कहा जाता है और धर्मका आचरण करनेवाला पंडित कहा जाता है, जो दूसरेको हितकी कहे वही वक्ता है, जो दूसरोंका सन्मान करै वही दाता है ॥ २ ॥

और नीतिमेंभी कहाहै:-

यौवनं जीवितं चित्तं छाया लक्ष्मीश्च स्वामिता ।
चञ्चलानि षडैतानि ज्ञात्वा धर्मरतो भवेत् ॥ ३ ॥

यौवन १, जीना २, मन ३, शरीरकी छाया ४, धन ५, स्वामिता ६ ये छैही बडे चंचल हैं अर्थात् स्थिर होकर नहीं रहते हैं ऐसा जान पुरुष धर्ममें रत हो ॥ ३ ॥

भर्तृहरिने कहा है:-

यौवनं जरया ग्रस्तमारोग्यं व्याधिभिर्हतम् ।
जीवितं मृत्युरभ्येति तृष्णैका निरुपद्रवा ॥ १ ॥

यौवन जरा अवस्था करके ग्रसा है. आरोग्यता व्याधियों करके हत हो रही है, जीवित मृत्यु करके ग्रसी है, एक तृष्णाही उपद्रवसे रहित है ॥ १ ॥ हे राजन् ! काम और क्रोध ये दोही जीवोंके महान् शत्रु हैं । दुर्वासा ऋषि ज्ञानीभी थे तबभी क्रोधके वशमें होकर नानाप्रकारकी विपदा उनकोभी भोगनी पडीं और कामके वशमें होकर इन्द्रादिक देवतोंकोभी महान् कष्ट हुआ इसलिये तुम पहले कामक्रोधरूपी शत्रुओंको जय करो तब मैं आपको सर्व-जीत कहा करूंगी । माताके वचनोंको सुनकर राजाकोभी बडा वैराग्य हुआ और कामादिकोंके जय करनेमें यत्न करने लगा ॥ २८ ॥

वैराग्याश्रम कहते हैं हे चित्तवृत्ते ! एक महात्माकी वार्त्ताको सुनोः—

एक नगरके बाहर एक ठाकुरजीका मंदिर था तिस मंदिरमें एक वैराग्यवान् महात्मा रहतेथे और रात्रिभर खडे होकर भजन करतेथे । एक आदमीने उनसे कहा महाराज ! इस मंदिरमें किसी चोरचकारका डर नहीं है. फिर आप रात्रिभर किसके डरसे खडे होकर जागते रहते हैं ? महात्माने कहा बाहरके चोरोंका भय तौ हमैं किंचित्भी नहीं है परन्तु अन्तरके चोर जो काम क्रोधादिक हैं उनका भय हमको सदैवकाल बना रहता है, न जाने किस समय वह आकर हमको दबालें, क्योंकि उनके आनेका कोई समय नियत नहीं है, उनसे बचनेके लिये हम रात्रिभर खडे रहते हैं ॥ २९ ॥

एक महात्मा जङ्गलमें रहतेथे और रात्रि दिन भजन करतेथे । एक पुरुषने उनसे कहा महाराज ! आप भजन करनेमें बडा भारी परिश्रम करते हैं, क्या जाने परमेश्वर तुम्हारे इस परिश्रमको मंजूर करे या न करे । महात्माने कहा हम अपना फरज़ अदा करते हैं, आगे परमेश्वरकी मरजी । वह अपना फरज अदा करै या न करै, क्योंकि जैसे राजाका हुक्म अपने भृत्यपर होता है, भृत्यका हुक्म राजापर नहीं होता है, तैसे परमेश्वरका हुक्म हमपर है, हमारा हुक्म तिसपर नहीं है, जब कि हम अपना फरज अदा करदेवैंगे, तब वह यह नहीं कहसकेगा जो तुमने फरज क्यों नहीं अदा किया इसलिये हम बहुत परिश्रम करते हैं । हे चित्तवृत्ते ! इस कथाका यह तात्पर्य है कि मनुष्य शरीरको धारण करके जो पुरुष अपने फरजको अदा नहीं करता है वह कदापि उत्तम गतिको नहीं प्राप्त होता है ॥ ३० ॥

हे चित्तवृत्ते ! एक लौकिक दृष्टान्तको तुम सुनो जिसका तात्पर्य भी अलौकिक है:—

एक नगरके राजाने बहुतसा धन इकट्ठा किया क्योंकि वह अति कृपण था । वह राजा धनका संग्रह करनाही जानताथा, धनके सुखको वह नहीं जानताथा । जिस हेतुसे वह बडा कदर्य था, इसी हेतुसे वह अपने पुत्रको भी धनका सुख नहीं लेने देताथा और खरचेसे डरता हुवा अपनी युवावस्थाकी कन्याकी शादीकोभी नहीं करताथा । एक दिन एक नटिनी नाटक दिखानेके

लिये तिस राजाकी सभामें कहींसे आकर विराजमान होगई और अपने नाटक दिखानेकेलिये राजासे तिसने प्रार्थना की, राजाने कहा किसी दिन तुम्हारा तमाशा कराया जावैगा, नटिनी तिसके नगरमें रहने लगी । जब कि कुछ दिन बीते तब नटिनीने फिर एक दिन तमाशा करनेके लिये राजासे प्रार्थना की राजाने कहा अभी ठहरो फिर होगा, इसी तरह जब २ वह कहे तब २ राजा टालाटूली करदे । जब कि तिस नटिनीको वहांपर रहते बहुत काल बीतगया तब तिसने तंग होकर वजीरसे कहा यातो राजा साहिब हमारा तमाशा देखैं, नहीं तो हमको साफ जबाब देवैं, जो हम अन्यत्र कहीं जाकर अपनी जीविकाको खोजैं । वजीरने मिलकर राजासे कहा आज रात्रिको इस नटिनीका तमाशा आप देखिये, आपको कुछ देना नहीं पडेगा, हम लोग आपसमें मिलकर इसको कुछ द्रव्य देदेवैंगे, अगर यह नटिनी यहांसे खाली चली गई तब आपकी बडी बदनामी होगी । राजाने कहा अच्छा आज रात्रिको इसका तमाशा हो, सभाकी तैयारी हुई, रात्रिके समय जब कि सब सभासद आकरके बैठे, तब नटिनीने तमाशेका प्रारंभ किया । बहुत तरहके नटिनीने राजाको तमाशे दिखलाये और तमाशा करते २ जब कि दोघडी रात्रि बाकी रहगई और राजाने तिसको कुछभी इनाम न दिया तब नटिनीने एक दोहेमें नटको समझाया ॥

दोहा ।

रात घडी भर रह गई, थाके पिंजर आय ॥
कह नटिनी सुन मालदेव, मधुरा ताल बजाय ॥ १ ॥

आगेके एक दोहेमें नट नटीके प्रति कहता है ।

दोहा ।

बहुत गई थोडी रही, थोडी भी अब जाय ॥
कहे नाट सुन नायका, तालमें भंग न पाय ॥ २ ॥

नटके इस दोहेको सुनकर तिसी समयमें एक तपस्वी जो कि तमाशा देखनेको आयाथा उसने अपना कंबल ओढनेका तिस नटको देदिया और

राजाके लडकेने जडाऊ कडोंकी जोडी अपनी तिसको देदी और राजाकी कन्याने हीरोंका हार गलेसे उतारकर तिस नटनीको देदिया। राजा देखकर बडा चकित हुआ। प्रथम राजाने तपस्वीसे कहा तुम्हारे पास एकही कंबल था और कोई वस्त्रभी नहीं है तिस कंबलको जो तुमने इसके प्रति देदिया है सो क्या समझकर दिया है? तपस्वीने कहा आपके ऐश्वर्यको देखकर मेरे मनमें भोगोंकी वासना उठी थी, जब कि मैंने इस नटके दोहेको सुना तब मैंने विचार किया जो बहुतसी आयु तो तपस्यामें व्यतीत होगई है, बाकी थोडीसी रहगई है, अब इसको भोगोंकी वासनामें खराब मत करो, ऐसा मेरेको इसके दोहेसे उपदेश हुआ है, इस लिये मैने अपना कंबल इसको दिया है, क्योंकि वही मेरे पास था और तो कुछ था नहीं। फिर राजाने अपने लडकेसे पूंछा तुमने क्या समझकर इतनी वेश कीमती कडोंकी जोडी नटको देदी? लडकेने कहा मैं बहुत दुःखी रहताहूँ क्योंकि आप मेरेको किंचित्‌भी द्रव्य खर्चनेके लिये नहीं देते हैं. दुःखी होकर मैंने यह सलाह की थी कि राजाको विष दिलवा कर मारडालें, इस नटके दोहेको सुनकर मेरेको यह उपदेश हुआ है, बहुत आयु तो राजाकी व्यतीत होगई है, अब वृद्ध होगया है दो चार बरस अब बाकी रह गई है सो यहभी जानेवाली है पितृहत्याको मत लेवो, ऐसा विचार होनेसे मैंने कडोंकी जोडी इस नटको इनाम देदी है। फिर राजाने अपनी कन्यासे पूँछा तुमने क्या समझकर हीरोंका हार नटनीको देदिया? कन्याने कहा मैं चिरकालसे युवावस्थाको प्राप्त होचुकीहूँ और आप खरचेके डरसे मेरा विवाह नहीं करते हैं, कामदेव बडा बली है, कामकी प्रबलतासे मेरा विचार अब बजीरके लडकेके साथ निकलजानेका हुआ था इस नटके दोहेको सुनकर मैंनेभी विचार किया कि बहुतसी आयु तो राजाकी गुजर चुकी है अब थोडीसी बाकी है, वहभी गुजरनेवाली है, अब थोडे दिनोंके लिये पिताको कलंक लगाना मुनासिब नहीं है, ऐसा उपदेश नटके दोहेसे मेरेको हुआ है इसलिये मैने नटीको हार दिया है, इस नटके दोहेने राजन् आपकी जान और इज्जत बचाई है इसलिये आपकोभी इस नटीके प्रति इनाम देना मुनासिब है। राजानेभी जानलिया बात तो ठीक

है । राजानेभी बहुतसा द्रव्य तिस नटीको देकर बिदा करदिया । तत्पश्चात् राजाने वजीरके लडकेके साथ कन्याकी शादी करदी फिर राजगद्दी पुत्रको देकर राजा वैराग्यवान् होकर आत्मविचारमें लगगया । हे चित्तवृत्ते ! इस दृष्टान्तका यह तात्पर्य है जो कि पिछली आयु व्यतीत होगई है वह तो अब किसी प्रकारसेभी लौटकर वापस नहीं आसकती है परन्तु जो बाकी बची है इसीको सार्थक करो क्योंकि यदि बाकीभी व्यर्थ जायगी तब पछतानाही होगा । इसीपर एक कविनेभी कहा है–

सवैया ।

पुत्र कलत्र सुमित्र चरित्र, धरा धन धाम है बन्धन जीको ।
बारहिं बार विषय फलखात, अघात न जात सुधारस फीको ॥
आनऔसान तजो अभिमान, कहीसुनकान भजोसियपीको ।
पाय परमपद हाथसों जात, गई सो गई अब राख रहीको ॥

हे चित्तवृत्ते ! इसी विषयका एक और दृष्टान्त तुम सुनोः–

किसी नदीके किनारेपर एक किसानका खेत था, जब कि तिसके खेतके पकनेके दिन आये तब वह खेतमें मंचानको बांधकर खेतकी रक्षा करने लगा । एक दिन वह नदीके किनारेपर दिशा फिरनेको जब गया तब वहांपर रात्रिको नदीका अरार जो गिरा तिसमें एक लालोंकी भरीहुई हंडिया भी निकलकर किनारेपर गिरपडीथी ये भी उसी जगहमें तिस हंडियाके समीप बैठकर झाडे फिरने लगा । इतनेमें किसानकी नजर उन लालों पर जा पडी । किसानने उनको पत्थर जानकर कपडेमें बांधकर लाकर अपने मंचान पर धर दिया और उन लालोंसे पक्षियोंको उडाने लगा, जब २ पक्षी तिसके खेतको खानेके लिये आकर बैठे तब २ वह एक २ लालको उठाकर उनको मारे, उससे पक्षी तो उड जायँ और लाल नदीमें जा गिरें, इसीतरह एक २ करके सब लाल तिसने नदीमें फेंक दिये एक लाल जिससे कि तिसका लडका खेलताथा, वह लडकेके पास रह गया । जब कि थोडासा दिन बाकी रहा

तब तिसकी स्त्री अपने लडकेको और तिस लालको लेकर घरमें चली गई। जब कि वह रसोई बनाने लगी तब उसने देखा जो नमक घरमें नहीं है और न कोई पास पैसा है तब वह उसी लालको लेकर बाजारमें गई और एक बनियांसे तिसने कहा इस पत्थरपर हमको नमक बदल कर देदे। वहांपर एक जवाहिरी खडाथा उसने लालको लेलिया और बनियांसे एक पैसेका नमक तिसको दिलवा दिया और तिसके मकानका पता पूँछकर कहा इस पत्थरका जो दाम लगेगा सो तुम्हारे घरमें भेज दिया जावैगा? दूसरे दिन तिस जौहरीने तिस हीरेका दाम लगाकर एक लाख रुपैया तिसके घरमें भेज दिया। किसानकी स्त्रीने लेकर कुछ रुपयोंका तो एक बड़ा भारी आलीशान मकान बनवाया और सब चीजें आरामकी तिसमें जमा कीं और बाकीका रुपैया कहीं ब्याजपर किसी महाजनके पास जमा कर दिया। और खेतमें जाकर अपने पतिसे कहा बहुत दिन बीत गयेहैं, तुम अपने घरमें नहीं गयें हो आज घरपर चलकर भोजन करो। घरकी रचनाको देखो किसान तिसके साथ जब घरके द्वारपर पहुँचा तब घरकी तरफ देखकर पीछेको हटा और कहने लगा यह घर तो किसी महाजनका है इसमें मेरेको तू क्यों लेजातीहै? स्त्रीने कहा महाजनका नहीं है यह घर तुम्हाराही है। उसने कहा हमारा तो एक छप्परका था, हमारा यह कैसे है? स्त्रीने कहा वह जो एक पत्थर लाल रंगका नदीमें फेकनेसे बचगया था जिससे कि लडका खेलताथा तिसके दामसे यह बनाहै। इतना सुनतेही वह बेहोश होकर गिर पडा तिसको यह रंज हुआ जो इतनी बडी कीमतवाले पत्थर हमने मुफ्तमें अपनी मूर्खतासे नदीमें फेंकदिये। तब तिसकी स्त्री तिसपर जल छीटकर पतिको चेतन करके कहने लगी जो फेंकदिये सो तो अब लौट कर नहीं आतेहैं, जो कि एक बच गयाहै इसीके आनंदको भोगो इसकोभी अब अफसोस करके मत खोवो स्त्रीकी वार्ताको सुनकर वह उठकर बैठ गया और अपने घरमें जाकर भोगोंको भोगने लगा। वैराग्याश्रम कहतेहैं हे चित्तवृत्ते! यह तो दृष्टांत है इसको तुम दार्ष्टान्तमें घटावो इस शरीररूपी हांडीमें श्वासरूपी लाल भरेहैं उनको तुमने पत्थर जानकर विषयरूपी पक्षियोंके उडानेमें अर्थात् विषय भोगोंमें जो फेंक दियाहै, वह तो अब फिर

लौट कर नहीं आसक्तेहैं । हां जो कि बाकी बचेहैं इनको अब मत व्यर्थ विषयोंमें फेंको, किंतु आत्मविचारमें इनको खरच करके इन्हींका आनंद लूटो । यही वार्त्ता " गुरुकौमुदी" में भी कहीहै:-

अरे भज हरेर्नाम क्षेमधाम क्षणे क्षणे ।
बहिस्सरति निःश्वासे विश्वासः कः प्रवर्त्तते ॥ १ ॥

अरे जीव ! हरिके नामको क्षण २ में तूं भज, कैसा वह नाम है, कल्याणका एक मंदिरहै, जब कि, बाहरको श्वास निकलता है तब तिसके भीतर आनेका कौन विश्वास है आवे या न आवे (१) ॥ ३१ ॥

हे चित्तवृत्ते ! महाभारतमें एक छोटासा इतिहास कहा है उसको भी तुम सुनो:-

एक द्विज कहीं विदेशको जाताथा, रास्ता भूलकर वह एक सघनः बनमें जा निकला । वह सघन बन बडा भयानक अर्थात् डरावने वाला था । क्योंकि तिस बनमें चारों तरफसे बडे भयानक शब्द होते थे और मांसाहारी सिंहादिक जीव तिसमें घूमरहेथे और बडे भारी २ हाथियोंके झुंडोंके झुंड जिस बनमें घूम रहेथे और चारों तरफ बडे भयानक रूपवाले सर्पभी जिस बनमें घूम रहेथे उन भयानक जीवोंको देखकर वह द्विज भयभीत होकर इधर उधर दौडने लगा अर्थात् अपनी रक्षाके लिये स्थानको खोजने लगा । तब उसको सामनेसे आतीहुई एक पिशाचिनी देख पडी, जिसने बडी २ पांशोंको अपने हाथमें लिया है ।

फिर वह द्विज क्या देखता है, पर्वतोंके समान पांच शिरोंवाले सर्पभी तिस सघन बनमें घूमरहे हैं उन सर्पोंसे भयभीत होकर यह द्विज जब कि एक तरफको चला, तब तिसने एक कुआँ देखा जिसके भीतर अन्धकार भराहै और ऊपरसे वह तृण करके आच्छादितहै और तिसके भीतर अनेकप्रकारकी बेलें लटकरही हैं । द्विजने विचारा इस कुवेंके अतिरिक्त और कोईभी स्थान इस बनमें नहीं है जहां पर कि, मैं छिपकर अपनेको इन भयानक जीवोंसे बचाऊं । तब वह द्विज कुवेंके ऊपर जो बेल थी तिसको पकडकर नीचेकी तरफ अपना शिर

करके तिस कुवेमें लटक रहा । थोडी देरके पीछे जब कि, नीचेकी तरफ तिसने देखा तब एक बडा भारी सर्प कुवेमें बैठा हुआ तिसको दिखाई पडा । ऊपरको जब देखा तब एक हाथी बडा बली खडा हुवा तिसको दिखाई पडा। कैसा वह हाथी है छै हैं मुख जिसके, श्वेत और श्याम है वर्ण जिसका अर्थात् आधा शरीर तिसका श्वेत है और आधा शरीर तिसका श्याम है और जिस बेलिको तिस द्विजने पकडा हुआ है तिसको वह हाथी खा रहा है, फिर वह द्विज क्या देखता है दो बडे भारी मूसे तिस बेलिकी जडको काट रहे हैं । हे चित्तवृत्ते ! यह तो दृष्टांत है अब इसको दार्ष्टान्तमें घटाते हैं । हे चित्तवृत्ते ! यह जीवरूपी तो द्विज है और संसाररूपी सघन बन है, अपने स्वरूपसे भूलकर तिस बनमें यह घूम रहा है और काम क्रोधादिरूप भयानक जीव तिस बनमें घूम रहे हैं और स्त्रीरूपी पिशाची भोगरूपी पाशको लेकर इसको फँसानेके लिये सम्मुख चली आती है, तिस संसाररूपी वनमें गृहस्थाश्रमरूपी कूप है, आयुरूपी वल्लीको पकडकर यह जीव तिसमें लटकरहा है, कालरूपी सर्प तिस कुएँमें बैठा हुआ इसकी तरफ देख रहा है और दिन रात्रिरूपी दो मूसे इसकी आयुरूपी वल्लीको काट रहे हैं और वर्षरूपी हाथी इसकी आयुरूपी वल्लीको खा रहा है । षट् ऋतु तिस वर्षरूपी हस्तीके छैः मुख हैं और शुक्ल कृष्ण दो पक्ष तिसके दो वर्ण हैं ऐसे कष्टमें प्राप्त हुआभी यह जीव वैराग्यको प्राप्त नहीं होता है, विना वैराग्यके और किसी प्रकारसेभी इसका छुटकारा नहीं है ॥ ३२ ॥

हे चित्तवृत्ते ! इसी विषयका एक और दृष्टान्त तुमको सुनाते हैं:—

एक नदीमें एक सर्प और एक मेडक दोनों बहे जातेथे सर्पने मेडकको अपने मुखमें पकडलिया और तिसको खानेके लिये किनारेकी तर्फ लेचला और मेडक तिस सर्पके मुखमें पकडा हुआभी मुखको फाडकर मच्छरोंके खानेकी इच्छा करता है ! मूर्ख यह नहीं जानता कि, मैं तो आपही दूसरेका आहार हो रहाहूं, न माल्म घडी पलमें खायाजाऊंगा । हे चित्तवृत्ते ! यह तो दृष्टांत है अब दार्ष्टान्तको सुनो—यह जीवरूपी तो मेडक है और कालरूपी सर्पके मुखमें पकडा हुआ है । यह माल्म नहीं है कि, काल इसको किस घडी पलमें

खा डालता है, तब भी यह मूर्ख विषयरूपी मच्छरोंके खानेकी इच्छा करता है अपनी तर्फ नहीं देखता है, जो कि, मैं आपही दूसरेका खाद्य होरहाहूँ, किञ्चित् मात्रभी वैराग्यको यह नहीं प्राप्त होता है । इससे बढकर और क्या अज्ञान होगा ॥ ३३ ॥

वैराग्यआश्रम कहते हैं–हे चित्तवृत्ते ! एक और वैराग्यवान्के दृष्टान्तको सुनोः–

एक राजाने दूसरी विलायतके राजापर चढाई की दोनों राजोंका परस्पर घोर युद्ध होने लगा, जिस राजापर चढाई की गई थी वह राजा तिसी घोर युद्धमें मारा गया । और उसके देशको दूसरे राजाने अपने कब्जेमें करलिया जब कि, कुछ दिन तिस राजाको वहांपर रहते बीते, तब तिसका अपने देशको जानेका विचार हुआ । राजाने लोकोंसे पूछा कि इस राजाके कुलमें कोई है ? लोकोंने कहा इस राजाके वंशमें तो कोईभी नहीं है परन्तु इसका गोतिया एक मनुष्य है । राजाने पूंछा वह कहां पर रहता है ? लोकोंने कहा वह संसारको त्याग करके श्मशानोंमें रहता है । राजाने तिसको बुला भेजा वह नहीं आया जब कि, दो चार दफा बुलानेपरभी वह नहीं आया तब राजा पालकीमें सवार होकर आपही तिसके पास गये और उससे भेंट करके कहा हमसे कुछ मांगो जिस वस्तुकी तुमको इच्छाहो वही मांगो यदि राज्यकी इच्छा हो तो राज्यको मांगो, हम तुमको देवैंगे । उसने कहा हमको किसी वस्तुकी इच्छा नहीं है, जब कि, राजाने बहुतसा आग्रह किया कुछ मांगो २ तब तिसने राजासे कहा इतनी वस्तु हमको चाहिये यदि आपके हों तो हमको दीजिये । एक तो वह जीना जिसके साथ मरना न हो, दूसरी वह खुशी जिसके साथ रञ्ज न हो, तीसरी वह जवानी जिसके साथ बुढापा न हो, चौथा वह सुख जिसके साथ दुःख न हो । ये चार वस्तु हमको चाहिये । राजाने कहा इन चारोंमेंसे एकके देनेकीभी मेरी सामर्थ्य नहीं है । ये सब तो मनुष्यमात्रके पास नहीं हैं, किन्तु यह सब ईश्वरकेही पास हैं, वही देसक्ता है, दूसरा कोईभी दे नहीं सक्ता है । तब तिसने कहा मैंने भी परमेश्वरकाही आश्रयण किया है, अनित्य पदा-

थोंको मैं नहीं चाहताहूं राजा लौट कर चले आये । हे चित्तवृत्ते ! यह वैराग्यका फल है जो राज्य मिलै और तिसको ग्रहण न करै । ऐसे जो कि, वैराग्यवान् महात्मा हैं वही संसारमें जीवन्मुक्त सुखी हैं ॥ ३४ ॥

हे चित्तवृत्ते ! एक और महात्माके वैराग्यका हाल सुनो—एक महात्मा देशाटन करते फिरतेथे, एक दिन वह कुछ रात्रिके बीत जानेपर एक नगरके द्वारपर पहुँचे । आगे नगरका फाटक बन्द होगयाथा महात्मा बाहर फाटकके पडे रहे । उस नगरका राजा मरगया था और राजाके संततिभी नहीं थी और न कोई तिसके कुलमेंही था । मंत्रियोंने आपसमें यह सलाह करीथी कि, जो पुरुष प्रातःकालमें आकर नगरके फाटकको हिलावै उसीको राजगद्दीपर बिठा देना चाहिये । इधर तो मन्त्री लोक रात्रिको तिस फाटकके भीतर मिलकर सब पडे रहे और उधर फाटकके बाहर महात्मा आकर पडे रहे । जब प्रातःकाल हुआ तब महात्मा फाटकके द्वारको हिलाने लगे क्योंकि वह पहले दिनके भूखेथे उनको भूखने सतायाथा मंत्रियोंने तुरन्त फाटकको खोलदिया और उनको भीतर लेकर स्नान कराय सुन्दर वस्त्र पहराकर राजसिंहासनपर बैठायदिया और कहा आप हमारे अब राजा होगये हैं, हुक्म करिये । महात्माने कहा हमारी जो दो लँगोटी हैं उनको धोकर सुखाकर एक सन्दूकमें धरकर तिसको ताला लगा दीजिये और जितना कि राजकाज है उसको आप अपनी बुद्धिमानीसे करिये हमसे कुछ भी न पूंछिये घाटे बाढेके मालिक तुमको ही होना पडेगा । हम तो दो रोटी खा लेवैंगे और कुछ काम नहीं करैंगे । मन्त्रीलोक सब राजकाज करने लगे । महात्मा राजसिंहासनपर बैठे भजन करतेरहे । इसीतरह जब कुछ काल व्यतीत होगया तब एक और राजाने तिस राज्यपर चढाई की, मंत्रियोंने महात्मासे कहा एक शत्रुने राज्यपर आक्रमण किया महात्माने कहा उस सन्दूकको खोलो जिसमें हमारी लङ्गोटियें रक्खी हैं, वजीरोंने खोल दिया महात्माने अपनी लंगोटियें बांधलीं और कहा हमने चार दिन इस गद्दीपर बैठकर हलवा पूरी खा ली है और चार दिन दूसरा राजा खा लेवै, हम तो जाते हैं, घाटा बाढा तुम्हारा रहा । ऐसा कहकर महात्माने चल दिया । हे चित्तवृत्ते ! वैराग्यवान् महात्मा किसी

पदार्थमें आसक्त नहीं होते हैं। राजसिंहासन और भिक्षाटन दोनों उनकी दृष्टिमें बराबर हैं ॥ ३९ ॥

हे चित्तवृत्ते ! संसारमें तीन तरहके पुरुष हैं, उत्तम, मध्यम, कनिष्ठ। उत्तम पुरुषोंके लिये तो शास्त्रका एक वाक्यही सुनना बहुत है, और मध्यम पुरुषोंके लिये सब शास्त्र है और कनिष्ठोंके लिये सब निष्फल है। सो प्रथम हम तुमको उत्तम अधिकारीके दृष्टान्तोंको सुनाते हैं:—

हे चित्तवृत्ते ! एक घोडेका सवार कहींको जाता था चलते २ जब कि, वह थक गया, तब एक ग्रामके बाहर एक मंदिरके समीप वह घोडेपरसे उतरकर एक वृक्षके नीचे बैठकर सुस्ताने लगा और घोडेको तिसने वृक्षके साथ बांध दिया और इधर उधर देखने लगा। इतनेमें मंदिरकी तरफ जब कि, तिसकी दृष्टि पडी तब बहुतसे आदमी तिसको मंदिरमें बैठे हुये दिखाई पडे। एकसे तिसने पूँछा मंदिरमें इतने आदमी क्यों जमा हुए हैं ? तिसने कहा मंदिरमें वेदान्तकी कथा होती है, तिस कथाको सुननेके लिये जमा हुए हैं। वह सवारभी भीतर कथा सुननेके लिये उन आदमियोंमें जाकर बैठ गया और कथाको सुनने लगा उस दिन दैवयोगसे वैराग्यका प्रकरण चला हुआथा और वक्ताजी संसारको दुःखरूपता करके श्रोतोंके प्रति दिखला रहेथे। तिस कथाको सुनकर तिस सवारको बडा वैराग्य हुवा जब कथा समाप्त हुई तब उस सवारने बाहर आतेही घोडा एक आदमीको देदिया और बाकीका भी सब असबाब उसने उसी जगह लोकोंको बाँट करके विरक्त होकर चल दिया। बारह बरस तक वह विरक्त होकर देशान्तरमें रमण करता रहा और बारह बरसके पीछे दैवयोगसे फिर वह उसी रास्तासे आनिकला और उसी वृक्षके नीचे बैठकर सुस्ताने लगा। और मंदिरमें लोकोंकी भीडभाडको देखकर एक आदमीसे पूँछा इस मंदिरमें पुरुषोंकी भीडभाड क्यों होरही है ? तिसने कहा कथा होती है कथाके श्रोता लोकोंकी भीडभाड होरही है। सवार विरक्तने पूँछा ये श्रोतालोक कबसे तिस कथाको सुनते हैं और वह वक्ता कबसे कथाको सुनाता है ? उसने कहा वक्ता तो बीस बरससे इस मंदिरमें कथा

कहता है और श्रोतालोगोंका कुछ ठीक नहीं है कोई दश बरसका कोई बीस बरसका कोई पांच सात बरसकाही है । विरक्तने कहा हमने तो एकही दिन इसकी कथाको सुना था, हमारे मुँहपर शास्त्रका एकही चपेट लगा जिसके लगनेसे आजतक हमारा होश बिगडा है, धन्य ये चिरकालके श्रोतालोकहैं जो नित्यही शास्त्रकी चपेटोंको अपने मुखपर सराहते हैं और लज्जित नहीं होते हैं । ऐसे कहकर वह चल दिया । हे चित्तवृत्ते ! वह उत्तम अधिकारी था, जिसको एक दिनकी कथा श्रवण करनेसे वैराग्य उत्पन्न होगया ॥ ३६ ॥

हे चित्तवृत्ते ! एक और उत्तम अधिकारीकी कथाको मैं तुम्हारे प्रति सुनाता हूं तू सावधान होकर सुनः—

एक नगरमें किसी मंदिरमें नित्यही कथा होती थी और बहुतसे श्रोता-लोकभी वहांपर कथाके समय पर जमा होते थे, एक बनियांभी नित्यही कथा सुननेके लिये तिस मंदिरमें जाता था । एक दिन इधर तो बनियां कथा सुन-नेके लिये मंदिरमें गया और उधर तिसके पीछे तिसकी दूकानपर एक ग्राहक कुछ सौदा लेनेको पहुँचा उसने बनियांके लडकेसे पूंछा तुम्हारे पिता कहांको गये हैं ? उसने कहा कथा सुननेको गये हैं । उस खरीदारने कहा हमको कुछ सौदा लेना है, तुम जल्दी जाकर अपने पिताको बुला लावो । लडकेने मंदि-रमें जाकर अपने पिताके कानमें कहा एक आदमी दूकानपर सौदा लेनेके लिये आपको बुलाता है । पिताने कहा तुम जाकरके तिससे कह देओ अभी आते हैं । लडकेने जाकरके कहदिया अभी आते हैं । जब कि, वह थोडी देर तक न आया तब तिस ग्राहकने लडकेसे कहा तुम जल्दी अपने पिताको बुला लाओ नहीं तो हम दूसरी जगहसे सौदा खरीदकर लेवैंगे । फिर लडकेने जाकरके पिताके कानमें कहा लाला ! वह उक्ताया हुआ है वह कहता है जल्दी आकर हमको सौदा देवैं, नहीं तो हम दूसरी जगहसे खरीदकर लेवैंगे । तिसके पिताने कहा रोज तो यह पंडित थोडीसी कथा कहता था मगर आज तो इसने बडा रामघाणा छोडदिया है, तुम चलो मैं आता हूं लडकेने आकर ग्राहकसे कहा अभी आते हैं फिर तिसने लडकेसे कहा तुम अबकी बार जाकर

उसको कह दो यदि नहीं आना हो तो हमको जवाब देदे हम और जगहसे खरीद करलेवें । लडकेने फिर जाकर बापके कानमें कहा लाला जल्दी चलो नहीं तो वह जाता है । तिसके बापने और दो चार गाली पंडितको देकर कहा तुम चलो मैं अभी आताहूँ । लडका दो तीन मिनट वहांपर खडा होगया उस समय ऐसी कथा होती थी कि, भगवान् उद्धवसे कह रहे थे हे उद्धव ! सब प्राणियोंमें एकही आत्माको तुम जानो सो आत्मा मैंही हूँ मेरेसे भिन्न कोई भी जीव नहीं है, इसलिये किसी प्राणीमात्रसे भी विरोध मत करो । इतनी कथा सुनकर लडका जब दूकानमें आकर बैठा तब एक गैया आकर उसके अनाजके दौरेमेंसे अन्नको खाने लगी, लडका मनमें विचार करता है जब कि इसका और हमारा आत्मा एकही है तब हम किसको हटावें । इतनेमें तिसका बाप भी कथासे उठकर दूकानकी तरफ चला । दूरसे तिसने देखा गैया तो अनाज खारही है और लडका देख रहा है गैयाको हटाता नहीं है । तब वह दूरसेही गाली देने लगा, समीप आकर तिसने एक लाठी गैयाकी पीठ पर जोरसे मारी गैया तो भाग गई,परन्तु लडका चिल्लाकरके रोने लगा । बापने कहा मैंने तो गैयाको लाठी मारी है, तुम क्यों चिल्लाकर रो उठे हो ? लडकेने कहा आज जो कथमें निकला था कि, सब प्राणियोंमें एकही आत्मा है । मैं उसका विचार कर रहा था और मेरे आत्माका गैयाके आत्माके साथ अभेद होरहा था इसलिये वह लाठी हमको लगी है । इतना कहकर लडकेने जब कुडता उतार कर अपनी कमर बापको दिखलाई तब उसकी कमर पर लाठी लगनेका निशान पडगया था, बापने गुस्सेमें आकर कहा अरे मूर्ख ! वहांकी कथा वहां परही छोड़ी जाती है । क्या कोई तुम्हारी तरह साथ बांध लाता है । लडकेने कहा जो हुआ सो हुआ अब हमारा रास्ता दूसरा है, तुम्हारा रास्ता दूसरा है । इतना कहकर लडका वहांसे चलदिया । हे चित्तवृत्ते ! वह लडका उत्तम अधिकारी था इसीवास्ते उसको एकही वाक्य श्रवण करनेसे पूरा बोध हो गया था और तिस कथाके सुननेवाले मध्यम अधिकारी थे क्योंकि यत्किंचित् धारण करतेथे और लडकेका बाप कनिष्ठ अधिकारी था जो कि, एक कानसे सुनता था दूसरेसे निकाल देता था संसारमें प्रायः करके तो कनिष्ठही अधिकारी बहुत हैं,मध्यम तो

कोई एक है, उत्तम तो करोडोंमें भी मिलना दुर्लभ है. बिना उत्तम अधिकारीके दूसरेका मोक्ष नहीं होता है ॥ ३७ ॥

एक राजाने किसी वार्तासे प्रसन्न होकर अपने मन्त्रीको एक दुशाला इनाम दिया, मन्त्री दुशालेको लेकर जब कि, दर्बारसे बाहर निकला तब तिसका नाक बहने लगा उस कालमें वजीरके पास कोई रूमाल नहीं थी इसलिये वजीरने दुशालासेही नाकको पोंछ दिया। उस जगहपर एक मन्त्रीका द्रोही खडा देखता था उसने राजासे जाकर कहा आपने जो वजीरको इनाममें दुशाला दिया है तिस दुशालेको तुच्छ समझ कर वजीरने तिससे नाक पोंछ दिया है । राजाने वजीरको बुलाकर डाटा और नौकरीसे निकाल दिया । अर्थात् वजीरीसे उतार दिया। हे चित्तवृत्ते ! यह तो दृष्टान्त है । दार्ष्टान्तमें परमेश्वरने जो जीवको मनुष्यशरीररूपी दुशाला दिया है तिसके साथ जो विषयभोगरूपी नाकको पोंछता है तिसका आदर नहीं करता है जो यह शरीररूपी दुशाला मोक्षकी प्राप्तिका साधन है उसको परमेश्वर मनुष्यपदसे उतार कर पशुआदिक योनियोंमें बार बार फेंकता है क्योंकि यह शरीर वैराग्यकी प्राप्तिका साधन है भोगोंमें राग करनेका साधन नहीं है ॥ ३८ ॥

हे चित्तवृत्ते ! एक और दृष्टान्तको तुम सुनो, यह दृष्टान्तभी वैराग्यका उत्पादक है:—

एक राजाके कोईभी पुत्र नहीं था, और अनेक प्रकारके यत्नोंके करनेसे भी जिसके पुत्र जब कि उत्पन्न न हुआ तब राजाने मनमें विचारा कोई ऐसा उपाय करना चाहिये जिससे राज्यभी मेरे पीछे बना रहे और कोई एक पुरुष इसका मालकभी न होने पावे; राजाने ऐसा प्रबन्ध करदिया कि पांच मन्त्री मिलकर राज्यका प्रबन्ध हमेशा किया करें । उनमें एक मन्त्री प्रधान बनाया जावे, वह सबेरे सारे नगरमें घूमकर प्रजाके हालको देखा करे और छैः महीनोंके पीछे वह मन्त्री नदी पार कर दिया जाय और एक नया बनाया जावे । फिर दूसरेको पांचोंमें प्रधान बनाया जावे । अब येही प्रबन्ध राजाने जारी करदिया। जो प्रधानबनाया जावे वह छैः महीनोंके पीछे नदीपार किया जावे।

जब कि, वह नदी पार जंगलमें जाय वहांपर बिना खानेसे दुःख पाकर मर जाय इसीतरह बहुतसे मन्त्री जब नदी पार किये गये, तब एक मन्त्री जो प्रधान बना वह बडा चतुर था और जो प्रधान बनता था उसको सब तरहके अखत्यारात मिल जाते थे। उस मन्त्रीने नदीपार बहुतसे मकान और बगीचे तथा कुएँ वगैरह बनवादिये और आरामदारीके लिये सब प्रकारके सामान वहांपर जमा करादिये। जब कि, छैः महीने पूरे हुए तब वह वजीर नदीके पार जाकर जैसे कि, इसपार आनंद करता था वैसेही उसपारभी आनंद करने लगा। हे चित्तवृत्ते! यह तो दृष्टान्त है, अब दार्ष्टान्तमें इसको घटाइये। यह मनुष्य जन्म छैः महीनेकी वजीरी है जो कि, मूर्ख हैं, वह इसको विषयभोगोंमें लगाकर छैः महीनेरूपी अपने पदको व्यतीत करदेते हैं। जो कि, विचारवान् हैं, वह परलोककी सामग्रीकोभी साथ २ जमा करते रहते हैं। नदीपार कौन हैं लोकान्तरमें जन्मान्तरका होना, लोकान्तरमें जन्मान्तरमें जाकर फिर वहां परभी आनन्दकोही प्राप्त होते हैं। सो विना वैराग्यके लोकान्तरके साधन जमा नहीं हो सक्ते हैं, इसलिये वैराग्यको आश्रयण करनाही मनुष्य जन्मका मुख्य प्रयोजन है ॥ ३९ ॥

हे चित्तवृत्ते! वैराग्यवान् दो और महात्मोंके दृष्टान्तको तुम सुनोः—

एक नगरके बाहर नदीके किनारेपर एक कुटी बनाकर दो महात्मा बडे वैराग्यवान् रहते थे और किसीभी राजा बाबूके द्वारपर नहीं जाते थे। अपनी भिक्षा मांगकर निर्वाह करते थे। प्राणधारणके अतिरिक्त जिनका और कोई भी व्यवहार नहीं था। लोकोंमें उनके गुणोंकी बडी चर्चा फैली, क्योंकि, वह बडे भारी त्यागी थे। राजाके दरबारमेंभी उनके त्यागकी चर्चा फैली। तब राजाके मनमेंभी उनके दर्शन करनेकी इच्छा हुई। एक दिन राजाभी पालकी पर सवार होकर उनके पास गये, आगे उसीवक्त वह महात्मा भिक्षा मांगकर लाये थे और हाथ पांव धोकर खानेको बैठे थे। राजाको आतेहुए दूरसे जब उन्होंने देखा तब आपसमें विचार किया इस राजाकी श्रद्धाको हटाना चाहिये नहीं तो राजाके संगसे वैराग्य ढीला हो जायगा। ऐसा विचार

करके जब कि, राजा समीपमें आगये तब वह दोनों आपसमें एक रोटीके टुकडेपर लडने लगे । एक तो कहे तुमने रोटी अधिक खाई है, दूसरा कहे तुमने अधिक खाई है, राजा उनकी लडाईको देखकर दूरसेही लौट गया । राजाने जान लिया यह दोनों कँगले हैं, जो एक रोटीके टुकडेपर परस्पर लडते हैं । हे चित्तवृत्ते ! पूर्ण वैराग्यवान् राजोंसे भेट नहीं करते हैं । और न तिनका अन्नही खाते हैं, जो कि, दाम्भिक हैं, कामनासे भरे हैं, वह अनेक प्रकारका झूठा त्याग दिखलाकर राजा बाबुओंको अपना सेवक बनाते हैं और बहुतसे ऐसे भी हैं । राजा बाबुओंको फँसानेके लिये बीचमें दलालोंको डाल कर उनको अपना पशु बनालेते हैं वही नरकगामी होते हैं ॥ ४० ॥

हे चित्तवृत्ते ! राजोंकी संगति वैराग्यवान्के लिये बहुतही बुरी है । जिसको दृढ वैराग्य है, वह राजोंसे दूर भागता है । इसीमें तुमको दृष्टान्त सुनाते हैं:—

एक महात्मा वैराग्यवान् एक नगरके बाहर बनमें रहतेथे । और उसी नगरके राजाके मंदिरोंमें राजाके पास एक और महात्मा रहतेथे । दैवयोगसे वह राजा और तिसके पास रहनेवाले महात्मा दोनों मरगये कुछ दिन पीछे एक दिन उन बनवासी महात्माके समीप गरीब सत्संगी दो चार बैठेथे । इतनेमें अकस्मात्ही वह महात्मा हँसने लगे, तब उन सत्संगियोंने पूंछा महाराज ! बिना ही प्रयोजनके आप आज क्यों हंसे हैं । महात्माने कहा बिना प्रयोजनके हम नहीं हंसे हैं । एक प्रयोजनको लेकरके हम हंसे हैं । राजाके पास जो महात्मा रहतेथे वह और राजा दोनों मृत्युको प्राप्त होगये हैं । राजा तो उत्तम गतिको गया है । क्योंकि, राजाका मन नित्यही महात्मामें और उनके वाक्योंमें लगा रहताथा और वह महात्मा अधोगतिको गये हैं । क्योंकि राजाका अन्न खाकर उनका मन नित्यही राजामें और राजसम्बन्धी भोगोंमें रहता था हे चित्तवृत्ते ! राजोंकी संगतिका ऐसा अनिष्ट फल है इसीवास्ते वैराग्यवान् पुरुषके लिये राजाका अन्न और राजाकी संगतिको करना मना किया है ॥ ४१ ॥

हे चित्तवृत्ते ! एक और महात्माके दृष्टान्तको सुनोः—

पूर्वकालमें एक विरक्त महात्मा एक लंगोटीको धारण करके कई बरसतक गंगाके तीरपर विचरते रहे. तत्पश्चात् काशीमें आकर उन्होंने निवास किया। जब कि, उनको दश पांच बरस काशीमें व्यतीत होगये तब लोक उनके पास बहुतसे जानेलगे और हरएक आदमी उनको भोजनके लिये अपने घरमें ले जाया करें। तब उन्होंने देखा लोकोंके घरोंमें जानेसे तो बहुत विक्षेप होता है कोई ऐसी युक्ति करैं जो लोक हमको अपने घरोंमें न लेजाया करें। ऐसा विचार करके उन्होंने लंगोटियोंकोभी फेंकदिया। लंगोटियोंके फेंकनेसे उनका मान आगेसेभी सौगुणा अधिक बढगया। धीरे २ अब राजा बाबू उनके चेले होने लगे। थोडेही दिनोंमें हजारों चेले होगये और दिनरात चेलोंकी भीड लगने लगी। अब तो केवल नंगाही रहना रहगया बाकीके सब गुण जाते रहे। क्योंकि, रात दिन उनका मन राजोंकी बडाईमें और मुलाकातमें लगा रहे। एक दिन एक महात्मा उनके पास ऐसे वक्तपर गये जिसवक्त वे अकेले पडे थे, महात्माने पूंछा क्या हालचाल है ? उन्होंने कहा बवासीरकी बीमारीसे मरते हैं, महात्माने कहा लोक तो आपको सिद्ध बताते हैं, तब उन्होंने अपने चित्तका सच्चा हाल कहा लोक मूर्ख हैं हमको तो सैकडों वासना भरी हैं, न मालूम हम किस नीच योनिमें जन्मेंगे हमारा तो सब वैराग्य इन धनियोंकी संगतिमें नष्ट होगया। हे चित्तवृत्ते ! निवृत्तिमार्गवालेको प्रवृत्तिमार्गवालेकी संगत खराब करदेती है ॥ ४२ ॥

चित्तवृत्ति कहती है हे विवेकाश्रम ! निवृत्तिवाला पुरुष यदि उपकार करनेके लिये धनी राजोंकी संगत करै तब तो तिसकी कुछ हानि नहीं है। विवेकाश्रम कहते हैं तबभी तिसकी बडी हानि है। इसीमें एक दृष्टान्तको दिखाते हैं:—

हे चित्तवृत्ते ! एक राजाके दर्बारमें एक भांडने तमाशा किया और अनेक प्रकारके स्वांग राजाको दिखाये, राजाने भांडसे कहा एक विरक्त अवधूत महात्माकाभी स्वांग हमको दिखावो। भांडने कहा फिर कभी हम आपको

विरक्तका स्वांग दिखलावेंगे। जब छैः महीना व्यतीत होगया और राजा वह बात भूलगये तब तिस भांड एक दिन एक लंगोटी बांधकर और बदनमें धूली लगाकर अतीव विरक्तकी सूरत बनाकर नगरसे थोडी दूर नदीके किनारे जंगलमें आकर आंख मूँदकर बैठगया। और जो कोई आवै उससे बातचीतभी न करै। कोई आदमी कुछ धरजाय, कोई उठालेजाय, किसीकी तरफभी न देखै। थोडेही दिनोंमें नगरमें तिसके महत्त्वकी बडी चर्चा उठी, अब तो हजारों आदमी तिसके दर्शनको आने लगे। राजातक उसके महत्त्वकी खबर पहुंची। राजाभी परिवारके सहित आये और आकर एक हजार अशरफीकी थैली तिसके आगे धरदी तिसने राजासे कहा राजन् इस उपाधिको उठा लीजिये, यह तो विरक्तके लिये विषके समान है, विरक्तका धर्म नष्ट करनेवाली है। राजाने कहा महाराज! किसी शुभ काममें लगादीजिये। विरक्तने कहा राजन्! आप क्यों नहीं शुभ काममें लगादेते? हम अपने एक हाथमें थुकाकर दसरेके मुहपर मलते फिरैं। लेना और दिलवाना ये तो दोनों बराबरही हैं। जो विरक्त आप नहीं लेता है दूसरेको दिलवादेता है, वह विरक्त नहीं कहा जाताहै। क्योंकि, दूसरा जो देता है वह तो उस विरक्तकोही देता है तिस पर तिसकी श्रद्धा है दूसरेपर तो तिसकी श्रद्धा है नहीं, इसलिये प्रतिग्रहका लेनेवाला वह विरक्त हो जाता है। जो एकसे लेकर दसरेको दिलवाता है वह विरक्त नहीं कहा जाता है, वह दाम्भिक कहा-जाता है। विरक्त, वही है जो न आप द्रव्यको लेता है और न दसरेको दिलवाता है। राजाने कहा सत्य है, राजा अपनी अशरफियोंको लेकर चले आये। दूसरे दिन वह भाँडभी वहाँसे उठगया और अपने घरमें जाकर भांडोंवाली पगडी बांधकर और लंबा अँगरखा पहनकर राजाके दर्बारमें आकर कहने लगा महाराजकी जैजैकार हो इनाम मिलै। राजाने कहा कैसा इनाम! भाँडने कहा कल जो आपने विरक्तका स्वांग देखा है और आप परिवारके सहित हमारे पास आयेथे और एक हजार अशरफीकी थैली आपने मेरे आगे धरदीथी मैंने तिसको नहीं लियाथा और आपको विरक्तका स्वरूप दिखलादियाथा।

उसी स्वांगका मैं इनाम माँगताहूं। राजाने कहा जब कि, हमने तुम्हारे आगे एक हजार अशरफी धर दी थी, तब आपने क्यों न ली ? इतने भारी द्रव्यका त्याग करके अब थोडासा द्रव्य इनाम माँगनेको आया है, यह कौन अकलकी बात है। भाँडने कहा राजन् ! आप तो सत्य कहते हैं, यदि मैं उस वक्त वह द्रव्य ले लेता तब फिर आपके पास इनाम माँगनेको न आता, परन्तु दो बात इसमें होजातीं। एक तो दम्भ साबित होता दूसरा स्वांगको बट्टा लग जाता। फिर वह विरक्तका स्वांग पूरा न उतरता, इन दो बातोंको हटानेके लिये हमने आपसे अशरफियोंकी थैलीको नहीं लियाथा। इसी वास्ते वह स्वांग निर्दोष पूरा उतर गया। राजा उसकी वार्ताको सुनकर बडे प्रसन्न हुए और तिसको बहुतसा इनाम दिया। हे चित्तवृत्ते ! स्वांगका धारण करना तो सहज है परन्तु पूरा उतारना कठिन है॥ ४३ ॥

हे चित्तवृत्ते ! एक नगरके समीप एक जंगलमें महात्मा रहतेथे, एक दिन राजा उनके पास गये और कुछ द्रव्यको राजाने उनके आगे धरकर कहा महाराज ! कोई संसारसे छुडानेवाली वार्त्ताका मेरेको उपदेश करिये। महात्माने कहा राजन् ! इस द्रव्यके तो हम अधिकारी नहीं हैं, इस द्रव्यको तो आप किसी अधिकारीके प्रति दे दीजिये। क्योंकि, हम जंगलमें रहते हैं इसके रखनेकी जगह हमारे पास नहीं है। फिर इस द्रव्यके पीछे कोई चोर हमारी जानकोही लेवैगा, हम लोगोंके लिये यह अनर्थका हेतु है। जब तुम इसको उठा लेवोगे तब हम तुमको उपदेश करैंगे। राजाने द्रव्यको जब उठा लिया तब महात्माने कहा राजन् ! भारी उपदेश हमारा यही है जो हरवक्त मरनेको याद रखना। राजाने कहा मरनेको याद रखनेसे क्या होगा ? महात्माने कहा पुरुषसे जितने पाप होते हैं वह सब मरनेको भुलानेसेही होते हैं जिनको हरवक्त मरना याद रहता है उनसे कोई पाप नहीं होता है। वैराग्यका मूल कारण मरनेको याद रखनाही है राजाने कहा ठीक है ॥ ४४ ॥

हे चित्तवृत्ते ! एक और दृष्टांत तुमको सुनाते हैं:-

एक वैराग्यवान् महात्मा कहींको जातेथे, रास्तामें एक नदी आगई तिस नदीसे पार होनेके लिये बहुतसे लोक नावमें बैठेथे, महात्माभी उनके साथ तिस नावमें बैठ गये. जब कि, नाव किनारेसे खुलकर नदीके बीचमें

पारजानेके लिये चलने लगी तब तिस नावमें एक बद आदमी बैठाथा वह उस महात्माको हँसी दिल्लगीसे मारने लगा, इस कदर उसने महात्माको मारा जो उनके खून बहने लगा । इतनेमें आकाशवाणी हुई । महात्मासे आकाशवाणीने कहा यदि आपका हुक्म हो तो इस नावको डुबो दिया जावे । महात्माने कहा हम ऐसे बुरे हैं जो हमारे सबबसे इतने आदमी नाहक डुबो दिये जाँय ? फिर आकाशवाणीने कहा हुक्म हो तो इस बदमाशको डुबो दिया जाय । महात्माने कहा मैं नहीं चाहताहूँ जो कि मेरे साथका डुबोया जाय । फिर आकाशवाणीने कहा कुछ न्याय तो होना चाहिये । महात्माने कहा इसकी बुद्धि धर्ममें होजावे यही न्याय हो तुरंत उसकी बुद्धि धर्ममें होगई, वह महात्मासे अपनी भूलको बख्शाने लगा । हे चित्तवृत्ते ! जो वैराग्यवान् पुरुष है वह किसीकाभी बुरा नहीं चाहता है ॥ ४९ ॥

हे चित्तवृत्ते ! इसी विषयका औरभी दृष्टांत तुमको सुनाते हैं.

एक नदीमें एक नाव परले किनारेको जातीथी, तिसमें बहुतसे आदमी बैठे थे एक महात्मा परमहंस मुंडित शिरभी तिसमें बैठेथे और उसी नावमें एक साहूकार और एक भाँडभी बैठाथा । जब कि, नाव चली, तब भाँड तमाशा करने लगा और लोकोंको हंसानेके लिये महात्माके शिरपर अपने जूतेको फेरने लगा । बल्कि दो चार जूता तिसने उन महात्माके शिरपर लगाभी दिया महात्मा तबभी कुछ नहीं बोले । उस साहूकारने महात्माको पहचान करके तिस भाँडको डाँटा और महात्मासे कहा मैंने आपको पहंचाना है आप फलाने राजा हैं राज्य छोडकर आपने फकीरी लई है, इस भाँडने जो कि, आपसे बुराई की है, उसको आप माफ करैं । महात्माने कहा इस भाँडने कोईभी बुराई नहीं की है इसने हमारे शिरको दण्ड दिया है, क्योंकि, यह पहले किसीकेभी आगे नहीं झुकताथा, यदि इससेभी अधिक इसको दण्ड मिलता तो अच्छा होता । हे चित्तवृत्ते ! इतनी बडी क्षमा होनी, यह वैराग्यकाही फल है ॥ ४६ ॥

हे चित्तवृत्ते ! एक और वैराग्यवान्की कथाको सुनो–

एक नगरके समीप वनमें कुटी बनाकर एक महात्मा रहतेथे और किसी राजा बाबूसे मुलाकात नहीं करतेथे किंतु अपनी भिक्षा माँगकर क्षुधाकी निवृत्ति कर लेतेथे । राजाने जब लोकोंसे उनके त्यागको सुना तब राजाके भी मनमें उनके दर्शनकी इच्छा हुई । तब राजाभी पालकीपर सवार होकर उनके दर्शनको गये । जब कि, महात्माकी कुटीके समीप पहुँचे तब महात्माने अपना कुटीका दर्वाजा बंद करलिया । राजाने जाकर कितनाही कुटीके किंवाडेको हिलाया और खोलो २ करके पुकारा परंतु महात्माने किंवाडा नहीं खोला । तब राजाने कहा आप धन्य हैं और आपका वैराग्यभी धन्य है क्योंकि आपने इस लोकको लात मारदी है । महात्माने कहा आपभी धन्य हैं और आपका राग भी धन्य है क्योंकि आपने परलोकको लातमारी है ॥ महात्माके उत्तरको सुनकर राजाकोभी वैराग्य हुआ तब महात्माने किवाँड खोल दिया और राजासे कहा हे राजन् ! संसारके भोगोंमें जो राग है वही इस लोक परलोकमें दुःखका हेतु है, इनसे जो वैराग्य है वही दोनों लोकोंमें सुखका हेतु है और रागही अज्ञानका चिह्न है. सो पंचदशी ग्रन्थमें कहा भी है:–

रागो लिंगमबोधस्य चित्तव्यायामभूमिषु ।
कुतः शाद्वलता तस्य यस्याग्निः कोटरे तरोः ॥ १ ॥

चित्तकी विस्तृत भूमियोंमें अज्ञानका चिह्न पदार्थोंमें रागही है । जिस वृक्षके कोटरमें आग लगी हैं तिस वृक्षको हरियालता कैसे होसक्ती है ? किंतु कदापि नहीं ॥

हे राजन् ! जिन पुरुषोंका स्त्री पुत्रादि भोगोंमें राग बना है, उनको नित्य सुखकी प्राप्ति कदापि नहीं होसक्ती है । राजाने कहा महाराज ! गृहस्थाश्रममें रहकर स्त्रीपुत्रादिकोंमें राग तो अवश्यही कुछ न कुछ बनाही रहेगा रागका अभाव तो किसी कालमेंभी नहीं होगा । तब गृहस्थाश्रमीकी मोक्ष कदापि नहीं होनी चाहिये । महात्माने कहा ऐसा नियम नहीं है जो

गृहस्थाश्रममें सदैवकाल स्त्री पुत्रादिकोंमें रागही बनारहे किसीकालमेंभी उनसे वैराग्य न हो। किंतु ऐसा नियम तो है कि, गृहस्थाश्रममें एक न एक दुःख अवश्य बना रहता है उस दुःखके बने रहनेसे कुछ न कुछ वैराग्य भी बना रहता है। क्योंकि, विषयोंमें दुःख बुद्धिही वैराग्यका हेतु है और विषयोंमें सुख बुद्धि रागका हेतु है। जो कि, अतीव मूढ पुरुष हैं उनकोभी यत्किंचित् वैराग्य बना रहता है, परन्तु वह मन्द वैराग्य होता है। जिस क्षणमें स्त्री पुत्रादिकोंमें कोई कष्ट आकर बना तिसी क्षणमें वह अपनेको और संसारको धिक्कार देने लगते हैं, जब कि, वह कष्ट हट जाता है फिर उनका वैराग्यभी नहीं रहता है, वैराग्यका कारण गृहस्थाश्रमही है। क्योंकि जितने बडे २ महात्मा हुए हैं जैसे रामचन्द्रजी वसिष्ठजी आदिक सबको गृहस्थाश्रममेंही वैराग्य हुआ है और जितने कि बडे २ संन्यासी हुए हैं उनकोभी प्रथम गृहस्थाश्रममेंही वैराग्य हुआ है। तत्पश्चात् उन्होंने गृहस्थाश्रमका त्याग करदिया है, बिना गृहस्थाश्रमके तो किसीकी उत्पत्तिभी नहीं होती है। इसलिये गृहस्थाश्रमही सबका मूलकारण है। और ऐसाभी नियम नहीं है जो गृहस्थाश्रममें ज्ञान नहीं होता है। क्योंकि, जनकादिक सब गृहस्थाश्रममेंही ज्ञानी हुए हैं। ज्ञानका कारण वैराग्य है, जिसको गृहस्थाश्रममेंभी सदैवकाल वैराग्य और विचार बना रहता है, उसके ज्ञानी होनेमें कोईभी सन्देह नहीं है और संन्यासाश्रममेंभी जिसका पदार्थोंमें राग बनाहै, उसके अज्ञानी होनेमें भी कोई सन्देह नहीं है। वैराग्यकोही आत्मज्ञानके प्रति साधनता कही है वह ब्रह्मचर्याश्रममें हो, गृहस्थाश्रममें हो, वानप्रस्थाश्रममें हो, या संन्यासाश्रममें हो, विना वैराग्यके ज्ञान नहीं होता है और ज्ञानके विना मोक्ष नहीं होता है, ऐसा वेदने नियम कर दिया है। हे राजन्! जो पुरुष गृहस्थाश्रममें अनासक्त होकर जलमें कमलकी तरह रहता है उसके मुक्तिमें कोईभी सन्देह नहीं है। इसमें जनकजीके दृष्टांतको तुम्हारे प्रति सुनाते हैं:-

जिस कालमें व्यासजीने शुकदेवजीको राजा जनकजीके पास उपदेश लेनेको भेजा है और शुकदेवजीने द्वारपर जाकर अपने आनेकी खबर जन-

कर्जीको भेजी है, तब जनकजीने शुकदेवजीकी परीक्षाके लिये कहला भेजा अभी द्वारपरही ठहरो । जनकजीका यह तात्पर्य था देखें इनको क्रोध होता है या नहीं । तीन दिन शुकदेवजी द्वारपर खडेही रहे और उनको कुछ भी क्रोध न आया । तब जनकजीने चौथे दिन शुकदेवजीको भीतर बुलाया । जब कि, शुकदेवजी भीतर गये तब देखा कि, जनकजी स्वर्णके सिंहासनपर स्थित हैं और सुन्दर २ स्त्रियें चरण दबा रहीं हैं । और मधुर गीतोंको गायन कर रहीं हैं और अनेक प्रकारके भोग खान पानादिक चारों तरफ धरे हैं, बंदीगण स्तुति कर रहे हैं, जनकजीकी विभूतिको देखकर शुकदेवजीके मनमें घृणा उपजी । यह तो भोगोंमें अति आसक्त हैं; यह कैसे ज्ञानी होसक्ते हैं जो मेरेको पिताने उपदेश लेनेके लिये इनके पास भेजा है । जनकजी शुकदेवजीके चित्तकी वार्ताको जान गये, तब जनकजीने एक ऐसी माया रची जो मिथिलापुरीको आग लग गई और बाहरसे दूत दौड आये और उन्होंने कहा महाराज मिथिलाको आग लग गई है और अब द्वारपरभी आगई है थोडी देरमें अन्दर भी आनी चाहती है । तब शुकदेवजीके चित्तमें फुरा बाहर द्वारपर तो हमाराभी दंड कमंडलु पडा है कहीं जलही न जाय । जनकजी जानगये और तिस कालमें जनकजीने इस आगेवाले श्लोकको पढा–

अनन्तवत्तु मे वित्तं यन्मे नास्ति हि किञ्चन ॥
मिथिलायां प्रदग्धायां न मे दह्यति किञ्चन ॥ १ ॥

जनकजी कहते हैं मेरा जो आत्मरूपी वित्त धन है सो अनन्त है अर्थात् तिसका अन्त कदापि नहीं होसक्ता है । इस मिथिलापुरीके दग्ध होनेसे मेरा तो किञ्चित्भी दग्ध नहीं होता है ॥ १ ॥

इस वाक्यसे जनकजीने पदार्थोंमें अपनी अनासक्ति दिखलाई । अर्थात् जनकजीने अपनी असंगताको दिखलाया । तब शुकदेवजीको पूर्ण विश्वास होगया कि जनकभी ब्रह्मज्ञानी हैं, फिर जनकजीने शुकदेवजीको उपदेश किया । महात्मा राजासे कहते हैं यदि जनककी तरह तुम भी आसक्तिको

त्याग करके राज्य करोगे तो तुमभी मुक्त होजावोगे। हे चित्तवृत्ते! राजाभी महात्माके उपदेशको ग्रहण करके ज्ञानवान् होगया॥ ४७॥

हे चित्तवृत्ते! वैराग्यका जनक एक और दृष्टांत तुमको सुनातेहैं। नदीके किनारे पर एक विधवा स्त्रीका मकान था और तिसके समीप राजाकाभी एक बाग था। एक दिन राजा जो अपने बागमें गये तब राजाके मनमें आया यदि इस विधवा स्त्रीका मकान लेकर बागमें मिलाया जावै तो बाग बहुत बडा होजायगा। बडा होजानेसे सुन्दर चौरसभी होजायगा। तब राजाने तिस स्त्रीसे कहा तुम अपना मकान हमको देदेवो स्त्रीने कहा मेरा नहीं पति है एक लडका और एक छोटीसी मेरी लडकी है मैं इनको लेकर कहां जाऊँगी? मैं अपना मकान नहीं देऊंगी। तब राजाने अपने नौकरको हुक्म दिया इस स्त्रीको मकानसे निकालदो। नौकरने मार पीटकर निकाल दिया स्त्रीके पास एक गधा था वह गधेपर लडका लडकीको चढा कर रुदन करती हुई वहांसे चलपडी जब कि, वह रोती २ थोडी दूर गई तब वहांपर एक महात्मा खडेथे उन्होंने स्त्रीसे पूंछा तूं क्यों रुदन करतीहै? स्त्रीने अपना सब हाल उन महात्मासे कहा। महात्माने कहा तू हमारे साथ एक दफा राजाके पास चल हम एक युक्तिसे राजाको समझावैंगे। स्त्री उनके साथ चलपडी जब कि महात्मा राजाके समीप गये, तब राजासे कहा महाराज! इस स्त्रीकी इच्छा है जो थोडीसी मट्टी मेरे मकानके जमीनकी मुझको मिलै जो मैं जहांपर जाकर मकान बनाऊंगी वहांपर इस मट्टीको गाड कर अपने बडोंकी एक समाधि यादगारीके लिये बनाऊंगी, राजाने कहा खोद लेवे, महात्माने बहुतसी मट्टी खोदकर एक बोरामें भरकर राजासे कहा महाराज! इस मट्टीके बोरेको जरा आप उठवाकर गधे पर लदवादीजिये, राजाने कहा क्या इतना भारी मट्टीका बोरा हमसे उठाया जाता है? जो हम इसको गधेपर लदवादें। महात्माने कहा जब कि यह मट्टीका बोरा आपसे नहीं उठाया जाताहै तब इतनी बडी जमीन और मकान आपसे कैसे उठाया जावैगा? जो आपने इसका छीन लिया है फिर इसको किस तरहसे उठाकर आप मरती बार अपने साथ लेजावैंगे, महात्माकी वार्ताको सुनकर राजाको

भी वैराग्य होगया और तिस स्त्रीके मकानको फेर दिया, बल्कि अपना भी बाग तिसीको देदिया, हे चित्तवृत्ते ! संसारमें जोकि मूर्ख अज्ञानी हैं, दूसरोंकी जमीन और धनको अधर्मसे दबालेते हैं, क्योंकि उनको इतना भी ज्ञान नहीं है जोकि यह शरीर भी तो साथ नहीं जायगा तब और पदार्थ कैसे जांयगे ? यदि ऐसा विचार उनको हो तब क्यों दूसरोंकी जमीनको दबालेते ? वही लोक मरकर बार २ पशुयोनिमें जाते हैं और जोकि विचारशील वैराग्यवान् हैं वह ऐसा नहीं करते हैं क्योंकि वह जानते हैं धर्म अधर्मही पुरुषके साथ जाते हैं। और सब माल धन तो मेरे पीछे दूसरे तिसके वारस लेलेतेहैं इसलिये वैराग्यकाही आश्रयण करना उत्तम है॥ ४८ ॥

हे चित्तवृत्ते ! संसारमें पुरुष कौनहै ? और स्त्री कौनहै ? इसपर एक दृष्टांत तुमको सुनातेहैं, एक राजाके घरमें सन्तति नहीं होतीथी बहुतसा यत्न करनेसे एक कन्या तिसके घर उत्पन्न हुई। वह कन्या बाल्यावस्थासेही वस्त्रोंको नहीं पहनती थी जब कि वह बडी होगई तबभी उसकी वही आदत रही वस्त्रोंको न पहरना किंतु नंगीही रहना तिसको पसंद था राजाने कोटिन यत्न किये तब भी तिसने वस्त्र न पहने जब कि जोरसे तिसको वस्त्र पहनाते तब तुरन्त फाड-कर फेंकदेती एकदिन दैवयोगसे वहांपर एक महात्मा साधु आगये उनको देखकर वह लडकी लज्जायमान होगई और तुरंत उसने वस्त्रोंको पहर लिया तब राजाने प्रसन्न होकर अपनी लडकीसे पूंछा आज क्या उत्तम दिन है ? जो आपको सुमति आगई है। भला यह तो बताओ आगे बडे २ हमने यत्न किये तबभी तुमने वस्त्रोंको न पहरा और आज एक साधुको देखकर आपसे आप तुमने वस्त्रोंको पहर लिया इसका कारण क्या है ? उस कन्याने कहा राजन् ! स्त्रीको मर्दसे शरम लज्जा होती है स्त्रीसे स्त्रीको लज्जा नहीं होती है, जबसे मैंने होश सँभाला है, तबसे तुम्हारे नगरमें कोईभी हमको पुरुष नहीं दिखाई पडा, आज हमने एक पुरुषको देखा है उससे हमने लज्जा की है, लज्जा होनेसे मैंने कपडोंकोभी पहन लिया है। हे राजन् ! मर्द नाम उसका है जिसने अपने शरीर और इंद्रियोंको अपने काबूमें कर लिया है और जिसने अपने शरीर और इंद्रियोंको अपने वश नहीं किया है वह मर्द नहीं है। सो

वैराग्यवान्‌से विना दूसरा कोई भी अपने इंद्रियोंको अपने वशमें नहीं करसक्ता है इसलिये वैराग्यवान् पुरुषही मर्द है रागवान् स्त्री है । आज मैंने एक वैराग्यवान्‌को देखा है इसलिये वस्त्रोंको भी मैंने पहन लिया है ॥

हे चित्तवृत्ते ! गार्गीने भी इसी वार्त्ताको याज्ञवल्क्यके प्रति कहा है ॥

आत्मपुराण

अहं पश्यामि विप्रेन्द्र जगदेतदपौरुषम् ।
नपुंसकमहं तद्वदहं स्त्री च पुमानहम् ॥ १ ॥

गार्गी कहती है हे याज्ञवल्क्य ! इस जगत्‌को मैं अपौरुष अर्थात् पुरुषसे हीन देखती हूं मैं ही नपुंसक हूं मैं ही पुरुष हूं मैं ही स्त्री हूं ॥ १ ॥

नपुंसकः पुमान् ज्ञेयो यो न वेत्ति हृदि स्थितम् ।
पुरुषं स्वप्रकाशं तमानंदात्मानमव्ययम् ॥ २ ॥

जो पुरुष अपने हृदयमें स्थित आत्माको नहीं जानता है, कैसे आत्माको जो पुरुषरूप है और स्वप्रकाश आनन्दरूप अव्यय है ॥ २ ॥

अयमेव पुमान् योषिन्नाहं पीनपयोधरा ।
यतः स्वस्मात्परस्तस्य पतिरस्ति स्त्रिया यथा ॥ ३ ॥

गार्गी कहाती है जो पुरुष हृदयमें स्थित आत्माको नहीं जानताहै वही स्त्री है मैं पीनपयोधर स्त्री नहीं हूं क्योंकि जैसे स्त्रीका अपनेसे भिन्न पति होता है, तैसे तिसने भी अपनेसे भिन्न पति मान रक्खा है ॥ ३ ॥

हे चित्तवृत्ते ! जो पुरुष वैराग्यसे और आत्मविचारसे शून्य है, वह पुरुष नहीं है किन्तु शास्त्रदृष्टिसे वह स्त्री है ॥ ४९ ॥

हे चित्तवृत्ते ! अब तेरेको एक प्रमादी धनीकी कथाको सुनाते हैं:—

दक्षिण देशके एक नगरमें धनमदांध एक बनियां रहता था, अपने तुल्य किसीकोभी वह बुद्धिमान् और धनी नहीं जानता था । दिन रात्रि द्रव्यके ही कमानेके फिकरमें रहता था और कभी भी किसी साधु ब्राह्मणको भोजन नहीं कराता था । दैवयोगसे एक दिन एक महात्मा उस

रास्तासे आनिकले कि जहाँपर उसकी दूकान थी । महात्मा उसकी दुकानके सामने जाकर खडे होगये और तिस बनियेंकी तरफ देखने लगे वह बनियां अपने धनके मद करके ऐसा उन्मत्त था जो उसने आँखको उठाकर महात्माकी तरफ न देखा, क्योंकि धनमद बडा भारी होताहै आत्मपुराणमें कहा है:—

समर्थः श्रीमदांधोयं राजानं देवतां गुरुम् ।
अवजानाति सहसा स्वात्मनो बलमाश्रितः ॥ १ ॥

जो पुरुष समर्थ है और धनके मद करके अंधा होरहा है, वह अपने बलको आश्रयण करके राजाकी, देवताकी तथा गुरुकी भी अवज्ञा कर देता है ॥ १ ॥

समर्थो धनलोभेन परदारान् धनादिकम् ।
हृत्वा चोपहसत्यन्यान्सर्वशोच्यो नराधमः ॥ २ ॥

जो समर्थ धनी है वह धनके लोभ करके दूसरोंकी स्त्रियोंको और धनादिकोंको भी जबरदस्ती छीन लेता है और हँसता है वही पुरुषोंमें अधम है ॥ २ ॥

मातरं पितरं पुत्रान् ब्राह्मणांश्च बहुश्रुतान् ।
कर्मणा मनसा वाचा समर्थो हंति मोहितः ॥ ३ ॥

धनमदांध समर्थ जो है सो माता, पिता, पुत्र और ब्राह्मण वेदपाठीको कर्म करके मन करके वाणी करके मारता है ॥ ३ ॥

फिर महात्माको दया आई क्योंकि महात्माका दयालु स्वभाव होताही है महात्माने मनमें कहा इस कीचसे इसको निकालना चाहिये ऐसा विचार करके उस साहूकारसे कहा राम राम कहो. वह साहूकार बोलाही नहीं, जब कि दो तीन बार कहनेसेभी वह नहीं बोला तब महात्माने सोचा यह भारी मूर्ख है इस तरहसे यह नहीं मानेगा, इसको दण्ड दिया जावैगा तब यह मानैगा ऐसा विचार करके महात्मा नदीके तीरपर चलेगये । सबेरे वह

साहूकारभी नदीके तीरपर स्नान करनेको जाताथा दूसरे दिन सबेरे जब कि साहूकार नदीपर स्नान करनेको गया तब महात्माने अपने योगबलसे अपनी उस बनियांकी तरह सूरत बनाली वह तो अभी स्नानही उधर करने लगा इधर महात्मा तिसके घरकी तरफ आये आगे लडकोंने देखा पिताजी आज जल्दी स्नान करके चले आये हैं उन्होंने पूँछा आज जल्दी आनेका क्या कारण है ? उन्होंने कहा आज एक ठग हमारी सूरत बनाकर आवैगा हम देख आये हैं वह नदी किनारे पर बैठा बनाता था तुम लोगोंने होश्यार रहना अभी थोडी देरमें वह आवेगा उसको धक्के देकर निकाल देना यदि कुछ बोले तब दो चार जूता लगाना लडकोंसे ऐसे कहकर वहतो भीतर जाकर पलंगपर लेट रहे । उधर सेठजी स्नान करके घरको चले जब कि समीप घरके पहुँचे तब लडकोंने डाटा क्यों तुम इधरको आते हो ? सेठने कहा बेटा मैं अपने घरको आता हूं तुम हमारे लडके हो मैं तुम्हारा बाप हूँ आज क्या तुमको कोई पागलपना तो नहीं होगया जो तुम हमको ऐसा कठोर शब्द बोलते हो । लडकोंने कहा हम तुम्हारे लडके नहीं हैं, जिसके हम लडके हैं वह घरमें बैठे हैं तुमतो कोई बहुरूपिया हो । हमारे बापका स्वांग बनाकर हम लोगोंको वंचन करनेके लिये आयेहो । सूधी तरहसे पीछेको लौट जावो नहीं तो मार खाकर जावोगे ज्योंही सेठ आगेको बढा त्योंही दो चार धक्के लगा दिये तब सेठने गुस्सेमें आकर ज्योंही लडकोंको गाली दी त्योंही एक लडकेने दशपांच जूते सेठके सिर पर लगादिये अब तो सेठजी भागे और जाकर राजाके पास सब अपना हाल कहा राजाने सेठके लडकोंको बुलाकर जब पूँछा तब उन्होंने कहा हमारा बापतो हमारे घरमें है यह तो कोई बहुरूपिया है राजाने घरवाले उनके बापको बुलाकर देखा तो दोनोंकी एकही तरह सूरत दिखाई पडी किसी अंगमेंभी यत्किञ्चित् फरक नहीं था तब राजा बडे शोचमें पडे अब किसको सच्चा कहा जावे और किसको झूठा कहाजावे । महात्माने कहा राजन् ! यदि यह असली सेठ हैं तब यह इस वार्ताको बतावें बडे लडकेकी शादीमें कितना रुपैया लगाथा, जब कि मकान बना था तब मकानपर कितना रुपैया लगा था राजाने

सेठसे पूँछा सेठने कहा हमको याद नहीं है महात्माने योगबलसे सब जबानी बतला दिया जब कि वही खाता देखा गया तब वह ठीक निकला राजाने भी सेठको झूठा करके निकाल दिया । अब तो सेठजीका सब धनका मद उतर गया और नदीके किनारे पर जाकर अपने भाग्यको धिकार देकर रोने लगे । दूसरे दिन महात्मा सबेरे नदीपर स्नान करनेको जब गये तब देखा सेठजी रुदन कररहे हैं और बडे दुःखी होरहे हैं तब महात्माने अपना असली रूप बना लिया और सेठके पास जाकर ऐसा कहा राम राम कहो महात्माके वाक्यको सुनकर सेठ कांपने लगा और राम राम करके पुकारने लगा जब कि सेठ बार २ रामको प्रेमसे कहने लगा तब महात्माने सेठसे कहा अब तू धक्के और जूते खाकर राम राम करने लगा है यदि पहलेसेही तू राम नामसे प्रेम रखता तब क्यों जूते खाकर घरसे निकाला जाता ? जिन लडकोंके सुखके लिये तुमने अनर्थोंसे धनको जमा किया था उन्ही लडकोंने तेरेको जूते मारकर निकाल दिया है फिर जो उनसे तू राग करेगा तब आगेसे भी अधिक जूते खायगा. अरे मूर्ख ! तूने अपना जन्म व्यर्थ खो दिया अब तो वैराग्यको प्राप्तहो. महात्माके चरणोंपर सेठ गिरपडा तब महात्माने कहा जो तुम्हारे घरमें सेठ घुसेथे तुमको दण्ड दिलानेके लिये सो हमहीं हैं अब तुम अपने घरमें जावो और आनन्दसे रहो परन्तु उन्माद मत करना धर्म करना सत्संग करना ऐसा उपदेश करके महात्मा तो चले गये और सेठ घरमें आकर उसी दिनसे वैराग्यपूर्वक धर्म करने लगा और महात्माओंकी सेवा करने लगा ॥ ९० ॥

हे चित्तवृत्ते ! एक और आलसी बनियेंकी कथा तुमको सुनाते हैं ॥

हे चित्तवृत्ते ! पूर्वदेशके एक नगरमें एक बनिया बडा धनी रहता था धनके कमानेमें और संग्रह करनेमें तो वह बडाही निपुण था, परन्तु भजन स्मरणमें बडा आलसी था, किसी क्षणमें भी वह वैराग्यको प्राप्त न होता और न कभी मुखसे राम इस नामका उच्चारण करता था, परन्तु तिसकी स्त्री बडी विचारवाली थी, और भजन स्मरणमें तथा उदारतामें भी वह एक ही

थी, वह नित्यही पतिसे कहाकरे हे स्वामिन् ! यह मनुष्यशरीर विषयभोगोंके लिये नहीं है यह परमेश्वरकी भक्ति करनेके लिये है आपभी नित्य एक दोघडी भजन स्मरण किया करें क्योंकि बार २ यह शरीर मिलना कठिन है तब बनियांने कहा कोई जल्दी नहीं है भजन स्मरणभी कर लेवैंगे । इसी तरह कहते सुनते बहुत काल बीतगया एक रोज बनियां बीमार होगया स्त्रीसे बनियांने कहा किसी वैद्यको बुलावो स्त्रीने एक वैद्यको बुलाया वैद्यने आकर बनियांका हाथ देखकर दवाई लिखदी और तिसका अनुपानभी बता दिया । स्त्रीने दवाईको मँगाकर ताखे पर धर दिया, दिन भर बीत गया बनियांको दवाई तिसने न दी, तब संध्याके समय बनियांने स्त्रीसे कहा औषधिको आपने मँगाया है वा नहीं स्त्रीने कहा औषधिको मँगाकर मैंने रखा है, बनियाने कहा तिसको तू मेरे प्रति देती क्यों नहीं है ? स्त्रीने कहा कुछ जल्दी नहीं है आज न दी जायगी कल दी जायगी, कल न दी जायगी परसों दी जायगी । कभी तो दी जायगी । बनियांने कहा यदि मैं मरगया तब वह औषधि हमारा क्या काम देगी ? स्त्रीने कहा मरनेको तो आप मानते नहीं हैं यदि मानते होते तब मैं जब आपको भजन स्मरणके लिये कहती थी आप यही कह देते थे कोई जल्दी नहीं है, फिर होजायगा । यदि आपको मरना याद होता तब ऐसा न कहते क्योंकि क्या जाने फिर तबतक शरीर रहै या न रहै, आज औषधीके लिये आप मरनेको भी याद करने लगे हैं । यदि इस जन्ममें न भी औषधि दी जायगी तब दूसरे जन्ममें दी जायगी यदि कहो औषधिकी हमको इसी जन्ममें जरूरत है, क्योंकि वर्तमान दुःख तिसके बिना दूर नहीं होता है । तब भजन स्मरणकी भी तुमको इसी जन्ममें जरूरत है फिर क्या जाने कहीं पशु आदि योनि मिल जावेगी तब उस योनिमें तो होना कठिन है । स्त्रीके उपदेशसे बनियांको भी वैराग्य हुआ और भजन स्मरणमें लगा स्त्रीने औषधि पिलादी वह अच्छा भी होगया । हे चित्तवृत्ते ! विना वैराग्यही पुरुषका मन भजन स्मरणमें भी नहीं लगता है इसलिये वैराग्यही कल्याणका कारण है ॥ ९१ ॥

हे चित्तवृत्ते ! बिना वैराग्यके देहादिकोंमें जो अभिमान होरहा है वह भी दूर नहीं होता है । इसीपर तुमको एक महात्माके दृष्टांतको सुनाते हैं ।

एक महात्मा गुरु और एक उनके चेला दोनों देशाटन करते फिरते थे। एक दिन रास्तेमें चलते २ चेलेने गुरुसे कहा महाराज ! कुछ उपदेश करिये गुरुने कहा बेटा कुछ बनना नहीं जो पुरुष कुछ बनता है वही मारा जाता है जो कुछ भी नहीं बनता है उसको कालभी मार नहीं सक्ता है । चेलेने कहा सत्य वचन । आगे थोडी दूरपर सडकके किनारे एक राजाका बाग था उस बागमें एक बडी भारी कोठी बनी थी उसी बागमें गुरू चेला चले गये और तिस कोठीमें जाकर एक कमरेके पलँगपर गुरू सो रहे । दूसरे कमरेके पलँगपर चेला सो रहा । जब कि तीसरा पहर हुवा तब राजा हवा खानेके लिये तिस बागमें आये प्रथम उस कमरेमें गये जिसमें चेला पलँगपर सोया था तिसको देखकर राजाके सिपाहीने कहा अरे तू कौन है? जो महाराजके पलँगपर सो रहा है । चेलेने कहा मैं साधु हूं सिपाहीने कहा तू कैसा साधु है, तूतो बडा मूर्ख है, जो महाराजके पलँगपर आकर सो रहा है, दो चार थप्पड लगाकर तिसको बाहर निकाल दिया, फिर राजा घूमते फिरते उस कमरेमें जा निकले जिसमें गुरू पलँगपर सोयेथे, सिपाहीने जाकर कितनाही पुकारा परन्तु वह आगेसे बिलकुल न बोले । जब कि, सिपाहीने पकडकर हिलाया तब आंख मलते २ उठे परन्तु मुखसे कुछ भी न बोले तब राजाने सिपाहीसे कहा तुम इनको कुछ मत कहो माळूम होता है यह कोई महात्मा है । इनको बागसे बाहर कर देवो सिपाहीने उनका हाथ थामकर उनको बागसे बाहर कर दिया रास्तामें जाकर दोनों गुरू चेला फिर मिले तब चेलाने गुरूसे कहा महाराज ! हमको तो बडी मार पडी है गुरूने कहा कुछ बना होगा चेलेने कहा मैं कुछ बना तो नहीं था कहा था मैं साधु हूं, गुरूने कहा फिर साधु तो बना जो कुछ बनता है वह माराजाता है । देखो हम कुछ भी नहीं बनेथे इस- लिये हम मारे भी नहीं गये हैं । महात्मा वही है, जो कुछ भी नहीं बनता है कि, जो मान और प्रतिष्ठाके लिये विरक्त और अवधूत बनते हैं वह भी

मारे पीटे जाते हैं क्यों कि जो कुछ बनते हैं और अपनेको मानी और प्रतिष्ठित मानते हैं, वेही मारे पीटे जाते हैं । क्योंकि उनमें अनेक प्रकारकी कामना भरी रहती हैं। इसीसे वह आडम्बर करके मानके लिये चेले चाटियोंको बढाते वह शास्त्र दृष्टिसे महात्मा नहीं कहे जाते हैं, शास्त्रदृष्टिसे वही महात्मा है जो निष्काम है ॥ ९२ ॥

हे चित्तवृत्ते ! इसी अभिमानपर तेरेको एक और दृष्टांत सुनाते हैं:—

पञ्जाबके मालवा देशके एक ग्रामसे हरद्वारके मेलेपर बहुतसे लोक जाने लगे । तब उस ग्रामके निवासी एक चमारने जिमीदारोंसे कहा मैं भी आपके साथ हरद्वारके मेलेपर जाऊँगा। जिमीदारोंने कहा तू भी चल वह चमार भी उनके साथ हरद्वारपर गया और सबके साथ तिसने भी गंगामें स्नान करके पंडोंको दान यथाशक्ति दिया । पंडे फिर सब यात्रियोंको अक्षयवटके नीचे लेगये और सबसे यह वार्ता कही तुम सब कोई इस वटके नीचे एक २ फलको छोड देवो सबने एक २ फलको छोड दिया । फल छोडनेका यह तात्पर्य है जिस फलको लोक वहांपर छोड आते हैं अर्थात् जिस फलका त्यागकर देते हैं फिर उस फलको नहीं खाते हैं । चमारसे फल छोडनेके लिये पण्डेने कहा तब चमारने कहा मैं आजसे बोझा ढोना छोडदेताहूँ । आजसे फिर कभी भी मैं बोझा नहीं ढोवोंगा चमारने और पण्डेने जाना वोझा ढोना भी कोई फल ही होगा। वहांसे फिर जब सब यात्री अपने २ घरोंको आये तब चमारभी उनके साथ अपने घरको लौट आया। और अपने घरमें आनन्दसे रहने लगा । कुछ दिनके पीछे जब कि बिगार पडी तब सिपाहियोंने आकर उसी चमारको बिगारी पकडा चमारने उनसे कहा मैं हरिद्वार अक्षयवटके नीचे बोझा ढोनेको छोड आयाहूँ, सिपाहियोंने उसकी बातको न समझा और तिसको पकडकर जबकि लेचले तब चमारने कहा तुम लंबरदारोंसे चलकर पूछ लेवो मैं हरद्वारपर बोझा ढोना छोड आयाहूँ। चमार सिपाहियोंको नंबरदारके पास लेगया और उनसे कहने लगा लंबरदार साहिब मैं आपके सामने धर्मसे कहताहूँ कि, हरिद्वारपर बोझा ढोना छोड आयाहूँ

और यह सिपाही इस बातको नहीं मानते हैं आप इनको समझा दीजिये लंबरदारोंने कहा बोझा ढोना तो तुम छोड आयेहो, परन्तु चमारपना तो तुमने नहीं छोडा है जबतक तुम्हारेमें चमारपना रहैगा तबतक तुमको बोझा ढोना पडेहीगा । फिर सिपाही तिसको पकडकर लेगये । हे चित्तवृत्ते ! यह तो दृष्टांत है दार्ष्टांतमें यह जो चरमका स्थूल शरीर है, तिसके अभिमानीका नामही चमार है, जाती आदिक जो कि शरीरके धर्म हैं उनको जो आत्माके धर्म मानता है वही चमार है । अभिमानसे जो रहित है वही ज्ञानी है ॥ ९३ ॥

हे चित्तवृत्ते ! विवेक वैराग्यके विना ज्ञानवान् भी शोभाको नहीं पाता है इसीपर एक दृष्टांत तुमको सुनाते हैं:—

उत्तरखंडमें एक धर्मात्मा राजा रात्रिके समयमें भेष बदलकर अपने नगरमें नित्यही घूमता था जिसको वह गरीब दुःखी जानलेता उसके दुःखको धन देकर दूर कर देता । एक दिन रात्रिके समय एक अँधेरी गलीमें राजा ज निकला और अँधेरेमें खडा होकर एक गरीब घरवालोंकी बातोंको सुनने लगा उस घरवाले बडे गरीब थे नित्यकी मजदूरीसे अपना पेट भरते थे उस दिन उनको कहींसे मजदूरी नहीं मिली थी. वह परस्पर अपने दुःखकी बातोंको कह रहे थे । राजाने उनके भीतर जरासा ताक दिया उन्होंने जाना कोई बाहर चोर खडा है, आकर उन्होंने राजाको पकड लिया और मारने लगे चोरका आवाज सुनकर इधर उधरसे दो चार आदमी बत्ती लेकर आये जब चांदनेमें उन्होंने देखा तब उनको मालूम हुआ कि, चोर नहीं है यह तो राजा है तब अपनी भूलको दरशाने लगे राजा अपने घरमें चले गये । हे चित्तवृत्ते ! यद्यपि वह राजाही थे तथापि राज्यकी सामग्री जो कि, छत्र चामरादिक हैं उनके न होनेसे उन्होंने मार खाई क्योंकि छत्र चामरके बिना वे राजा जान नहीं पडते थे वैसे ही ज्ञानवान्के चिह्न भी छत्र चामरादिक विवेक वैराग्य हैं इनके विना ज्ञानवान् भी शोभाको नहीं प्राप्त होता है और दुर्जनोंके कुवाक्यरूपी मारको खाते हैं इस लिये ज्ञानवान्को भी वैराग्ययुक्त रहना चाहिये ॥ ९४ ॥

हे चित्तवृत्ते ! एक और वैराग्यवान् राजाकी कथाको तुम सुनोः—

एक राजा बडा धर्मात्मा और सत्संगी था राज्य करते २ जब कि, उसको बहुत काल व्यतीत होगया तब एक दिन उसको राज्यसे बडी ग्लानि हुई क्योंकि, राज्यके प्रबन्ध करनेमें अनेक प्रकारके विक्षेप नित्यही बने रहते हैं । राजाको जब वैराग्य हुआ तब उसने अपने पुत्रको राज्य सिंहासन देदिया और आप वनमें जाकर तप करने लगा ! राजाने जब राज्यको त्याग दिया तब उसके त्यागकी बडी चरचा फैली उसके राज्यके समीप एक दूसरे राजाका राज्य था तिस राजाको भी मालूम हुआ कि, अमुक राजाने राज्यको त्याग दिया है तब इस राजाको तिसके मिलनेकी इच्छा हुई यह राजा वनमें शिकारके बहानेसे जाकर तिसकी खोज करने लगे खोजते २ एक वनमें एक वृक्षके नीचे बैठे उनको देखकर राजाने दंडवत् प्रणाम किया और समीप बैठकर क्षेम कुशलको पूंछा तत्पश्चात् कुछ सत्संगकी बातें होनेलगीं जब कि, राजा आने लगे तब राजाने कहा भगवन् ! एक मेरी प्रार्थना है वह यह है जो आप कल सवेरे मेरे गृहमें चलकर भोजन करैं इस मेरी इच्छाको आप पूर्ण कर दीजिये उन्होंने कहा अच्छा कल हम आपके घरपर सवेरे आकर भोजन करैंगे । राजा अपने मकानपर चले आये दूसरे दिन सवेरे राजाने अपने भृत्योंको रास्तामें खडा करदिया और कहा जिस कालमें वह महात्मा आवें तुरन्त हमको खबर करनी । जब कि, जंगलसे वस्तीकी तरफको आये उनको दूरसेही आते देखकर राजाके भृत्योंने जाकर कहा महात्माजी चले आते हैं राजा उनकी पेशवाईको गये और उनको लाकर अपने सिंहासनपर बैठाया थोडी देरके पीछे राजाने अपने मन्त्रीसे कहा महात्माको लेजाकर हमारी विभूति सब दिखलादेओ मन्त्रीने महात्माको लेजाकर जितने कि, उत्तम २ राजाके घोडे हाथी और जवाहिरात वगैरह पदार्थ थे वे सब दिखलादिये राजाने वजीरसे पूंछा महात्मा सब पदार्थोंको देखकर कुछ बोले थे वजीरने कहा कुछ भी नहीं बोले थे इतनेमें राजाका भोजन तैयार होगया ॥

राजा महात्माको भीतर लेगये और एक आसनपर बिठाकर आप दूसरे आसनपर बैठे । रानीने दो थालोंमें भोजन परोसकर दोनोंके आगे धर

दिया । एक २ थालमें चार २ बाजरेके पिसानकी रोटी और थोडा बथुवेका साग । महात्मा भोजनको देख करके हंसे तब राजाने कहा आप हमारे हाथी घोडे और खजाने वगैरहको देखकर नहीं हंसे हैं अब इस भोजनको देखकर आप क्यों हंसते हैं कुछ कृपणताके सबबसे ? मैं ऐसा मोटा खाना नहीं खाता हूँ इस मोटे खानेका सबब यह है मैं राज्यसम्बन्धी खजानेसे एक पैसाभी नहीं लेताहूँ क्योंकि राज्यके अंशको मैं अच्छा नहीं समझताहूँ ये जो हमारे घरके पीछे पांच दस बीघा जमीन है इसमें मैं और रानी दोनों मिलकर खेती करते हैं उसमें जो कुछ उपजता है उसीको हम खाते हैं । इसीसे हमारा खाना मोटा है । महात्माने कहा तुम धन्य हो और तुम्हारा वैराग्यभी धन्य है । एक तो वह लोक है हम सरीखे जिन्होंने राज्यको त्याग करके फकीरी ली है । तबभी उनको फकीरीकी लज्जत नहीं मिली है । एक आप सरीखे हैं जो कि अमीरीमें फकीरी कर रहे हैं । अमीरीमें फकीरी करनी बडे शूरोंका काम है इसी वार्तापर हम हंसे हैं । हे चित्तवृत्ते ! वैराग्यवान् घरमेंभी रहकर शोभाकोही पाता है । रागवान् वनमें रहकरके भी शोभाको नहीं पाता है ॥ ९९ ॥

हे चित्तवृत्ते ! अप्राप्त पदार्थके त्याग करनेवाले पुरुष तो संसारमें बहुतही हैं और वह त्यागी भी नहीं कहे जाते हैं । त्यागी वही कहा जाता है जिसको पदार्थ मिले और तिसको त्याग देवे वही त्यागी है । सो ऐसे सच्चे त्यागी संसारमें कम हैं क्योंकि, विना तीव्र वैराग्यके सच्चा त्याग नहीं होसक्ता है । अब हम तुमको सच्चे त्यागीके इतिहासको सुनाते हैं:-

एक राजा सालके साल जन्माष्टमीपर एक हजार ब्राह्मणोंको भोजन कराता था एक समय राजाने जन्माष्टमीका उत्साह किया और ब्राह्मणोंको नेवता भेज दिया जन्माष्टमीके व्रतके दूसरे दिन जब कि, भोजनका समय हुआ, तब दूर २ के ब्राह्मण भोजनके लिये आने लगे । दैवयोगसे एक तपस्वी ब्राह्मणभी कहींसे आ निकले । राजा जब सब ब्राह्मणोंके चरण धोता२ उनके पास गया और उनके चरणोंको धोने लगा तब उनके चरणोंको मट्टीमें लिपटेहुए देखकर और नीचेसे फटे हुए देखकर राजाने कहा महाराज ! आपके चरण तो बडे खौरे हैं । वह तपस्वी ब्राह्मण बोले राजन् ! तुमने कभी ब्राह्मणोंके

चरण नहीं धोये हैं । तुम पतुरियोंके चरण धोते रहे हो, इसलिये तुमको ब्राह्मणोंके चरणोंकी परीक्षा नहीं है ब्राह्मणके इसीतरहके वचनको सुनकर राजा चुप होगये जब कि, राजा सबके चरण धो चुके तब पत्तल सबके आगे बिछाई गई सब भोजन करने लगे । प्रथम यह चाल थी कि, जब कि ब्राह्मण भोजन करलेते तब भोजनवाला कहता एक २ लडुवा और लीजिये चार आना एक लडुवाकी दक्षिणा मिलेगी जब कि, एक२ सब खा लेते तब आठ आना करदेते, फिर बारह आना फिर एक रुपयातक एक लडुआके खानेका और दक्षिणा देते थे राजाने भी ऐसेही किया और ब्राह्मणभी तृप्तिका भोजन नहीं करतेथे क्योंकि, दक्षिणाके लोभसे और खानेकी जगा पेटमें रख लेते थे इस तपस्वी ब्राह्मणने एक ही बार अपना तृप्तिका भोजन करलिया और आचमन करके बैठरहे इतनेमें राजाने कहा एक लडुवाका चार आना मिलैगा अर्थात् जो एक लडुवा और खायगा उसको चार आना दक्षिणा और बेशी मिलैगी सब ब्राह्मण खाने लगे जब कि, एक २ खाचुके, तब राजा आठ आना बोले फिर बारा आना बोले, फिर एक रुपैया बोले सब ब्राह्मण खाते ही रहे जब कि, राजाने इस तपस्वी ब्राह्मणकी तरफ देखा तो यह चुपचापसे बैठेथे । राजाने इनसे कहा महाराज ! सब ब्राह्मण तो भोजन करते हैं, आप क्यों नहीं करते हैं ब्राह्मणने कहा राजन् ! हम तो एक बार ही भोजन करते हैं सो हमने भोजन करके आचमन कर लिया है । अब बार २ हम भोजन नहीं करते हैं । राजाने कहा यदि आप एक लडुवा और भोजन करैं तब आपको मैं पांच रुपैया दक्षिणा देऊंगा । ब्राह्मणने नहीं माना तब राजा दश रुपैया बोला तब भी तिसने नहीं माना, राजा बढने लगे बढते २ एक हजार रुपैया एक लड्डुवा खानेके बदलेमें राजाने कहा । तब ब्राह्मणने कहा यदि लाख रुपैयाको भी आप देवैंगे तब भी मैं अपना धर्म नहीं छोडूंगा अर्थात् आचमन किये पीछे और लड्डू दूसरी बार नहीं खाऊंगा । तब राजाने कहा देखो ऐसा दाता नहीं मिलैगा, जो एक लड्डूके बदले एक हजार रुपैया देता है । ब्राह्मणने हँसकर कहा हमको तो आप सरीखे दाता बहुतसे मिले हैं और मिलैंगे परन्तु आपको भी ऐसा त्यागी ब्राह्मण नहीं मिलेगा राजा चुप होगये ।

ब्राह्मण हाथ धोकर चल दिया । कितनाही राजाने उनके रखनेके लिये जोर लगाया परन्तु वह नहीं रहे । हे चित्तवृत्ते ! पूर्वकालमें ऐसे २ वैराग्यवान् त्यागी ब्राह्मण होतेथे उन्हींमें ब्रह्मदेश चमकता था, उन्हींका वर शाप लगता था, वही ज्ञानी कहे जाते थे । जबसे ब्राह्मणोंमें त्याग और वैराग्य जाता रहा तबसे ब्रह्मतेजभी नष्ट होगया और वर शापका भी लगना दूर होगया । हे चित्तवृत्ते ! पूर्ण वैराग्यवान्मेंही इतना बडा त्याग रहसक्ता है, यह वैराग्यकाही फल है ॥ ९६ ॥

हे चित्तवृत्ते ! सचे त्यागीकी कथाको तुमको सुना दिया है, अब झूठे त्यागीकी कथाकोभी तुम सुनोः—

एक नगरके बाहर एक बाबाजी कुटी बनाकर रहने लगे और दो तीन उनके साथ चेले थे । वहभी उनकी सेवाके लिये उनके पास रहतेथे । चेलोंने बाबाजीको सिद्ध और त्यागी लोकोंमें प्रसिद्ध कर दिया और लोकोंमें उनकी झूठी २ सिद्धियोंको मशहूर करके लोकोंको फसाने लगे । जो कोई पुरुष बाबाजीके आगे द्रव्य लाकर रक्खे चेले तिसको कहें इसको मत रक्खो बाबाजी त्यागी हैं द्रव्यको न लेते हैं न छूते हैं । अब बाबाजीके त्यागकी चरचा नगरमें फैली, क्योंकि पीरोंको मुरीद लोकही उडाते हैं और विना दलालोंके दुकान चलतीभी नहीं है । तिस नगरमें एक बनिया बडा धनिक रहताथा, परन्तु कृपण वह अव्वल दरजेका था, कभीभी किसी गरीबको तिसने एक टका नहीं दिया था । उस बनियाने जब कि, बाबाजीके त्यागका महत्त्व सुना तब तिसके मनमें आया हमभी चलकर बाबाजीके आगे एक हजार रुपैयाकी थैली धरदें बाबाजी तो लेवेंगे नहीं, परन्तु उदारतामें हमाराभी नाम हो जावैगा । बनियांभी एक हजार रुपैयोंकी थैली लेकर बाबाजीके पास गया और दण्डवत् प्रणाम करके थैलीको बाबाजीके आगे धरदिया । बाबाजीने कुटीमें तिस थैलीके रखनेका इशारा किया चेलेने थैलीको उठाकर भीतर कुटीके धर दिया । अब बनियांके होश बिगडे । मनमें कहताहै यह तो द्रव्यको लेते नहीं थे अब क्या हुवा हमारा तो मतलब दूसरा था यहां तो औरका औरही होगया । फिर कहने लगा बाबाजी हमसे हँसी

करते होंगे, शायत थोडी देरमें देदेवेंगे जब कि, दो चार घडी व्यतीत होगई और बाबाजीने रुपैयोंकी थैली तिसको वापस न दी तब बनियांसे रहा न गया बनियाँने कहा महाराज ! हमने तो सुनाथा आप द्रव्यका ग्रहण नहीं करतेहैं वह तो बात झूठी निकली क्योंकि द्रव्यको आपने अब ले लियाहै, बाबाजीने कहा भाई एक या दो दश बीस रुपैयाको हम ग्रहण नहीं करते हैं आजतक किसीने भी हमारे आगे हजार रुपैयाकी थैली नहीं रक्खी थी, यदि कोई रखता और हम न लेते तब तो हम न झूठे होते। आपने आज प्रेमपूर्वक हजार रुपैयाकी थैली भेंट की है, हमने भी तुम्हारा प्रेम रखनेके लिये उठा ली है। किसी शुभकर्ममें इसको हमभी लगा देवेंगे, अब तुम पश्चात्ताप मत करो नहीं तो तुम्हारा पुण्य निष्फल होजायगा। बनियां माथा ठोंककर चलदिया। इधर बाबाजीका मतलब होगया, बाबाजी भी चलदिये। हे चित्तवृत्ते ! ऐसे २ पाखंडोंको करके जो लेनेवाले हैं वे झूठे त्यागी हैं, क्योंकि वे वैराग्यसे शून्य हैं ॥ ९७ ॥

हे चित्तवृत्ते ! अब हम तुमको वंध्यज्ञानियोंके इतिहासोंको प्रथम सुनातेहैं तत्पश्चात् सच्चे ज्ञानियोंके इतिहासोंको सुनावेंगे:—

पंजाब देशके किसी ग्राममें एक निर्मल संत रहतेथे और सवेरे वह वेदांतकी कथा करतेथे। बहुत लोग उनकी कथा सुननेको आते थे, निर्मल संत भाईजी करके तिस देशमें बोले जाते हैं और उनके नामके आदिमें भाईजी शब्द जोडा जाता है। दोपहरके वक्त वह स्त्रियोंको पढाते थे। सब लोग उनको ज्ञानवान् जानतेथे। एक दिन दोपहरके वक्त वह एक युवतीको संथा दे रहेथे तिस युवतीके रूपको देखकर उनका मन चलायमान होगया, क्योंकि कामदेव बडा बली है तब वह धीरे २ तिसकी छातीपर हाथ फेरने लगे युवतीने पीछे हटकर कहा। हाय हाय ! क्या आप करने लगे हैं। अभी तो आपने हमको विचारसागरमें पढाया है कि स्त्रीका स्पर्श करनेसे बडा भारी पाप होताहै और भाईजी ! इसी ग्रन्थमें कितनी बडी स्त्रीकी निंदा लिखीहै और स्त्रीके संगसे अनेक प्रकारके दोष दिखाये हैं। क्या आपने उन सबको भुलाया है ? जब युवतीने

ऐसे २ वाक्य कहे तब महात्मा भाईजी कहने लगे हम तो तुम्हारी परीक्षा करतेथे जबतक देहमें अध्यास बना रहता है तबतक पक्का ज्ञान नहीं होताहै हम इस वार्ताकी परीक्षा करतेथे । तुम्हारे देहमें अध्यास है, वा नहीं सो आज हमको मालूमें होगया तुम्हारे देहमें अध्यास बना है, तुमको अभी पक्का ज्ञान नहीं हुवा है । युवतीने कहा तुम्हारा तो अभी देहमें अध्यास छूटाही नहीं है । यदि तुम्हारे देहमें अध्यास न होता तब तुम हमको हाथ भी न लगाते कामातुर होकर तुमने हमको हाथ लगाया है अब बातें बनाते हो, तुम संत नहीं हो, कुसंत हो इस तरहके वाक्योंको कहकर वह युवती अपने घरमें चली गई और भाईजीने भी लज्जाके मारे तिस ग्रामको छोड दिया । हे चित्तवृत्ते ! ऐसे २ जो पुरुष हैं वही वंध्यज्ञानी कहे जाते हैं। इसीवास्ते शास्त्रोंमें स्त्रीके संसर्गका निषेध किया है ।

आत्मपुराणके सातवें अध्यायमें कहा है:–

स्मरणाज्जायते कामो वधूनां धैर्यनाशनः ॥
दर्शनाद्वचनात्स्पर्शात्कस्मादेष न संभवेत् ॥ ॥ १ ॥

स्त्रीका स्मरण करनेसेही धीरताका नाश करनेवाला कामदेव उत्पन्न हो जाता है । फिर दर्शनसे, भाषणसे, स्पर्श करनेसे, क्यों नहीं उत्पन्न होगा किंतु अवश्य होगा ॥ १ ॥

आत्मनः क्षेममन्विच्छंश्चतुर्थाश्रममागतः ॥
न कुर्याद्योषितां संगं मनसा वपुषेन्द्रियैः ॥ २ ॥

जो संन्यासाश्रमको अपने कल्याणके लिये प्राप्त हुवा है, वह मन और शरीर तथा इन्द्रियोंकरके भी स्त्रीका संग न करै, क्योंकि तिस आश्रमसे स्त्रीका संग पतन करनेवाला है ॥ २ ॥

विलीयते घृतं यद्वदग्नेः संसर्गतस्तथा ॥
नारीसंसर्गतः पुंसो धैर्यं नश्यति सर्वथा ॥ ३ ॥

जैसे अग्निसम्बन्धसे घृत पिघल जाता है, तैसे, स्त्रीके संसर्गसे पुरुषकी धीरता भी नष्ट होजाती है ॥ ३ ॥

एक एव प्रतीकारो नारीसर्पविषे भुवि ॥
आसाञ्च स्मरणं तद्वद्दर्शनादेश्च वर्जनम् ॥ ४ ॥

पृथिवीतलमें स्त्रीरूपी सर्पके विषके हटानेका एकही उपाय है स्त्रियोंके रूपका स्मरण न करना और इनके दर्शन आदिकोंका न करना ॥ ४ ॥

वासना यत्र यस्य स्यात्स तं स्वप्नेषु पश्यति ॥
स्वप्नवन्मरणे ज्ञेयं वासनातो वपुर्नृणाम् ॥ ५ ॥

जिसमें जिसकी वासना रहती है सो तिसको स्वप्नमें देखता है, स्वप्नकी तरह मरणमें भी जान लेना । मरणकालमें जिसकी वासना जिसमें रहती है, उसीको वा उसी रूपको वह प्राप्त होता है, क्योंकि वासनामयही इसका वपु है ॥ ५ ॥

कामिनां कामिनीनां च संगात्कामी भवेत्पुमान् ॥
देहांतरे ततः क्रोधी लोभी मोही च जायते ॥ ६ ॥

कामी पुरुषोंके और स्त्रियोंके संगसे पुरुषभी कामी होजाता है और जन्मान्तरमें देहान्तरमें भी क्रोधी लोभी मोही होता है ॥ ६ ॥

कामक्रोधादिसंसर्गादशुद्धं जायते मनः ॥
अशुद्धे मनसि ब्रह्मज्ञानं तच्च विनश्यति ॥ ७ ॥

काम क्रोधादिकोंके सम्बन्धसे मनभी अशुद्ध होजाता है, अशुद्ध मनमें उपदेश किया हुआ ब्रह्मज्ञानभी नष्ट होजाता है ॥ ७ ॥

कामक्रोधादिसंसक्तो ब्रह्मज्ञानविवर्जितः ॥
मार्गद्वयपरिभ्रष्टस्तृतीयं मार्गमाव्रजेत् ॥ ८ ॥

जो पुरुष काम क्रोधादिकोंमें आसक्त है और ब्रह्मज्ञानसे हीन है, वह दोनों मार्गोंसे अर्थात् ज्ञान और उपासनासे भ्रष्ट हुआ तीसरे मार्गको याने कृमि कीटादियोनियोंको प्राप्त होता है ॥ ८ ॥

तृतीयेऽध्वनि संप्राप्तः पुण्यविद्याविवर्जितः ॥
कीटादिदेहभाजी सन्नरकाच्च न निःसरेत् ॥ ९ ॥

तीसरे मार्गमें प्राप्त होकर फिर वह पुण्यविद्यासे रहित होजाता है । फिर कीटादिशरीरको भजनेवाला होकर नरकसे कदापि नहीं निकल सकता है ॥ ९ ॥

श्रेयस्कामस्ततो नित्यं चतुर्थाश्रममागतः ॥
कामिनां कामिनीनां च संगं सर्वात्मना त्यजेत् ॥ १० ॥

कल्याणका अर्थी जो चतुर्थाश्रमको प्राप्त हुआ है वह कामी पुरुषोंकी और स्त्रियोंकी संगतिका सर्व प्रकारकरके त्याग कर देवै ॥ १० ॥

पंचदशीमेंभी कहा है:—

बुद्धाऽद्वैतस्य तत्त्वस्य यथेष्टाचरणं यदि ॥
शुनां तत्त्वदृशां चैव को भेदोऽशुचिभक्षणे ॥ १ ॥

जिसने अद्वैत तत्त्वको जान लिया है और फिर वह यदि यथेष्टाचरणको करता है अर्थात् संन्यासको धारण कर अद्वैतको जानकरके भी यदि वह मांस मदिरापर स्त्रियोंका संग करता है तब कूकरमें और तिसमें क्या फरक है अर्थात् कुछभी नहीं है क्योंकि कूकरभी वमन करके फिर तिसको भक्षण करता है और तिस पुरुषनेभी वमन करे हुए विषयोंको फिर ग्रहण करलिया वहभी कूकरही है । हे चित्तवृत्ते ! वंध्यज्ञानियोंका यथेष्टाचरग होता है सच्चे ज्ञानियोंका नहीं होता है ॥ ९८ ॥

हे चित्तवृत्ते ! एक बनावटी अवधूतकी कथाको सुनो:—

एक ग्रामके समीप जंगलमें एक अवधूत महात्मा रहते थे लंगोटी तक भी नहीं रखतेथे और अपने हाथसे भोजनभी नहीं करतेथे यदि कोई दूसरे उनके मुखमें डालता तब खातेथे और जहां तहां झाडा पेशाबकोभी फिर देतेथे, उनको लोक विदेही मानतेथे । एक दिन राजाकी रानी उनके दर्शनको गई और एक थालमें लड्डू पेडोंको भरकर लेगई, जाकर उनके समीप बैठ गई थोडी देरके पीछे वह अवधूत तिस रानीकी गोदमें आकर बैठ गये रानी अपने हाथसे उनके मुखमें पेडाको देने लगी और वह खाने लगे अभी दो तीनही ग्रास रानीने उनके मुखमें दियेथे कि, इतनेमें उस अवधूतने रानीकी गोदमें दिशा करदिया रानीने एक पेडाके साथ तिस मैलेको लगाकर तिसके मुखमें जब देने लगी तब तिस अवधूतने मुखको फेर लिया रानीने अवधूतको गोदसे पटक दिया और ऊपरसे दो तीन लात तिसको मारीं और कहने

लगी इतना तो तुमको होश नहीं जो यह रानीकी गोद है वा पाखानाकी जगह है और इतना तेरेको होश है जो मलको पेडेके साथ लगाकर यह हमको खिलाती है इसलिये तुमने अपने मुखको फेर लिया रानीने नौकरोंको हुक्म दिया इस पाखण्डीको हमारे देशसे बाहर कर देओ रानी सुशीला स्नान करके घरको चली आई। हे चित्तवृत्ते! ऐसे २ पाखण्डोंको करनेवाले वंध्याज्ञानी कहे जाते हैं॥ ९९॥

हे चित्तवृते! एक और वंध्यज्ञानीके दृष्टांतको तुम सुनोः—

लैली मजनू नाम करके दो आशक माशूक हुये हैं लैली तो बादशाहकी लडकीथी और मजनू एक तसबीर खैंचनेवाले कारीगरका लडका था। मजनूका बाप बादशाहके महलोंमें काम करनेको जाताथा मजनूभी छोटीसी उमरमें बापके साथ बादशाहके महलोंमें जाने लगा। एक दिन लैलीको मजनूने देखा लैलीकी भी उमर तब छोटीसी थी मजनूका मन लैलीमें लग गया फिर लैलीके बापने लैलीको मदरसामें पढनेके लिये बिठला दिया और मजनूभी पढनेके बहानेसे तिसी मदरसामें जा बैठा। वहांपर मजनू और लैलीकी परस्पर नित्य बातचीत होनेसे प्रीति बढने लगी। दोनोंका आपसमें इतना प्रेम बढगया कि, विना देखे एक दूसरेको चैन न पडे। थोडे दिनोंके पीछे उनके प्रेमकी वार्ता सब नगरमें फैल गई बादशाहकोभी मालूम होगई तब बादशाहने लैलीका जाना मदरसेमें बंद करदिया और लैली अपने घरसे बाहर आने न पावै अब मजनूको लैलीका देखनाभी बंद होगया तब मजनू फकीर बनके जंगलमें जाकर रहने लगा कुछ दिनके पीछे बादशाहके दिलमें आया मजनू खाने पीनेके विना तंग होता होगा उसके लिये खाने पीनेका कोई प्रबंध कर देना चाहिये। बादशाहने वजीरसे कहा नगरमें नोटिस देदो कि, मजनू जिसकी दूकानसे जो वस्तु उठा ले उसका हाथ कोईभी न रोके तिसका दाम बादशाहके खजानेसे मिलैगा वजीरने नोटिस जारी करदिया। इस वार्त्ताको सुनकर दश बीस साधुओंने कपडोंको उतार दिया और मजनू बनकर लोकोंकी दूकानोंसे खाने पीनेकी चीजोंको उठाने लगे जब कोई उनसे पूँछै तुम कौन हो तब वह कहदें हम मजनू हैं वह मजनूका नाम सुनकर चुप रह जातेथे अब धीरे २ मजनू बढने

लगे चार पांच सौ मजनू बन गये और सैकडों रुपैया नित्य खजानेसे दूकानदारोंको वजीरको देना पडैं। तब वजीरने बादशाहसे कहा मजनू तो बहुतसे जमा होगये हैं। इनके खर्चके मारे खजाना खाली हुआ जाता है, कोई उपाय करना चाहिये। तब बादशाहने लैलीसे पूँछा वह जो तुम्हारा प्रेमी मजनू है वह बहुतसे हैं या कोई एक है लैलीने कहा बापू वह एकही है बहुत नहीं हैं। बादशाहने कहा उसकी पहँचान कैसे होगी लैलीने कहा अपने गृहके अंगनमें एक लोहेका खम्भा गाडिये और तिसपर एक चौकीको बांध दीजिये ऊपर उस चौकीके मेरेको बिठला दीजिये, नीचे गिरदे तिस खम्भेके चारोंतरफ अग्निके अङ्गारोंको बिछा दीजिये और नगरमें हुक्म देदीजिये सब मजनू आवें। लैलीने मजनुओंको याद किया है जो मजनू आकर उस आगको देखकर भागे तिसको कैद कर डालो जो सच्चा मजनू आवैगा वह नहीं भागेगा। बादशाहने इसी तरहसे किया। अब जो मजनू भीतर अंगनके आवे वह पूँछे लैली कहाँ है? जब तिसको लैली ऊपर बैठी बताई जावे तब वह पीछेको भागे पकड करके कैद किया जाय इसी तरह सब बनावटीके मजनू कैद किये गये तब किसीने जाकर जंगलमें तिस सच्चे मजनूसे कहा लैली तुमको याद करती है। वह भी चले जब कि, वह घरके भीतर अंगनमें पहुँचे तब मजनूने पूँछा लैली कहां है? लोकोंने ऊंचे खम्भेपर बैठी हुईको बतादिया जब मजनूने ऊपर खम्भेकी चौकीपर बैठी हुई लैलीको अपनी आँखोंसे देख लिया तबसे फिर मजनूकी निगाह नीचे आगपर न पडी किन्तु ऊपरको देखते हुए और लैली २ करते हुए मजनू आगेको बढे और आगके अंगारोंपर दौडते चले गये परन्तु उनके पांव न जले, क्योंकि, उनका मन अपने शरीरमें न था वह लैलीके पास चला गया था आगका ज्ञान कैसे होता। इसीसे उनको आगका ज्ञान भी न हुआ। जब चौकीके नीचे मजनू पहुँचे और मजनूने दोनों हाथ ऊपरको उठाये ऊपरसे लैलीने तिसके हाथोंको पकडकर अपने पास खैंचकर चौकीपर बिठालिया और बापसे कहा येही वह सच्चा हमारा प्यारा मजनू है। बादशाहने तिसी मजनूके प्रति अपनी प्यारी बेटी लैलीको दे दिया और बनावटीके सब मजनुवोंको कैद करलिया। यह दृष्टान्त है

दार्ष्टान्तमें जो कि, सच्चा ज्ञानी है वह तो हजारों लाखोंमें कोई एक ही है और जो बनावटीके हैं वह ज्ञानी बनकर मजनुवोंकी तरह लूट मार करके खा रहे हैं वह सब वंध्य ज्ञानी कहे जाते हैं क्योंकि वह वैराग्यादिक साधनोंसे शून्य हैं ॥ ६० ॥

हे चित्तवृत्ते ! एक और वंध्यज्ञानियोंके दृष्टांतको सुनः—

एक ग्राममें जुलाहे बहुतसे रहते थे, उनसे थोडी दूरपर एक क्षत्रियोंका ग्राम था। एक दिन जुलाहोंने आपसमें सलाह की चलो क्षत्रियोंको चलकर लूट लावें रात्रिके समय वह जुलाहे सब मिलकर क्षत्रियोंके ग्रामको लूटने लगे आगे क्षत्री बडे शूरवीर थे वह शस्त्र अस्त्रोंको लेकर जुलाहोंके मारनेके लिये दौडे जुलाहे भागे जब कि, भागते २ कुछ दूर निकल गये तब एक जुलाहेने कहा भागे तो जाते हो मारो मारो तो करते चलो तब सब जुलाहे भागते भी जाँय और मारो मारोभी करते जाँय यह तो दृष्टान्त है। दार्ष्टान्तमें जो कि, वंध्यज्ञानी हैं वह विवेक वैराग्यादिक साधनोंसे भागे तो जाते हैं क्योंकि, साधन उनसे हो नहीं सक्ते हैं तबभी वह मुखसे मारो २ भेदवादियोंको करते ही जाते हैं ॥ ६१ ॥

हे चित्तवृत्ते ! इसी विषयपर एक और दृष्टांत तुमको सुनाते हैं:—

एक नगरमें एक बनियां बडा धनिक रहता था उसकी भैंस और गैयाको चरवाहा नित्यही जंगलमें चरानेके लिये ले जाता था एक दिन वह चरवाहा जंगलमें भैंसोंको पडा चराता था कि, इतनेमें एक सिंह जंगलसे निकला और उन भैसोंमेंसे एक भैंसको उठाकर लेगया चरवाहेने आकर रात्रिमें बनियांसे कहा आज सिंह एक भैंसको उठाकर लेगया है। बनियांने मुनीमसे कहा वही-खातेको देखो सिंहका कुछ हमारी तरफ निकलता तो नहीं है मुनीमने वहीको देखकर कहा सिंहका हमारी तरफ कुछभी नहीं निकलता है तब बनियांने कहा फिर सिंह हमारी भैंसको क्यों लेगया बनियांने चरवाहेसे कहा कलको हमभी तुम्हारे साथ जंगलमें चलेंगे और सिंहसे भैंस लेजानेका कारण पूछैंगे। दूसरे दिन बनियां चरवाहेके साथ जंगलमें जाकर एक वृक्षकी छायामें बैठ रहा

जब कि, तीसरा पहर हुआ तब सिंह वनसे निकला और भैसोंकी तरफ चला तब बनियांने सिंहसे कहा हमने अपना वहीखाता सब देख लिया है तुम्हारा हमारी तरफ कुछभी हिसाब नहीं निकलता है फिर तुम हमारी भैंसको क्यों उठाकर लेगये ? बनियेंकी वार्त्ताको सुनकर सिंह गरजा और गरजकरके एक और भैंसको उठाकर ले भागा तब बनियांने कहा यदि हिसाब देखा जाय तब तो तुम्हारा कुछ भी हमारी तरफ नहीं निकलता है और जो तुम केवल गरजना दिखाकर हमारी भैंसोंको खाना चाहो तब तो हमारा तुम्हारे पर कुछ भी जोर नहीं चलता है। तुम बेशक खाजाओ। यह तो दृष्टान्त है। दार्ष्टान्तमें जितने कि, वन्ध्यज्ञानी हैं यदि ज्ञानकी धारणाका और ज्ञानके सुखका उनसे कुछ हिसाब पूंछा जाय तब तो उनके पास बाकी कुछ भी नहीं रहता है, केवल ज्ञानकी बातोंके गरजनेको दिखाकर वह लोगोंको लूट कर चले जाते हैं। इसीसे वह वन्ध्यज्ञानी कहे जाते हैं। हे चित्तवृत्ते ! हरएक वस्तुकी सिद्धि किसी प्रमाणसे होती है, या किसी लक्षणकरके होती है विना इन दो बातोंके नहीं होती है, सो: ज्ञानीके जो लक्षण शास्त्रोंमें किये हैं, वह वन्ध्यज्ञानियोंमें नहीं घटते हैं । प्रथम तो जिसका किसीभी पदार्थमें राग न हो बल्कि स्त्री पुत्रादिकोंमें भी राग न हो और यदि संन्यासी हो तब मठों और चेलोंमें तथा द्रव्यादिकोंमें जिसका राग न हो फिर सब जीवोंमें शत्रु मित्रादिकोंमें भी जिसकी समबुद्धि हो और किसीकाभी जिसको भय न हो और किसीको भी जिससे भय न हो वही पूरा २ ज्ञानी है। यह बातें जिसमें नहीं घटती हैं, केवल ज्ञानकी बातें ही करता वैराग्यसे भी शून्य है वही वंध्यज्ञानी है ॥ ६२ ॥

हे चित्तवृत्ते ! अब तुमको सच्चे निष्काम ज्ञानीकी कथाको सुनाते हैं:—

सिंधु नदीके किनारेपर जहांसे कि, नाव इसपार उसपार जाती आती थी वहांपर एक क्षत्रिय जातिवाला पुरुष दूकान करता था, उसकी दूकानमें पांच सातही रुपैयाका सौजा रहता था, सो कोई साधु नदीके पारको जाता था या इस पारको आताथा उसकी दूकानके आगे एक पलंग बिछा रहताथा

ऊपर वृक्षकी छाया थी, उस पलंगपर वह महात्माको बिठाकर तीन मुट्ठी चनेको खिलाता और ठंढा पानी अपने हाथसे पिलाता पंखा करता कुछ देरतक पांव दबाता था,ऐसा तिसका नियम था, एक दिन एक रसायनी महात्मा साधु वहांपर आगये उसने उन महात्माकी सेवाभी उसी तरहसे की जैसी औरोंकी करताथा। महात्माने उसकी दूकानकी तरफ जब देखा तब उनको मालूम हुआ यह तो बहुत ही गरीब है। क्योंकि, तिसकी दूकानमें उनको कुछ सामग्री दिखाई न पडी तब महात्माने कहा इसको कुछ देना चाहिये उन्होंने एक रसायनका बिल निकालकर तिसको दिया और कहा इसको किसी ताके पर धर दीजिये तुम्हारे काम आवेगा। उसने बिलको लेकर ऊपर ताकेके धरदिया महात्मा नावमें बैठकर उस पारको गये। एक सालके पीछे वह फिर उसी रास्तासे आ निकले और मनमें विचार किया अब तो वह बडा धनी होगया होगा क्योंकि हमने उसको रसायनका बिल दियाथा। जब उसकी दूकानके सामने पलंगपर आकरके बैठे तब जैसी पहले उसकी दूकानको उन्होंने देखा था, वैसेही फिर भी देखा। तब उन्होंने मनमें सोचा हमने इसको बिल तो दियाथा परंतु सोना बनानेकी तजवीज इसको नहीं बताई थी। इसीसे यह गरीब रहगया है। महात्माने कहा बाबा पारसाल हम तुम्हारे यहां आयेथे आपने हमको पहचाना है या नहीं ? उसने कहा महाराज ! मैंने नहीं पहचाना है। क्योंकि, हमारे यहां नित्यही दस पांच साधु आते हैं यह पार जानेका रास्ता है। इसलिये मैंने आपको नहीं पहंचाना है। महात्माने कहा हमने आपको एक बिल दिया था, और आपने उसको ऊपर ताकेके धर दिया था उसने देखा तो वह बिल उसी जगहमें धराथा, उठाकर महात्माके आगे तिस बिलको धर दिया। महात्माने कहा बाबा इससे सोना बनता है, हमने तुमको गरीब जानकर दिया था जो यह धनी होजावें। महात्माने कहा तुमको हमने सोना बनानेकी विधिको नहीं बताया था सो इसीसे तुमने सोना नहीं बनाया है। उसने कहा महाराज ! अब आप सोना बनानेकी विधिको बता दीजिये। महात्माने कहा तांबा लाकर एक मट्टीकी कुठाली बनाकर कोइलाको भखाकर तिसमें कुठालीको धरकर नौशादर और सुहा-

गाको तिसमें डालो, जब कि, तांबा गलजाय; तब इस बिलमेंसे एक रत्ती दवाईको तिसमें छोड दीजिये सोना बन जायगा । तब उसने कहा तांबा लावें, कोइला लावें, गलावें, दवाईको तिसमें छोडें, इतना यत्न करैं, तब सोना बनै उस क्षत्रियने महात्मासे कहा आपको सोने की जरूरत है ? महात्माने कहा हां. तब क्षत्रियने अपनी लाठीको लेकर तोलनेके जो पत्थर पडेथे उन-पर मारना शुरू किया, जिस पत्थरपर वह लाठीको मार कर कहे सोना हो जा वह तुरंत ही स्वर्ण हो जाय इसी तरह सब पत्थर स्वर्णके होगये क्षत्रियने महात्मासे कहा बाबा यदि तुमने सोना बनानेके लिये ही मूंडको मुंडाया है तब जितना सोना तुमको चाहिये उतना उठालें यह भेष तुम्हारा सोना जमा करनेके लिये नहीं है किंतु सोनाके त्यागके लिये है और आत्मज्ञानकी प्राप्तिके लिये है । तुम वैराग्यसे शून्य होकर अनात्म पदार्थमें सुख मान रहेहो । अभी तुम्हारी भोगोंमें वासना दूर नहीं हुई है । महात्माने तिसके चरणोंको पकड लिया और दोनों वहांसे चल दिये । हे चित्तवृत्ते ! सच्चे ज्ञानी ऐसे निष्काम होते हैं ॥ ६३ ॥

हे चित्तवृत्ते ! एक और ज्ञानवान्की कथाको तुम सुनोः—

काशीपुरीमें वरणाके संगमपर एक महात्मा विरक्त विद्वान् रहतेथे और धारणामें पूर्ण थे । वेदांत चिंतनसे अतिरिक्त दूसरा चिंतन नहीं करतेथे । एक दिन वह सबेरे वरणाके किनारेपर दिशा फिरनेको जब गये तब वहां वर्षासे वरणानदीका अरार गिराथा तिसमेंसे मोहरोंकी भरी हुई हंडी निकलकर उलटी पडी थी, तिसके समीप बैठकर महात्माने मलका त्याग किया और उस हंडियाको उलटा हुआ देखा, परंतु छूवा नहीं । स्नान करके अपने आसन-पर चले आये जब कि, कुछ थोडासा दिन निकल आया और इधर उधरसे लोक आने जाने लगे. तब लोगोंने तिस हांडीको देखा इतनेमें बहुतसे आदमी वहांपर जमा होगये और हाकिमको खबर मिली, वहभी वहां पर आगया । हाकिमने उस सब धनको लेलिया और लोकोंसे पूँछा यहांपर इसके पास मैला किया हुआ है । कौन ऐसा आदमी सबेरे यहांपर आया है जो पास इसके मैला करने बैठा है और धनको जिसने नहीं उठाया है । लोकोंने कहा

यहांपर एक महात्मा विरक्त रहते हैं, वही सबेरे आते हैं वही आये होंगे। हाकिम उनके पास गया और उनसे पूंछा आप जब कि, वहांपर मैला करनेको बैठे थे तब आपने उस धनको देखा था ? उन्होंने कहा हां, हमने देखा था। कहा आपने क्यों न लिया ? उन्होंने कहा हमको तिसकी जरूरत नहींथी हमारे वो कामका धन नहींथा। क्योंकि, हम तो तिसको उपाधी समझते हैं, इसवास्ते हमने नहीं लिया। हाकिमभी उनकी बातोंको सुनकर प्रसन्न हुआ। फिर एक दिन एक महाजनने आकर उनसे कहा महाराज ! पंचक्रोशीको चलिये उन्होंने नहीं माना। जब बहुत कहा तब कहने लगे एक २ छाता और एक २ जूता सब साधुवोंके वास्ते लाओ सब साधू जूता पहरकर और छाता लगाकर चलेंगे। महाजनने कहा महाराज ! पंचक्रोशीमें तो लोक जूता पहरकर छाता लगाकर नहीं जाते हैं। महात्माने कहा जो कि अज्ञानी मूर्ख करेंगे वह हम नहीं करेंगे क्योंकि हमको तो किसी फलकी कामना नहीं है। हम किसी देवता वा तीर्थसे अपने कल्याणको नहीं चाहते हैं, हम तो केवल आत्मज्ञानसेही मुक्तिको मानते हैं। तुम जाव हम पंचक्रोशी नहीं जायँगे। वह महाजन चलागया। हे चित्तवृत्ते ! जो सच्चे ज्ञानी हैं वे ज्ञानसे विना कर्मउपासनाके तथा देवतार्चन और तीर्थ आदिकोंसे अपनी मुक्तिको नहीं चाहते हैं उनका ऐसा कभी संकल्पभी नहीं फुरता है जो हमारा शरीर किसी तीर्थमेंही गिरे क्योंकि तीर्थरूप तो वह आपही हैं और न किसी शास्त्रमेंहीं ऐसा लिखा है जो ज्ञानवान्को तीर्थपरही शरीरका त्याग करना चाहिये किंतु इसके विरुद्ध लिखा है:—

नीरोग उपविष्टो वा रुग्णो वा विलुठन् भुवि।
मूर्च्छितो वा त्यजत्येष प्राणान् भ्रांतिर्न सर्वथा ॥ १ ॥

ज्ञानवान् रोगरहित हो अथवा रोगवाला हो, बैठाहो वा पृथिवीपर लोटता हो, मूर्च्छित हो वा सचेत हो, प्राणोंके त्यागकालमें इसको भ्रांति किसी तरहसे भी नहीं होती है ॥ १ ॥

तनुं त्यजति वा काश्यां श्वपचे च गृहे तथा।
ज्ञानसम्प्राप्तिसमये मुक्तोऽसौ विगताशयः ॥ २ ॥

ज्ञानवान् काशीमें शरीरका त्याग करै, अथवा चांडालके घरमें त्याग करै वह ज्ञानसम्प्राप्तिकालमें ही मुक्त होजाता है क्योंकि तिसकी वासनाएँ सब नष्ट होगई हैं तिसको काशी मगह बराबर है ॥ २ ॥

फिर दृढ बोधवाले ज्ञानीके लिये कर्मादिकोंका कर्त्तव्य भी नहीं कहा है जितना कर्त्तव्य है सो सब अज्ञानीके लिये ही कहा है ॥

ज्ञानामृतेन तृप्तस्य कृतकृत्यस्य योगिनः ॥
नैवास्ति किञ्चित्कर्त्तव्यमस्ति चेन्न स तत्त्ववित् ॥ ३ ॥

जो पुरुष ज्ञानरूपी अमृतकरके तृप्त है और कृतकृत्य है, उसको किञ्चित्भी कर्त्तव्य नहीं है, यदि वह अपनेमें कर्त्तव्यको मानै तब वह तत्त्ववित् नहीं है ॥ ३ ॥

गीतामेंभी कहा है:—

यस्त्वात्मरतिरेव स्यादात्मतृप्तश्च मानवः ॥
आत्मन्येव च संतुष्टस्तस्य कार्यं न विद्यते ॥ ४ ॥

जिस पुरुषकी आत्मामें ही प्रीति और अपने आत्मानंदकरके ही जो तृप्त है आत्मामें ही जो संतुष्ट है तिसको कुछभी कर्त्तव्य नहीं है ॥ ४ ॥

हे चित्तवृत्ते ! जो सचे ज्ञानी हैं वह तो निरिच्छ हैं, जो बनावटके ज्ञानी हैं, जिनका दृढ विश्वास नहीं है वही महात्मा तीर्थोंमें मुक्तिके लिये निवास करते हैं और मरणकालमें कहते हैं कि, तीर्थोंमें हमको लेचलो वहांपर शरीरको त्यागैंगे जन्मभर तो लोगोंको वेदान्त सुनाते हैं और ज्ञानी कहाते हैं मरणकालमें अज्ञानी बनजाते हैं क्योंकि, अज्ञानियोंकी तरह तीर्थोंसे मुक्तिकी इच्छा करने लगते हैं ॥

कपिलगीतामें कहा है:—

इदं तीर्थमिदं तीर्थं भ्रमंति तामसा जनाः ॥
आत्मतीर्थं न जानंति कथं मोक्षः शृणु प्रिये ॥ १ ॥

महादेवजी पार्वतीके प्रति कहते हैं हे पार्वती ! यह तीर्थ है वह तीर्थ है ऐसे जानकर अज्ञानी जीव भ्रमते फिरते हैं, क्योंकि वह आत्मरूपी तीर्थको नहीं जानते हैं ॥ १ ॥

देवीभागवतमें भी कहा है—

मनोवाक्कायशुद्धानां राजँस्तीर्थं पदे पदे ॥
तथा मलिनचित्तानां गंगापि कीकटाधिका ॥ २ ॥

जिन पुरुषोंके मन और वाणी आदिक शुद्ध हैं हे राजन्! उनके पद २ में तीर्थ निवास करते हैं, जो मलिनचित्त हैं उनके लिये गंगाभी कीकट देशके समान है ॥ २ ॥

हे चित्तवृत्ते! जिन पुरुषोंको आत्मानन्दकी प्राप्ति हुई है वह विषयानन्दकी इच्छा नहीं करते हैं ॥ ६४ ॥

चित्तवृत्ति कहती है हे भ्राता! चित्तकी शुद्धिके साधनोंको कहो क्योंकि बिना चित्तकी शुद्धिके विवेक वैराग्यादिकभी नहीं होते हैं, तब आत्मज्ञानका होना तो अर्थसेभी नहीं होसक्ता इसलिये प्रथम मेरेको चित्तकी शुद्धिके साधनोंको तुम सुनाओ जिनके करनेसे मेरा चित्त शुद्ध होजाय। विवेकाश्रम कहते हैं हे चित्तवृत्ते! अन्नकी शुद्धिसे चित्तकी शुद्धि होती है, सो अन्नकी शुद्धि इस तरहसे होती है—सत्य धर्मकी कमाईसे जो द्रव्य कमाया जाता है, वह शुद्धद्रव्य कहाता है, तिस द्रव्यसे जो खाने पीनेके लिये अन्नादिक लिये जाते हैं वहही शुद्ध कहे जाते हैं। क्योंकि, सत्य धर्मका असर द्रव्यद्वारा तिस अन्नमें आता है, तिस अन्नके खानेसे चित्त शुद्ध होता है। क्योंकि, अन्नद्वारा तिस सत्यधर्मका असर चित्तपर भी आता है, तिस शुद्ध चित्तमेंही विवेक वैराग्यादिक उत्पन्न होते हैं। इसीपर तुमको दृष्टांत सुनाते हैं:—

एक ब्राह्मण चित्तशुद्धिके लिये तीर्थोंपर भ्रमण करने लगा, कई बरसों तक वह तीर्थोंपर भ्रमण करता रहा तबभी तिसका चित्त शुद्ध न हुआ। क्योंकि, तीर्थोंमें जाकर क्षेत्रोंका और दान कुदानादिकोंका अन्न तिसको खानेके लिये मिले, उस अन्न खानेसे तिसका चित्त और मलिनताको प्राप्त होता चला जाय। जब कि, चित्त मलिन होता है, तब विषय विकारोंकी ओरही जाता है। ब्राह्मणने मनमें विचारा कि, क्या कारण है जो चित्त हमारा प्रतिदिन तीर्थ करनेसेभी मलिन होता जाता है। परन्तु तिसको चित्तकी अशुद्धिका कुछ कारण मालूम न हुआ। फिर वह अमरनाथ तीर्थसे जब

लौट कर कश्मीर देशमें आया, तब एक दिन दोपहरके वक्त एक ग्राममें वह पहुँचा और वहांपर एक किसानके द्वारपर वह गया और उस किसानसे भोजनके लिये तिस ब्राह्मणने कहा । किसानने कहा हमारे पास शुद्ध अन्न नहीं है, क्योंकि, जब हमारा अन्न खेतमें था, तब एक दिन हमारे खेतको दूसरेकी पारीका जल दिया गया था, इसीसे वह अशुद्ध है । हमारे भाईका अन्न शुद्ध है, आप हमारे भाईके घरमें आज भोजन करैं । तिसने अपने भाईसे कह दिया उसके भाईके घरमें जब ब्राह्मण भोजन करके वहांसे चला तिसकी वृत्ति सात्त्विकी होगई और तिसके हृदयमें एक विलक्षण प्रकाशसा होने लगा । और भूत भविष्यत्की बातोंकोभी वह जानने लगा । तब तिस ब्राह्मणने जाना ये सब शुद्ध अन्नका प्रताप है । हे चित्तवृत्ते ! अन्नकी शुद्धिसे चित्तकी शुद्धि अवश्य होती है ॥ ६९ ॥

हे चित्तवृत्ते ! एक और दृष्टांतको तुम सुनोः—

एक पुरुष बडा सत्यवादी और धर्मात्मा था वह कुछ कपडा खरीदकर विदेशमें वेचनेके लिये लेगया । एक आढतीकी दूकान पर उसने जाकर कपडेके भारको उतार दिया जब बेचनेलगा तब तिसका दाम पूरा नहीं लगा उसने आढतीसे कहा इस कपडेके भारको आप मेरी अमानत जानकर रख छोडैं फिर मैं आकर वेचूंगा । आढ़तीने उसका कपडा रखलिया वह अपने घरको चला गया कुछदिन पीछे आढ़तीकी दूकानमें आग लग गई कुछ माल आढ़तीका जलगया तिसका कपडा दूसरे मकानमें पडाथा वह बचगया दोचार महीनोंके बाद वह आया और उसने आढतीसे कहा हमारा कपडा निकालो उसको अब हम बेचेंगे आढ़ती बेधर्म होगया, उसने कहा हमारी दूकानमें आग लगीथी तिसमें तुम्हारा कपडाभी जल गया है । उसने कहा हमारा कपडा नहीं जला है, दोनों झगडते २ राजाके पास गये राजाने कहा इसकी दूकानमें आग तो लगीथी और माल भी बहुतसा जलगयाथा उसने कहा इसका माल जलाहोगा । क्योंकि, यह बेईमानी करता है हमारा माल नहीं जला होगा क्योंकि, हम बेईमानी नहीं करते हैं, राजाने कहा इसकी परीक्षा कैसेहो ? कपडेवालेने अपने ऊपरसे चद्दरउतार कर धरदी

राजासे कहा आप इसको आग लगाइये, यदि यह जल जावैगी तब हम जानैंगे जो हमारा कपडा जल गया है । यदि यह नहीं जलेगा तब आप जान लेना जो हमारा कपडा नहीं जला है । राजाने आग मँगाई तिसकी चद्दरके जलानेके लिये कितनाही यत्न किया परन्तु तिसकी चद्दर नहीं जली तब राजाने आढ़तीके मकानकी तलाशी की तिसके कपडेकी गठडी निकल आई । तिसको दिलवादी और आढ़तीको दण्डदिया । हे चित्तवृत्ते ! सत्यधर्मकी कमाईको अग्निभी जला नहीं सक्ता है और पानी तिसको बहा नहीं सक्ता है ॥ ६६ ॥

हे चित्तवृत्ते ! एक और हम तुमको इसी विषय पर कथाको सुनाते हैं:-

हे चित्तवृत्ते ! एक राजा बडा धर्मात्मा था किसी जीवको कभीभी नहीं सताताथा जितना कर प्रजासे लेताथा वह प्रजाकी पालनामेंही खर्च करदेताथा और बहुतही साधारण चालसे रहताथा । एक शत्रुने तिस राजापर चढाई की, तब राजाने मनमें विचार किया यह राज्य तो दुःखकी खान है, क्योंकि, अनेकप्रकारकी चिंता इसमें बनी रहती है, इस राज्यकी प्राप्तिके लिये जोकि वैराग्य और विचारसे शून्य हैं, वही यत्न करते हैं । यदि हम शत्रुसे युद्ध करैंगे तब बहुतसे जीवोंकी हिंसा होगी फिर यह भी तो निश्चय नहीं है कि, जय हो वा न हो । कल्याण तो इसके त्याग करदेनेमें ही है । ऐसा विचार करके रात्रिके समय अपनी रानीको साथ लेकर राजाने चल दिया । तिस कालमें और लोक तो सब सोये पडेथे परन्तु एक नौकर राजाका जागताथा वहभी राजाके पीछे चल दिया राजाने तिस नौकरको कितनाही मना किया परन्तु तिसने नहीं माना राजाके पीछे २ ही चलपडा राजा अपने देशसे निकलकर दूसरे राजाके देशमें जबकि पहुँच गया तब राज्यसम्बन्धी सब वस्त्रोंको तिसने फेंक दिया गरीबोंके वस्त्र पहनकर एक टूटे फूटे मकानमें जारहा । और वहांके राजाका एक मकान बनता था और बहुतसे मजदूर तिसमें जाकर नित्य मजदूरी करतेथे । राजा और रानी तथा नौकर ये तीनोंभी जाकर उन मजदूरोंमें नित्यही टोकरी ढोनेकी मजदूरी करने लगे । जो कुछ इनको मजदूरीका मिलता उसीमें प्रसन्नतापूर्वक अपना निर्वाह

करतेथे । जब कि, एक बरस इनको वहांपर रहते व्यतीत होगया, तब एक दिन राजाके नौकरको एक अपना स्वदेशी मिला उसने कहा हम अब अपने देशको जाते हैं । तुमभी अपने घरके लिये कोई वस्तु हमको खरीद करके लेदेवो । हम तुम्हारे घरमें लेजाकर देदेवैंगे । उस नौकरने राजासे कहा एक आदमी हमारे घरको जानेवाला है वह कहता है तुमभी अपने घरके लिये कुछ भेजो, हम लेते जायँगे । राजाके पास पांच पैसे खरचेमेंसे बचे हुवे थे, राजाने उसको वह देदिये और कहा इनका कोई फल लेकर तुम अपने घरको भेजदेवो । आगे उनके देशमें अनार नहीं होताथा तिसने पांच पैसेके पांच अनार खरीद कर अपने घरको भेज दिये जब कि, इसके घरमें अनार पहुँच गये उधर वहांका राजा उसी दिन बीमार होगया हकीमने राजासे कहा यदि अनारका फल मिलैगा, तब तुम अच्छे होगे बरन यह बीमारी जल्दी जानेकी नहीं है । राजाके हुक्मसे अनारकी तलाश होनेलगी । तब किसीने बताया फलानेके घरमें कल पांच अनार आये हैं, राजाने मन्त्रीको भेजा उन्होंने अनार देदिये हकीमने अनारका रस निकालकर दिया, राजा अच्छा होगया । राजाने एक लाख रुपैया उनके घरमें भेजदिया उनको जब इतना द्रव्य मिलगया तब उस अपने सम्बन्धीको सब हाल रुपैया मिलनेका लिख भेजा और यह भी लिख भेजा अब तुम नौकरी छोडकर अपने घरको चले आवो । जब उस नौकरको घरसे खत गया तब उसने सब हाल अपने राजासे कहा, राजाने कहा पांच अनारके बदले उसका पांच लक्ष रुपैया देनाथा, उसने थोडा दियाहै वह पांच पैसे हमारी सत्यधर्मकी कमाईकेथे अच्छा अब तुम अपने घरको जावो, वह नौकर अपने घरको चला गया ये सब हाल उस राजाकोभी मिला जिसने तिस राजाका राज्य लेलियाथा उसने राजाको बडी खातिरदारीसे बुलाकर कहा आप आपना राज्य लीजिये और मेरे कसूरको माफ करिये । राजाका मन फिर राज्य लेनेमें नहींथा परन्तु उसकी प्रार्थनासे लेलिया और वह अपने राज्यपर चला गया । हे चित्तवृत्ते ! सत्यधर्मकी कमाईमें इतनी बडी शक्ति है जो कि, तुमको सुनाई है इसी हेतुसे सत्यधर्मकी कमाईका अन्न शुद्ध होताहै ॥ ६७ ॥

हे चित्तवृत्ते ! असत्यधर्मकी कमाईसे जो अन्न लिया जाता है वह अशुद्ध अन्न कहा जाता है क्योंकि अधर्मका असर तिस अन्नमेंभी आता है, इससे वह अन्न चित्तकी अशुद्धिका हेतु होता है। अब अशुद्ध अन्नके फलको भी तुम सुनोः–

जिस कालमें भीष्मजी बाणोंकी शय्यापर शयन करके अनेक प्रकारके धर्मोंको युधिष्ठिरके प्रति सुनाने लगे, तिसकालमें द्रौपदीने भीष्मजीसे कहा महाराज ! जिस समय दुःशासन मेरे केशोंको पकडकरके सभामें लाया था और दुर्योधन मेरेको नग्न करने लगाथा तिस समयमें आपभी तिसी सभामें बैठेथे आपने उस समयमें इस तरहके धर्मोंको सुनाकर दुर्योधनादिक पापियोंको क्यों न अधर्म करनेसे हटाया ? तब भीष्मजीने कहा हे द्रौपदी ! तिस समयमें तिस पापी दुर्योधनके अन्नको हमने खाया था इसलिये उस समयमें हमको कोई भी धर्म नहीं फुराया क्योंकि पापीके अन्नको खाकर चित्त मलिन होजाता है और मलिन चित्तमें धर्मका स्फुरण नहीं होताहै हे चित्तवृत्ते ! अशुद्ध अन्नमें इतनी बडी शक्तिहै जिसने भीष्मजी धर्मात्माके चित्तकोभी मलिन कर दिया तब इतर पुरुषोंकी कौन कथा है ॥ ६८ ॥

हे चित्तवृत्ते ! एक और विरक्तमहात्माका हाल सुनोः–

एक विरक्त महात्मा एक ग्रामके बाहर गुफा बनवाकर रहते थे बहुतसे लोकोंको पास नहीं आने देतेथे और स्त्रीका तो दर्शनभी नहीं करतेथे। एक दिन दोपहरके वक्त एक युवती उनके लिये भोजनको लेगई उन्होंने भोजनको लेलिया और युवतीसे कहा तुम गुफाके बाहर बैठो। वह बाहर बैठी रही और वह भीतर भोजन करने लगे भोजन करतेही उनका मन विकारी होगया उन्होंने स्त्रीको भीतर बुलाया वह भीतर चलीगई उन्होंने स्त्रीके हाथको पकड कर कहा हमसे सम्बन्ध कर स्त्रीने कहा यदि कोई पुरुष इस समय यहाँ पर आजायगा तब हमारी और आपकी फजीहत होगी आपको ऐसा कर्म न करना चाहिये वह जबरदस्ती करनेलगे स्त्री चिल्ला उठी इतनेमें एक दो सत्संगी वहांपर पहुँच गये महात्मा बडे लज्जित हुये उन्होंने कहा महाराज आपको तो कभी भी ऐसी वार्ता नहीं फुरीथी आज ऐसे अधर्म

करनेमें आपकी रुचि कैसी होगई ? महात्मा कहनेलगे किसीने हमको दुष्ट अन्न खिलायाहै तिस अशुद्ध अन्नका यह फल है ॥ ६९ ॥

एक नगरमें एक पंडित बडा आचारवान् और विचारवान् रहता था, राजाके अन्नको और नीच जातिवालेके अन्नको वह कदापि नहीं खाताथा । एक दिन राजाकी रानीने उनको किसी कार्य्यके लिये बुलाया, पंडितजी गये । रानी आंगनमें आकर पंडितजीसे बातचीत करने लगी और उसी स्थानमें रानीने अपना मोतियोंका हार उतार कर धर दिया । रानी बातचीत करके गृहके भीतर चली गई । मोतियोंका रानीका हार उसी जगामें छूट गया । पंडितजी हारको उठाकर अपनी जेबमें डालकर घरको चले आये । घरमें आकर जब पंडितजीने अंगरखा उतारा, तब जेबसे हार गिरा । पंडितजी हारको देखकर शोच करने लगे, ऐसा अधर्म हमसे क्यों हुवा । स्त्रीसे पूँछा आज अन्न कहाँसे आयाथा स्त्रीने कहा एक सुनार दे गयाथा, सुनारको बुलाकर पूँछा उसने कहा हमने एकके जेवरमेंसे सोना थोडासा चुरायाथा उसको बेंचकर अन्न खरीदकर थोडासा आपके यहां भेजा था बाकीका अपने घरको भेजा था । पंडितने कहा उसी अन्नका यह फल है जो हमने मोतियोंके हारकी चोरी कर ली है । हारको रानीके पास भेजदिया आपने उस दिन उपवासव्रत किया । हे चित्तवृत्ते ! दुष्ट अन्न महात्मापुरुषोंके चित्तको भी विकारी कर देता है तब इतरोंकी कौन कथा है ॥ ७० ॥

हे चित्तवृत्ते ! सत्यभाषणसेभी चित्तकी शुद्धि होती है, असत्य भाषणसे चित्तकी अशुद्धि होती है और अन्नकी शुद्धिकाभी मूलकारण सत्यभाषण ही है । सत्यभाषणके तुल्य संसारमें दूसरा न कोई धर्म है न भक्ति है । सत्यभाषणवालेकी जगत्में प्रतिष्ठा होती है इसलिये सत्यवादियोंकेभी इतिहासोंको तुम सुनोः—

एक ब्राह्मणके दो पुत्र थे जब कि एक लडका तिसका बारह बरसका हुवा और दूसरा आठ बरसका हुवा, तब तिस ब्राह्मणका देहांत होगया । तिसके देहान्त होनेके कुछ दिन पीछे बड़े लडकेने अपनी मातासे कहा हम विदेशमें

विद्याध्ययन करनेको जायँगे, आप हमको विदेश जानेके लिये आज्ञा दीजिये । प्रथम तो तिसकी माताने हीलाहवाला किया जब कि लडकेने बहुतसी बिनती की माताने जानेके लिये तिसको आज्ञा दे दी और तिसकी माताने कहा बेटा ! पचास अशरफी मेरे पास हैं तिसमें पचीस तो तुम्हारे छोटे भाईका हिस्सा है तिसको तो मैं अपने पास रख छोडतीहूँ और पचीस अशरफी जो कि तुम्हारा हिस्सा है तिसको मैं आपकी गोदड़ीमें सी देतीहूँ । जहाँपर तुमको खरचका काम लगे एक २ निकालकर अपना काम चला लेना जब कि लडका काफलेके साथ होकर विदेशमें जाने लगा तब माताने तिससे कहा बेटा ! एक बचन हमारा और भी मानना । बेटेने कहा माता कहो तिसने कहा बेटा ! झूँठ कभी नहीं बोलना चाहे सर्वस्वभी नष्ट होजाय, तबभी झूठ नहीं बोलना । बेटेने कहा माता ऐसेही करूंगा । मातासे रुखसत होकर लडकेने काफलेके साथ चलदिया । एक दिन जंगलमें काफला जाकर उतरा रात्रिके समय चोरोंकी एक धाड तिस काफलेपर आपड़ी और सबको चोर लूटने लगे सबको लूटकर फिर तिस लडकेसे आकर चोरोंने कहा लडके तुम्हारे पास क्या है ? लडकेने कहा हमारे पास पचीस अशरफी हैं, चोरोंने कहा वह कहाँपर हैं, लडकेने कहा इस गोदड़ीमें सब सिई हुई हैं । चोरोंके सरदारने गोदड़ीको जब खोल कर देखा तब तिसमें ठीक २ पचीस अशरफी निकल आई चोरोंके सरदारने कहा लडके तुमने हमको अशरफी क्यों बताई हम तो चोर हैं सबको लूटनेके लिये आये हैं, सबको लूटा है, यदि तुम न बताते तब तुम्हारी अशरफी बच जातीं लडकेने कहा जब हम घरसे विदेशमें जानेके लिये निकले थे तब हमारी माताने हमसे कहा था बेटा झूठ कभी भी नहीं बोलना चाहे सर्वस्व चला जाय, मैंने कहा ऐसेही करूंगा । अपनी माताकी आज्ञाको हमने पालन किया है, इसवास्ते हमने आपको अपनी अशरफी बतादी हैं । चोरोंके सरदारने कहा देखो बडे आश्चर्यकी वार्ता है, यह छोटासा बालक होकर अपनी माताकी आज्ञाको नहीं फेरता है और इसने पूर्णरूपसे अपनी माताकी आज्ञाका पालन किया है इसको हम धन्यवाद देते हैं और हम लोगोंको धिक्कार है जो अपने स्वामी ईश्वरकी आज्ञाको पालन नहीं

करते हैं, क्योंकि ईश्वरने कहा है किसी जीवको भी मत सतावो और हम सताते हैं। ईश्वरकी आज्ञाको नहीं पालन करते हैं, आजसे पीछे हम भी निंदित कर्मको नहीं करैंगे और मजदूरी करके खावेंगे। चोरोंके सरदारने जितना माल उस काफलेका लूटाथा सबको फेर दिया और लडकेकी गोदड़ीमें उन अशरफियोंको सीकर तिस लडकेके हवाले करदिया और तिस लडकेको जहांपर जानाथा, वहांपर तिसको पहुँचा भी दिया। हे चित्तवृत्ते! एक लडकेके सत्यभाषणसे सब काफलेका मालभी बचगया और वह चोरभी साधु बनगये॥ ७१॥

हे चित्तवृत्ते! एक और सत्यवादीके इतिहासको तुम सुनो:-

हे चित्तवृत्ते! एक समय चातुर्मासमें वर्षा न होनेके कारण बडा अकाल पडा अन्नके बिना लोक बड़े दुःखी हुए सब लोक मिलकर राजाके पास गये और राजासे प्रजाने कहा वर्षाके बिना लोक मरे जाते हैं, कोई उपाय करना चाहिये। तब राजाने भी बहुत मन्त्रोंके जप कराये और भी अनेक प्रकारके पाठ पूजा आदिक कराये, तब भी वर्षा न हुई। राजाने अपने मंत्रियोंसे कहा आपलोग अब कोई उपाय बतावें जिसके करनेसे वर्षा हो नहीं तो प्रजा सब नष्ट भ्रष्ट हो जायगी। मंत्रियोंने कहा महाराज! इस नगरके फलाने दरवाजेके पास एक क्षत्रीकी दूकान है वह बडा सत्यवादी है:यदि आप उससे कहैं और वह ईश्वरसे प्रार्थना करै तब अवश्यही वर्षा होगी। राजा सबेरे पालकीमें सवार होकर उसकी दूकान पर जाबैठे। उसने कहा राजन्! आपके आगमनका कारण क्या है? राजाने कहा महाराज! पानी नहीं बरसताहै पानी बरसानेके लिये आपके पास आये हैं क्षत्रियने कहा राजन्! किसी देवता वगैरहकी पूजा कराओ; राजाने कहा सब उपाय हम कर चुके हैं, अब आपकी शरणको आये हैं जबतक वर्षाको नहीं करोगे तबतक हम भोजन नहीं करैंगे। उन्होंने राजाको बहुतसी बातें कहकर टाला परन्तु राजाने एक भी न मानी। जब दोपहर होगई और राजापर भी धूप आगई तब तिसने समझलिया जो अब राजा किसी तरहसे भी नहीं जाता है तब उन्होंने अपने तराजूका पसंगा करके कहा हे तराजू! यदि हमने हमेशा सचही बोला है और सचा

सौदाही किया है तब तो वर्षा हो । यदि हमने झूठ बोला है और झूठाही सौदा किया है, तब तो वर्षा न हो । इतना कहतेही दो मिनिटके पीछे पूर्व दिशासे एक बादल उठा और देखते २ ही उसने आकाशको आच्छादन कर लिया और पानी बरसने लगा इतना जोरसे पानी बरसने लगा जो राजाको अपने घरतक पहुँचना मुश्किल होगया । उधर तो राजा पालकीपर सवार होकर अपने घरको गये और इधर इन्होंने दूकानको बन्द करके कहींको चल दिया। हे चित्तवृत्ते ! सत्यवादीकी वाणीमें सिद्धि रहती है तिसका कथन निष्फल नहीं जाता है ॥ ७२ ॥

हे चित्तवृत्ते ! सत्संगसे भी चित्तकी शुद्धि होती है और कुसंगसे चित्तकी अशुद्धि होती है । अब तुम सत्संगके माहात्म्यपर भी एक दो दृष्टांतोंको सुनो ।

एक राजाके नगरके बाहर दो महात्मा रहते थे और राजा भी कभी २ उनके पास जाया करते थे । किसी राजाके नगरमें एक भारी चोर रहता था, वह नित्य ही चोरी करता था परन्तु कभी पकडा नहीं गया था । एक दिन वह चोर भी भगवां वस्त्र करके साधुका भेष बनाकर उन दो महात्माओंके पास जा बैठा । तीसरे पहर राजा जब उन दो महात्माओंके दर्शनको गये तब राजाने देखा एक तीसरे नये महात्मा भी वहांपर बैठे हैं । राजा उन दो महात्मोंके पास होकर फिर उन तीसरे महात्माके पास जाकर बैठगये और कुछ द्रव्य भेंटके लिये राजाने उनके आगे धर दिया था । तब चोरने राजासे कहा राजन् ! मैं साधु नहीं हूं मैं तुम्हारे नगरका चोर हूँ । साधु जानकर मेरे आगे आप द्रव्यको क्यों रखते हैं । राजाने कहा आप अपनेको छुपानेके लिये ऐसा कहते हैं । आप महात्मा हैं । फिर चोरने कहा मैं सच्चा कहता हूँ मैं साधु नहीं हूँ थोडे द्रव्यके लिये मैं लोकोंको लूटनेवाला हूँ । राजाने कहा जब कि आप थोडे द्रव्यके लिये लोकोंको लूटते हैं तब यह बहुतसा द्रव्य जो कि मैं आपको देता हूँ इसको आप क्यों नहीं अंगीकार करते हैं ? चोरने कहा मैंने चोरके भेषको त्यागकर अब साधुका भेष बनाया है । एक तो इस भेषको लज्जा लगजायगी, दूसरा दो घडीका महात्माका संग होनेसे मेरी वह बुद्धि अब जाती रही है । जो कि, अधर्म करके लोकोंसे द्रव्यको मैं लेता था उस वृत्तिको

त्याग करके मैं अब निवृत्तिमार्गमें होगया हूँ । हाथीकी सवारी करके अब मैं गधेकी सवारी करनी नहीं चाहता हूँ । राजा द्रव्यको लेकर चले गये वह चोर भी दो घडीके सत्संग करनेसे साधु बनगया ॥ ७३ ॥

हे चित्तवृत्ते ! एक नगरके बाहर चोरोंके दो चार घर थे, एक चोरके पांच लडके थे, वह नित्यही अपने लडकोंको उपदेश करता था, बेटा कभी भी किसी मंदिरमें न जाना और न कभी सत्संगमें और न कथावार्तामें जाना और न कभी किसी महात्माके पास जाना । इसीतरहके वह उपदेशोंको करता २ एक दिन मर गया । उसके मरनेके थोडे दिन पीछे एक दिन तिसके बडे लडकेके मनमें आया आज रात्रिको राजाके घरमें चलकर चोरी करके कुछ मालटाल लावें । रात्रिके समयमें वह जब अपने घरसे चला तब रास्तामें कथा होतीथी उसको देखकर तिसने विचार किया पिताका उपदेश है जहांपर कथा होती हो वहांपर नहीं जाना । अब इस रास्तासे हम कैसे निकलें, या कोई ऐसा उपाय करना चाहिये जिस करके हमारे कानमें कथाका शब्द न जाय । उसने दोनों कानोंमें थोडी २ रुई भरदी और कथाके बीचसे होकर चला जब कि, कथाके समीप पहुँचा तब तिसके एक कानसे रुई गिर गई उस वक्त ऐसी कथा हो रही थी देवताकी परछाई नहीं होती है और देवताके भूमिपर पांव भी नहीं लगते हैं । इतनाही उसने सुना और राजाके घरमें सेंध लगाकर बहुतसा माल तिसने चुराया और लेजाकर अपने घरमें तिसने गाड दिया था सवेरा जब हुआ तब राजाको मालूम हुआ जो रात्रिको चोरी होगई है । राजाने चोरके पकडनेके लिये हुक्म दिया कई एक सिपाही चोरकी खोज करते रहे परन्तु चोरका पता न लगा सके तब राजाने वजीरसे कहा, अब वजीर भेष बदल कर चोरका पता लगाने लगे वजीरने नगरके बाहर जो कि चोरोंके घर थे उनहीं घरोंमें चोरका अनुमान किया रात्रिके समय वजीर काली देवीका स्वांग बनकर अर्थात् बदनमें स्याई मलकर बालोंको खोलकर एक हाथमें खप्पर लेकर आधीरातके समय उनके द्वारपर जाकर कहने लगा, कालीमाईकी भेंटको आपलोक क्यों नहीं देतेहो रोज २ मनमाना माल ले आते हो आज सब भेंट हमारी देवो

नहीं तो नाश करदेऊँगी डरके मारे सब भाई बाहर द्वारके निकल आये और हाथ जोडने लगे माता तुम्हारी भेंटको कल हम जरूर देवेंगे इतनेमें बडे बेटेको कथावाली वार्ता याद आगई उसने कहा चलकर दिया लेकर देखें तो जब तिसने दीयेसे देखा तो तिसकी परछाहीभी दिखाई पडी और पृथिवी पर पांवभी लगे हुए देखे उसने जान लिया यह देवता नहीं है यह तो कोई ठग है लठ्ठ लेकर कालीको मारने चला काली भाग गई तब तिसने विचार किया हमने दो बातें कथाकी सुनी हैं उन्हीं दो बातोंने हमारी जान बचाई और हमारा मालभी बचाया है यदि हमलोक हमेशा सत्संगमें जाया करैंगे और इस खोटे कर्मको छोड देवैंगे तब तो हमको महान् फल होगा ऐसा विचार करके चोरने उसी दिनसे चोरी करनी छोड दी और सत्संगमें सब जाने लगे वह सब चोर साधु बनगये। ऐसा सत्संगका माहात्म्य है ॥ ७४ ॥

हे चित्तवृत्ते! सत्संगका ऐसा माहात्म्य है जो चोरभी साधु बनजाते हैं:—

हे चित्तवृत्ते! एक बगीचेमें एक गुलाबके पेडमें जंगली घासने जड पकड ली और धीरे २ वह बढने लगी एक दिन बागवान्ने उसको फैलते देखकर काटना चाहा तब उस घासने कहा हमको मत काटो, क्योंकि हमारेमें गुलाबकी सुगंधी आदिक गुण आगये हैं। गुलाबकी संगतसे अब मैं गुलाबरूप होगयीहूँ मैं घास नहीं रहीहूँ, यदि मेरेमें गुलाबवाले गुण न आते तब काटना मुनासिब था बागवान्ने तिसको न काटा सत्संगका ऐसा फल है और कवियोंनेभी सत्संगके फलको दिखाया है ॥ ७५ ॥

महानुभावसंसर्गः कस्य नोन्नतिकारकः ॥
पद्मपत्रस्थितं वारि धत्ते मुक्ताफलश्रियम् ॥ १ ॥

महान् पुरुषोंका जो संग है, वह किसकी उन्नतिको नहीं करता है कमलके पत्रपर स्थित जलकी बूँदभी मोतीकी शोभाको धारण करती है ॥ १ ॥

दोहा।

जोहि जैसी संगत करी, तैं तैसो फल लीन।
कदली सीप भुजंगमुख, एक बूँद गुण तीन ॥ १ ॥

जल जिमि निर्मल मधुर मधु, करत ग्लानिको अंत ।
पान किये देखे छुये, हरष देत किमि संत ॥ २ ॥

सवैया ।

ज्ञान बढै गुनवानकी संगत ध्यान बढै तपसी सँग कीने ।
मोह बढै परिवारकी संगत लोभ बढै धनमें चित दीने ॥
क्रोध बढै नर मूढकी संगत काम बढै तियके संग कीने ।
बुद्धि विवेक विचार बढै कवि दीन सुसज्जन संगत कीने ॥

दोहा ।

तुलसी लोहा काठ सँग, चलत फिरत जलमाहिं ॥
बडे न डूबन देतहैं, जाकी पकडैं बाहिं ॥ १ ॥
नीचहु उत्तम संग मिल, उत्तमही ह्वै जाय ॥
गंग संग जल झीलहू, गंगोदकके भाय ॥ २ ॥
जाहि बडाई चाहिये, तजै न उत्तम साथ ॥
ज्यों पलाश संग पानके, पहुँचे राजा पास ॥ ३ ॥
भले नरनके संगसे, नीच ऊँचपद पाय ॥
जिमि पिपीलिका पुष्पसँग, ईश शीश चढ जाय ॥ ४ ॥

हे चित्तवृत्ते ! एक दिन बडी वर्षा होतीथी और सरदीके दिन थे, एक नग्न साधु घूमतेहुए नगरमें एक मकानके छज्जेके नीचे द्वारपर खडे होगये, वह मकान राजाकी वेश्याका था । मकानके भीतरसे एक लौंडीने उन महात्माको देखकर जाकर अपनी बीबीसे कहा एक महात्मा नग्न कीचमें लिपटे हुए बाहर वर्षामें खडे काँप रहे हैं और बोलते चालतेभी नहीं हैं वेश्याने लौंडीसे कहा उनका हाथ पकड कर तू उनको भीतर मकानके लेआ । लौंडी जाकर उनका हाथ पकडकर मकानके भीतर लेआई, बीबीने गर्म जलसे उनको स्नान कराकर बदन पोंछकर बिछोनेपर लिटादिया और गर्म चाह पिलाई फिर सुन्दर भोजन कराया पश्चात् आप भोजन करके उनके पाँव दाबने लगी । तब महात्माने उस वेश्याकी तरफ एक निगाहसे देखा

मानो उसके हृदयमें अमृतकी धारा बरसादी और सोगये वह वेश्या रात्रिभर उनके पाँवकोही दबाती रही सबेरे वह सोगई । महात्माकी जब नींद खुली उन्होंने भी रजाईको फेंककर चल दिया, कुछदेरके पीछे वेश्याकी जब नींद खुली तब उसने लौंडीसे पूँछा महात्मा कहांको गये हैं। लौंडीने कहा वह जङ्गलको चले गये वह वेश्या भी नग्नही घरसे निकल कर नगरके बाहर एक वृक्षके नीचे जाकर नीचे सिर करके बैठीरही राजाको खबर हुई राजा तिसके पास गये और उसको बुलाने लगे तब वेश्याने कहा अब मैं वह भंगन नहीं रही हूँ, जो कि पहले तुम्हारे मैलेको उठातीथी अब तुम चले जावो। राजाने नौकरोंको हुक्म किया कोई आदमी इसके पास आने न पावे। जहां जानेकी इसकी इच्छा हो वहाँपर यह चली जाय कोईभी इसको न रोकै। दूसरे दिन वह वेश्या वहांसे चली गई। हे चित्तवृत्ते ! महात्माकी नजर जिसपर पडजाय वहभी कल्याणरूप होजाता है। इसीपर गुरु नानकजीने कहा है। " नानक नदरी नदर निहाल " गुरु नानकजी कहते हैं महात्मा अपनी दृष्टि करके ही दूसरेको कृतार्थ कर देते:हैं ॥ ७६ ॥

छप्पय ।

लियो नीम सत्संग भयो मलयागिर चंदन ॥
लोहा पारस परस दरस दरसत है कुंदन ॥
मिलै सुरसरी नीर सीर निहचै सो गंगा ॥
मिश्रीसों मिल वंश तुल्यो ताहूके संगा ॥
लोह तर्‍यो नौका मिले साखी सकल सुन लीजिये ॥
साधु संगते साधु मिल रामनाम रस पीजिये ॥ १ ॥

हे चित्तवृत्ते ! उपकार करनेसेभी चित्तकी शुद्धि होती है, दयाका नामही उपकार है, जिसमें दया होगी वही उपकार करैगा। जिसमें दया न होगी वह कभी भी उपकार नहीं करसक्ता है। लोकमें भी दयालु पुरुषकी कीर्ति होती है और दयाहीनकी निंदा होती है। दयाबिन सिद्ध कसाई ऐसा लोक कहते हैं। दया चित्तकी शुद्धिका मुख्य साधन है। अब हम तुमको दयालु पुरुषोंके दृष्टांतोंको सुनाते हैं:-

एक नगरके बाहर एक मंदिरमें एक महात्मा रहतेथे, वह नित्यही वेदांतकी कथाको करतेथे, उनकी कथामें एक क्षत्रियभी जाता रहा परन्तु गरीब था। सडकके किनारेपर खूमचा लगाकर बैठकर बेचता था। एक दिन उसने महात्मासे कहा महाराज! हमने अन्वयव्यतिरेक करके देहादिकोंसे भिन्न आत्माको निश्चय कर लिया है और महावाक्यों करके तथा अनुभव करकेभी जीव आत्माका अभेद निश्चय करलिया है, फिरभी हमको उस आत्मसुखकी प्रतीति नहीं होती है इसमें क्या कारण है ? महात्माने कहा कोई पाप पूर्व जन्मका इसमें प्रतिबंधक है वह पाप जब कि दूर होजावैगा तब तुमको आपसे आप उस सुखकी उपलब्धि होजायगी। महात्माकी वार्ताको सुनकर वह चुप रहगया। एक दिन वह क्षत्रिय सडकके किनारेपर कूएके समीप छायामें खूमचा रखकर बैठा था, गरमीके दिन थे एक चमार घासका गट्ठा उठाकर चला आता था जब कि वह कूंएके समीप पहुँचा तब गरमी खाकर गिर पडा और बेहोश होगया। तुरतही वह क्षत्रिय उठा और तिस चमारको उठाकर तिसने छायामें करदिया और ठंढा पानी निकाल शरबत बनाकर तिसके मुखमें थोडा २ डालना शुरू किया थोडी देरमें वह चमार होशमें आगया कुछ थोडासा तिसको दानाभी खिलाया, वह चमार उठकर चला गया। उसी दिनसे उस क्षत्रियके हृदयमें आत्मसुख भान होने लगा। उसने जाकर महात्मासे कहा महात्माने कहा तुम्हारेमें जो कोई पाप प्रतिबंधक था वह दया करनेसे जाता रहा। क्योंकि तुमने एक आदमीको प्राणदान दिये हैं। हे चित्तवृत्ते! दयाका बडा भारी फल है, दयासे सर्व प्रकारके पाप दूर होजाते हैं और इस लोकमेंभी यश मिलता है॥ ७७॥

एक नगरमें एक बनियां बडा धनी था, वह नित्यही यज्ञोंमें अपने धनको खर्च करता था, जब कि सब धन बनियांका खर्च होगया, तब बनियांको खानेपीनेसेभी तंगी होने लगी। तब तिसकी स्त्रीने कहा तुम किसी राजाके पास जावो और एक यज्ञके फलको बेंचकर कुछ द्रव्य लाकर अपना अच्छी तरहसे गुजर करो। जब कि बनियाने जानेकी तैयारी करी तब तिसकी स्त्रीने नौ रोटी मोटी २ रास्तेमें खानेके लिये तिसके कपडेमें बांध दीं बनिया

तीसरे प्रहर जंगलमें एक कूंएके किनारे पहुंचा और वहांपर बैठकर सुस्ताने लगा तब देखता क्या है वृक्षकी कोटरमें एक कुतिया व्याई हुई पडी है नव तिसके बच्चे हैं तिसको चूस रहे हैं और तीन दिनकी वह भूखी है, क्योंकि तीन दिनसे वर्षा बराबर हो रही थी कहींको वह जाने नहीं पाई अतिकृश और दुर्बल होगई थी अब उसमें कहीं जानेकी हिम्मतभी नहीं थी । बनियांने एक २ रोटी करके सब रोटी तिसको खिलादीं और आप भूखा रहगया । कुतिया जी गई, तिसके जीनेसे तिसके बच्चे भी सब जी गये । बनियां दूसरे दिन राजाके पास पहुंचा और एक यज्ञके फलके बेचनेको कहा । राजाने ज्योतिषीको बुलाकर पूंछा तुम प्रश्न देखो इसने कितने यज्ञ किये हैं उन सबमें किस यज्ञका फल उत्तम है उसीको हम खरीद करेंगे । ज्योतिषीने कहा जो कि, इसने रास्तामें कुतियाको रोटियें खिलाईं हैं उससे नव जीवोंके प्राण बचे हैं वही इसके सब यज्ञोंमेंसे उत्तम यज्ञ हैं उसीके फलको यदि यह बेचे तब तुम खरीद करलेओ । राजाने बनियांसे कहा बनियाने कहा तिस यज्ञके फलको मैं नहीं बेचूंगा और किसी यज्ञके फलको खरीदो तो बेचूंगा राजाने और यज्ञके फलको न खरीदा और बनियांको कुछ रुपैया देकर बिदा कर दिया । हे चित्तवृत्ते ! दयाका कितना बडाभारी फल है ॥ ७८ ॥

हे चित्तवृत्ते ! मनुष्य तो दया करतेही हैं, परन्तु इतर जीवभी दया करते हैं, अब मनुष्यसे इतर जीवोंका भी दयापर दृष्टान्त सुनो--

एक पंडित रास्तेमें चले जाते थे उन्होंने जंगलमें देखा कि मूसोंकी बडी भारी कतार चलीआती है, उनमें एक मूसा अन्धा था उसके मुखमें एक घासका तिनका पकडाकर दूसरे मूसेने उसी तिनकेको अपने मुखमें पकडा था तिसके पीछे २ वह अन्धा मूसा भी चला आता था अब देखिये मूसा आदिक जानवरोंमें भी उपकार करनेकी बुद्धि रहती है, जो मनुष्य शरीरको धारण करके उपकारसे हीन है वह पशुओंसेभी बुरा है, क्योंकि मनुष्य शरीर तो खासकर उपकार करनेके लियेही उत्पन्न हुआ है ॥ ७९ ॥

परोपकारः कर्त्तव्यः प्राणैरपि धनैरपि ।
परोपकारजं पुण्यं न स्यात्क्रतुशतैरपि ॥ १ ॥

धनोंकरके और प्राणों करकेभी परोपकार करना चाहिये क्योंकि परोपकारके बराबर सौ यज्ञकाभी पुण्य नहीं है ॥ १ ॥

परोपकारशून्यस्य धिङ् मनुष्यस्य जीवितम् ।
यावन्तः पशवस्तेषां चर्माप्युपकरिष्यति ॥ २ ॥

जो मनुष्य परोपकारसे शून्य है तिसके जीनेकोभी धिक्कार है, क्योंकि जितने पशु हैं, उनके चर्मभी परोपकार करते हैं ॥ २ ॥

आत्मार्थं जीवलोकेस्मिन् को न जीवति मानवः ।
परं परोपकारार्थं यो जीवति स जीवति ॥ ३ ॥

अपने लिये इस लोकमें कौन मनुष्य नहीं जीता है, परन्तु जो परोपकारके लिये जीता है वही जीता है, दूसरा नहीं जीता है ॥ ३ ॥

दोहा ।

बिरछा फलै न आपको, नदी न अचवै नीर ।
पर स्वारथके कारणे, संतन धरो शरीर ॥ ४ ॥

दोहा ।

शेष शीश धारै धरा, कछु न आपनो काज ।
परहित परस्वारथरती, बाइक बने न लाज ॥ ५ ॥

हे चित्तवृत्ते ! अमेरिकामें एक सेनापति कुछ सेनाको लिये जाता था, जंगलमें रास्ताको वह भूल गया यद्यपि दो चार घंटेतक इधर उधर भ्रमण करता रहा, परंतु रास्ता तिसको न मिला और सेना सब भूँख प्याससेभी बहुत घबराई तिस जंगलमें एक घासका छप्पर तिस सेनापतिको दिखाई पडा तिस छप्परमें एक मनुष्य बैठाथा तिससे सेनापतिने कहा, हम लोकोंको भूँख और प्यास लगी है उसने कहा हमारे साथ तुम चलो वह आगे २ चला पीछे तिसके वह सब सेना चली थोडी दूर जब गये तब अन्नका ढेर दिखाई पडा सेनापतिसे तिसने कहा यह दूसरेका है इसको मत छूना फिर आगे जब थोडी दूर गये तब एक अन्नका ढेर दिखाई पडा और पासही उसके पानीका तालाब था उसने कहा यह अन्न अपना है, जितना आपको चाहिये सो लेलीजिये और यह पानीका ताल भी मौजूद है सेनापतिको जितने अन्न-

जलकी जरूरत थी सो लेलिया, फिर उससे कहा हमको अब तुम रास्ता बतावो, उसने साथ जाकर रास्ताभी उनको बता दिया वह सब सेना आरामसे अपनी जगहपर पहुँच गई अपने प्रयोजनसे बिना दूसरेका भला करना इसका नाम उपकार है॥

हे चित्तवृत्ते! चित्तकी शुद्धिके साधनोंको तुम्हारे प्रति हमने कह दिया अब तुम्हारी इच्छा क्या सुननेकी है सो कहो॥ ८०॥

इति श्रीस्वामि–हंसदासशिष्येण स्वामि–परमानंदसमाख्याधरेण विरचिते ज्ञानवैराग्यप्रकाशनामकग्रन्थे वैराग्योपदेशवर्णनो नाम प्रथमः किरणः॥ १॥

द्वितीय किरण।



हे चित्तवृत्ते! जैसे पतिव्रता स्त्री अपने पतिके साथ मिलनेके लिये संपूर्ण विषय भोगोंका त्याग करके अपने मृतक पतिके साथ जलकर पतिके लोकको प्राप्त होजाती है, तैसे तूभी विषय भोगोंका त्याग करके अपने मनरूपी पतिके साथ ज्ञानरूपी अग्निमें सती न होजावैगी तबतक तेरेको आत्मसुखका लाभ कदापि नहीं होगा॥ १॥

हे चित्तवृत्ते! सर्पके पास एक मणि रहता है, तिस मणिमें दो गुण रहते हैं एक तो तिस मणिमें प्रकाश गुण रहता है, दूसरे आनंद गुण रहता है, सर्प तिस मणिके प्रकाश गुणको तो जानता है परन्तु तिसके आनंदगुणको वह नहीं जानता है जब कि तिस सर्पको भूँख लगती है तब वह पर्वतकी अंधेरी कंदरामें जाकर उसको अपने मुखसे निकालकर धर देता है। उस मणिके धरनेसे उस कंदरामें प्रकाश होजाता है, तिस मणिके प्रकाशसे वह सर्प मच्छरोंको मार २ करके खाता है, दूसरे आनंद गुणको वह जानता नहीं। इसलिये वह आनंदको प्राप्त नहीं हो सक्ता है और यदि तिस मणिके आनंद गुणको वह जानता तब मच्छरोंके खानेसे वह आनंदको न प्राप्त होता, किंतु तिसी मणिके आनंद करके वह आनंदको प्राप्त होता। इसी

प्रकार हे चित्तवृत्ते ! तूभी तिस आत्माके प्रकाश गुणको जानती है इसीसे तू तिस प्रकाश करके विषयरूपी मच्छरोंको मार २ कर खाती रहती है । यदि तू तिस आत्माके आनंदरूपी गुणको जानती तब विषयोंके पीछे कदापि न दौडती ॥ २ ॥

चित्तवृत्ति कहतीहै हे विवेकाश्रम ! वह आत्मा कौन है और कहाँ पर रहता है और कैसे जाना जाता है और किस प्रकार तिसके ये दो गुण जाने जाते हैं ? मेरे प्रति विस्तारपूर्वक तिस आत्माका तू निरूपण कर ।

विवेकाश्रम कहतेहैं:—हे चित्तवृत्ते ! वह आत्मा सर्वत्र रहताहै, परन्तु तिसकी उपलब्धिका स्थान यह शरीरही है, जैसे सूर्यका प्रकाश सर्व जगत्में बराबर ही पड़ताहै, परन्तु तिसकी उपलब्धि विशेषरूप करके जलमें या दर्पणमें ही होती है, तैसे सामान्यरूप करके आत्मा भी सर्वत्र विद्यमान है तथापि विशेषरूप करके शरीरमें ही रहताहै और आत्माके प्रकाश करकेही शरीर भी प्रकाशमान होरहाहै । चित्तवृत्ति कहती है हे विवेकाश्रम ! इस तरहसे जो आप कथन करतेहैं, सो मेरे समझमें नहीं आताहै । क्योंकि मैं स्त्रीजाति स्थूल बुद्धिवाली हूं, आप दृष्टांतद्वारा तिस आत्माको मेरे प्रति बताइये ॥

विवेकाश्रम कहतेहैं:— हे चित्तवृत्ते ! तुम एक मट्टीका बनाहुआ मटका लावो जिसका मुख चौडा हो और पाँच जिसमें ऊपरकी तरफ छिद्रहों और एक मट्टीका दिया लावो जिसमें तेल बत्ती धरी हो, और एक सुंदर रसवाला फल लावो, और एक कोई रूपवाली वस्तु लावो और एक बाजा लावो, और एक सुगंधीवाला पुष्प लावो और एक कोई कोमल स्पर्शवाली वस्तु लावो । चित्तवृत्ति सब वस्तुवोंको ले आई और कहने लगी हे भ्राता ! आपने जो वस्तुएँ बताई हैं उन सबको मैं ले आई हूं । विवेकाश्रम कहते हैं । हे चित्तवृत्ते ! अँधेरी कोठडीमें इस दियेको जगाकर पृथिवीपर धर देवो और इस मटकेको ऊंधा करके तिस दियेके ऊपर धर दो और पांचों छिद्रोंके पास उन पांच वस्तुओंको धरदेवो । चित्तवृत्तिने दियेको जगाकर तिसके ऊपर मटकेको ऊँधा धरकर तिसके समीप पाँचों

वस्तुवोंको धर दिया। अब विवेकाश्रम चित्तवृत्तीसे पूँछते हैं। हे चित्तवृत्ते! ये जो पाँचों छिद्रोंके समीप पाँचों वस्तु रक्खी हैं सो हरएक छिद्रके पास जो हरएक वस्तु धरी है, सो सब अपने प्रकाश करके तुमको दिखाई देतीहैं, या किसी दूसरे प्रकाश करके तुमको दिखाई देतीहैं। चित्तवृत्ति कहतीहै, हे भ्राता! ये जो बाजासे आदि लेकर पाँच वस्तुएं पांचों छिद्रोंके समीप रखीहैं सो सब अपने आपसे नहीं दिखाती हैं किंतु दीयेके प्रकाश करके सब दिखाई पडती हैं और मटिका वगैराभी सब दीयेकेही प्रकाश करके प्रकाशमान हो रहेहैं. स्वतः इनमें प्रकाश नहीं है। क्योंकि मटकेके भीतर यदि दीयेका प्रकाश न हो, तब मटिका प्रभृति कोई भी प्रकाशमान न हों अर्थात् कोई भी दिखाई न पडै। विवेकाश्रम कहतेहैं, हे चित्तवृत्ते! यह तो दृष्टांतहै, अब मैं तेरेको दार्ष्टांतमें इस दृष्टांतको घटाकर समझाताहूं। यह जो स्थूल शरीरहै, मटकास्थानापन्न है और जो इसमें मुख, नासिका, चक्षु करणादिक इन्द्रियोंके गोलक हैं, ये सब छिद्रस्थानापन्नहैं। अंतःकरणरूपी दीपकहै, तिसकी वृत्तिरूपी बत्तीहै, वासनारूपी तिसमें तेल भरा है, और ज्योतिरूप आत्मा तिस बत्तीमें आरूढ होकर प्रकाश कररहाहै, तिस आत्माके प्रकाश करकेही देहादिक इन्द्रियें सब प्रकाशमान हो रहीहैं स्वतः देहादिकोंमें प्रकाश नहीं है। क्योंकि चेतनस्वरूप आत्माही है, आत्मासे भिन्न सब जडहैं। इसी वास्ते आत्माके सम्बन्ध करके देहादिक सब चेतन प्रतीत होतेहैं, स्वतः इनमें चेतनता नहींहै। जब कि, आत्मा इस शरीरका त्याग करदेताहै, तब यह मृत्तिका कही जातीहै। जबतक आत्मा इसमें विराजमानहै, तबतक यह सर्व व्यवहारोंको करताहै, आत्माके चले जानेसे कोई व्यवहारकोभी नहीं कर सक्ता और आत्मा देहादिकोंमें रह करके भी सबसे असंग होकरके ही रहता है और देहादिकोंका साक्षीभी है। हे चित्तवृत्ते! जिस चेतन आत्माकी सत्ता करके देहादिक चेतनवत् प्रतीत होतेहैं वही मेरा आत्मा है। चित्तवृत्ति कहतीहै हे विवेकाश्रम! आपने कहाहै आत्मा देहादिकोंके अंतर रहताहै और फिर असंगभीहै यह वार्ता मेरी समझमें नहीं आतीहै, इसको फिर किसी दृष्टांतद्वारा मेरेको समझाइये॥ ३॥

हे चित्तवृत्ते ! नृत्यशालामें जो दीपक जगाकर रात्रिके समयमें धरा जाता है वह दीपक तिस समग्र सभाको प्रकाश करता है और सभाके भीतर जो कि सभापति है तिसकोभी प्रकाश करता है और जो नृत्य करनेवाली वेश्या है और जितने कि सभासद हैं अर्थात् नृत्यकारीके देखने वाले हैं, उन सबकोभी दीपक प्रकाश करता है और जितने कि वेश्याके साथ बाजोंको बजानेवाले हैं, उन सबको भी दीपकही प्रकाश करता है, यह तो दृष्टांत है। अब इसका दार्ष्टांतमें घटाते हैं यह शरीररूपी तो एक सभा है याने नृत्यशाला है, तिसके भीतर चेतनरूपी दीया प्रकाशमान हो रहा है, मनरूपी सभापति है, बुद्धि-रूपी वेश्या नृत्यकारी नृत्य कररही है, इन्द्रियरूपी सब बाजोंके बजानेवाले हैं, विषयरूपी सभासद सब देखनेवाले हैं। जैसे दीपक अपने स्थानमें स्थित होकर सभा और सभापति आदिकोंको प्रकाश करता है और उनसे असंग होकर और उनका साक्षी होकर शरीररूपी सभाको और मनरूपी सभापति आदिकोंको प्रकाशभी करता है और उनसे असंगभी रहता है और मन आदि-कोंका साक्षीरूप करकेभी स्थित रहता है, दीपककी तरह किसीके साथ संसर्गकोभी प्राप्त नहीं होता है, इस रीतिसे आत्मा असंग है ॥ ४ ॥

हे चित्तवृत्ते एक और दृष्टांतको भी तूं श्रवणकर। जितनी रचना तेरेको बाहर दिखाई पडती है, इतनीही रचना इस शरीरके भीतर है बल्कि इससे अधिकभी कुछ रचना होती है। जैसे कि, बाहरके ब्रह्मांडकी रचना चेतन ईश्वरकी सत्ताकरके होती है, तैसे शरीररूपी ब्रह्मांडकी रचना जीवात्माकी सत्ता करके ही होती है सोभी तुमको दिखाते हैं, हे चित्तवृत्ते ! इस शरीरके भीतर नाभिस्थानसे एक नाडी निकली है, तिस एकसे फिर एकसौ नाडी निकली हैं, फिर उन सौनाडियोंमेंसे एक २ नाडीसे बहत्तर २ हजार नाडी निकली हैं, फिर एक २ में आगे औरभी अनेक नाडियें निकली हैं, जो कि, बालोंके अग्रभागसे भी अति सूक्ष्म हैं, फिर इसी शरीरमें स्थूल नाडियेंभी बहुतसी हैं, जो कि, सारे शरीरमें फैली हुई हैं। आगे उन नाडियोंमें भी तारतम्य है, परस्पर स्थूल सूक्ष्मता है, जैसे वृक्षकी जडसे एक मोटी डाल निकलती है उस एकसे आगे चार पांच उससे कुछ पतली डालें निकलती हैं,

फिर उन एक २ डालसे अन्य पतली डालें निकलती हैं फिर उनसे और बहुतसी पतली २ निकलती हैं । ऐसेही इस शरीररूपी वृक्षका भी हिसाब है । फिर इसके भीतर और बड़ीभारी रचना होरही है । नाभीसे ऊपर षट्चक्र हैं, फिर इसके भीतर बहुतसी हड्डियोंके जोड हैं, उनमें स्थूल सूक्ष्मता है, हजारों वैद्योंने इस शरीरके भीतरकी रचनाके जाननेके लिये बडे २ यत्न किये तबभी उनको पूरा २ हाल इसकी रचनाका न मिला. क्योंकि जैसे बाहरका ब्रह्माण्ड अनन्त है, तैसे भीतरका ब्रह्मांडभी अनन्त है फिर शरीरमें अनेक स्थान बने हैं । प्रथम जब पुरुष अन्नादिकोंको खाता है, तब वह अन्न भीतर पेटमें जाता है, जठराग्नि वहाँपर फिर तिसको पकाती है, फिर तिसका एक सारभूत निकलकर जुदे स्थानमें जाता है, मल नीचे गुदा स्थानमें जाता है, जल मूत्रस्थानमें जाता है वह जो सार रस पकाहुवा है, वह फिर दूसरे स्थानमें जाकरके पकता है । तिसका स्थूल भाग रुधिर होता है, सूक्ष्म भाग वीर्य होजाता है, उन दोनोंको नाड़ियोंमें व्यानवायु हिसाबसे बाँटती है. सब नाड़ियें और हड्डियें अपने २ कामको करती हैं । उसी चेतन आत्माकी सत्ता करके शरीरमें सब नाडियें वगैरह अपने २ कामको करती हैं, आत्मा नहीं करता । यदि आत्माको कर्त्ता मानोगे तब एकही आत्मा एक क्षणमें भीतरके हजारों कामोंको कैसे करसकेगा और अनेक आत्मा एक शरीरमें रह नहींसक्ते हैं जो अपना २ काम सब करेंगे । यदि कहो आत्माके हुक्मसे सब मन इन्द्रियादिक और नाडियें आदिक अपना २ काम सब करते हैं सोभी नहीं बनता है । क्योंकि मन, इन्द्रिय और नाभी आदिक सब जड हैं, जडपर एक हुक्म नहीं होसक्ता है । दूसरा हुक्मकी तामील करनेका तिसको ज्ञान नहीं है । तीसरा राजा जैसे एक देशमें नौकरोंको काम करनेका हुक्म देकर आप दूसरे देशमें चलाजाता है और तिसके वहाँपर न रहनेसेभी काम होता रहता है तैसे आत्माके भी शरीरसे चले जानेपर काम होना चाहिये सो तो नहीं होता है इसलिये हुक्मसे कहना नहीं बनता है, हुक्म चेतनपरही होसक्ता है, जिसको तिसका ज्ञान है जडपर हुक्म नहीं होसक्ता है । इसलिये शरीरके भीतर आत्माके हुक्मसे काम होना बनता भी नहीं है । फिर सब किसीको यह ज्ञान तो है जो मेरा आत्मा देहके भीतर विद्यमान है. परन्तु यह ज्ञान किसीको भी नहीं है, जो

मेरा आत्मा इदानींकालमें भीतर इस कामको कर रहा है या मन आदिकोंको हुक्म दे रहा है, या प्रेरणा कररहा है, इसीसे जाना जाता है, आत्मा अकर्ता है, असंग है, केवल साक्षीमात्र है, जैसे बाहरके ब्रह्मांडके अन्तर्वर्ति तारागण सब लोक हैं और जड हैं, परन्तु व्यापक चेतन ईश्वरकी सत्ता करके अपने कामको सब कर रहे हैं। ईश्वर न किसीको प्रेरणा करता है और न किसीको कुछ कहता सुनता है, केवल चेतन ईश्वरकी सत्ता करके सूर्य्य चन्द्रमा आदिक सब तारागण अपने २ चक्रपर घूम रहे हैं और भी जगत्के काम सब हो रहे हैं। तैसे देहके भीतर भी जो कि चेतन आत्मा है, तिसकी सत्ता करके देहके भीतर सब काम होरहे हैं। जब आत्मा देहको त्यागकर देहान्तरमें चला जाता है, तब देह मुरदा होजाता है, फिर गलसड जाता है इनहीं युक्तियोंसे साबित होता है आत्मा अकर्ता है असंग है। जिस वास्ते आत्माके प्रकाश करकेही सब काम देहमें होते हैं और बाहरका व्यवहारभी होता है इसी वास्ते आत्माके प्रकाश गुणकाही सबको ज्ञान है तिसके आनन्दगुणका ज्ञान किसीको नहीं इसी हेतुसे जीव बाह्य विषयोंकी तरफही सब दौडतेही हैं। उस आनन्दरूपी गुणकी प्राप्तिका मुख्य साधन प्रथम वैराग्य है फिर चित्तकी वृत्तिका निरोधरूप योग दूसरा साधन है अर्थात् तू बाह्यविषयोंकी तरफसे वृत्तिको हटाकर अन्तर आत्माके सन्मुख करना ये दूसरा साधन आत्मानन्दकी प्राप्तिका है, इसीमें दृष्टान्तको दिखाते हैं॥ ९॥

एक राजाकी कन्याकी मैत्री मन्त्रीके लडकेके साथ होगई कुछ दिनोंतक तो यह वार्ता छिपी रही, फिर यह वार्ता धीरे २ प्रगट होने लगी। तब राजाकोभी इसका हाल मालूम होगया। राजाने अपने मनमें यह विचार किया कोई ऐसा उपाय करना चाहिये जिस उपायसे मन्त्रीका लडकाभी मरजाय और हमारी बदनामी न हो। राजाने अपने वैद्यको बुलाकर कहा एक ऐसी दवाई बनाकर डिबियामें बंद करके लाओ जिसके पास वह डिबिया रात्रिको धरीजाय वह आदमी उसकी सुगंधिसे मर जाय। वैद्यने कहा कलको मैं ऐसीही दवाई बनाकरके लाऊंगा। दूसरे दिन वैद्य वैसी दवाईको बनाकर डिबियामें बंदकर रुमालमें बांधकर राजाके पास ले आया। राजाने रात्रिके

समय उस डिबियाको एक लौंडीको दिया और कहा इसको वजीरके लडकेके पलंगपर शिरकी तरफ धर आना। वह लौंडी जाकर उसके पलंगपर तकियाके पास शिरकी तरफ धर आई। आगे वह लडका अफीम खाता था तिसने जाना नौकर अफीमकी डिबियाको धर गया है उसने डिबियाको खोलकर उसमेंसे बहुतसी दवाई जहरवाली खाली परन्तु वह मरा नहीं, किंतु जीताही रहा। तब राजाने इसका सबब वैद्यसे पूछा वैद्यने कहा जिसकी गंधसे आदमी मर जाता है तिसके खानेसेभी जो नहीं मरा है इसका सबब यह है जो तिस आदमीका मन किसी दूसरेमें लगा है उसको अपने शरीरकी भी कुछ खबर नहीं है, इसीसे वह नहीं मरा है। उसके मरनेका सहजही एक उपाय है वह यह है जिसके साथ तिसका अति प्रेम है वह स्त्री सुन्दर भूषण और वस्त्रोंको पहरकर तिसके सामने खडी होकर उसकी आंखसे आँख मिलाकर कहे अब फिर कदापि नहीं आऊँगी ऐसा कहकर तिसके सामनेसे हट जाय अर्थात् छिपजाय। तब वह तुरन्तही मर जायगा। राजाने कन्यासे कहा कन्या उसी तरह श्रृंगार करके तिसके सन्मुख जाकर तिसकी आँखमें आँख मिलाकर कहने लगी अब मैं फिर कभी भी नहीं आऊंगी ऐसा कहकर जब वह हटी तुरन्त ही वह भी मरगया। कन्याके कहनेसे उसको ऐसा भारी दुःख हुआ जिस दुःखको वह सम्हार नहीं सका, तुरन्तही उसके प्राण निकल गये। यह तो दृष्टांत है। अब दार्ष्टान्तमें इसको घटाते हैं:-हे चित्तवृत्ते! बुद्धिरूपी राजकन्या है, मनरूपी लडकेके साथ इसका चिरकालका प्रेम होरहा है, बुद्धिरूपी कन्या जब कि, ब्रह्मविद्यारूपी श्रृङ्गारको करके मनके सन्मुख होकर मनकी तरफसे हटकर आत्माकी तरफ होजाती है, तिसी कालमें मनभी विषयोंकी तरफसे मरजाता है, मनके मरनेके समकालमेंही पुरुषको आत्मानन्दकी प्राप्ति होजाती है और पुरुषका जन्म मरण रूपी संसार भी छूट जाता है। क्योंकि यह संसार तो सब मनकाही बनाया हुआ है:-

ब्रह्मबिंदु उपनिषदमें कहा है:-

मनो हि द्विविधं प्रोक्तं शुद्धं चाशुद्धमेव च।
अशुद्धं कामसंकल्पं शुद्धं कामविवर्जितम्॥ १॥

मन दो प्रकारका होता है एक तो शुद्ध मन होता है, दूसरा अशुद्धमन होता है । जो मन कि कामना करके युक्त है, वह अशुद्ध कहा जाता है जो कि, कामनासे रहित है, वह शुद्ध कहा जाता है ॥ १ ॥

मन एव मनुष्याणां कारणं बंधमोक्षयोः ।
बन्धाय विषयासक्तं मुक्त्यै निर्विषयं स्मृतम् ॥ २ ॥

मनुष्योंका मनही बन्ध मोक्षका कारण है, जब कि, मन विषयोंमें आसक्त होजाता है तब बन्धका कारण होजाता है, जब निर्विषय होजाता है तब मुक्तिका कारण होजाता है ॥ २ ॥

यतो निर्विषयस्यास्य मनसो मुक्तिरिष्यते ।
तस्मान्निर्विषयं नित्यं मनः कार्यं मुमुक्षुणा ॥ ३ ॥

जिस हेतुसे मनके निर्विषय होजानेका नामही मुक्ति कथन किया है, तिसी हेतुसे मुमुक्षु पुरुषोंको उचित है जो मनको नित्यही निर्विषय करें ॥३॥

निरस्तविषयासङ्गं सन्निरुद्धं मनो हृदि ।
यदा यात्युन्मनीभावं तदा तत्परमं पदम् ॥ ४ ॥

विषयोंके संगसे रहित होकर जब कि, मन हृदयमें जिस कालमें रुक जाता है तिसी कालमें मन परमपदको प्राप्त होजाता है ॥ ४ ॥

तावदेव निरोद्धव्यं यावद्धृदि गतं क्षयम् ।
एतज्ज्ञानं च मोक्षश्च ह्यतोऽन्यो ग्रन्थविस्तरः ॥ ५ ॥

तावत्पर्यन्त मनका निरोध करना चाहिये यावत्पर्यन्त मन हृदयमें नाशको नहीं प्राप्त होजाता है मनके नाश होजानेका नामही ज्ञान और मोक्षभी है और तो सब ग्रन्थोंका विस्तार मात्रही है ॥ ५ ॥

हे चित्तवृत्ते ! मनको प्रथम शुद्ध करना ही कर्तव्य है, मनकी शुद्धिके बिना पुरुषको नित्य सुखकी प्राप्ति नहीं होती है और मनकी शुद्धिसे रहित जो पुरुष है, वही अज्ञानी कहा जाता है क्योंकि तिसको अपने स्वरूपका ज्ञान नहीं है और बिना अपने स्वरूपके ज्ञानसे ही यह जीव दुःखको प्राप्त होता है । जहां तहां इसकी फजीहती होती है, इसीमें तुम्हारेको एक दृष्टांत सुनाते हैं ॥

एक पुरुषका नाम बेवकूफ था और तिसकी स्त्रीका नाम फजीहती था, एक दिन तिसकी स्त्री तिसके साथ लडाई झगडा करके कहींको चली गई तब वह अपनी स्त्रीको जंगलमें खोजनेके लिये गया, एक आदमीने तिससे पूछा तुम जंगलमें किसको खोजतेहो ? उसने कहा मैं अपनी स्त्रीको खोजता हूँ उसने पूंछा तुम्हारी स्त्रीका नाम क्या है ? उसने कहा तिसका नाम फजीहती है, फिर पूंछा तुम्हारा नाम क्या है तिसने कहा हमारा नाम बेवकूफ है तब कहा फिर तुम स्त्रीको क्यों खोजते हो बेवकूफको फजीहतियोंकी कौन कमती है, जहांपर जावोगे उसी जगहपर तुम्हारी बहुतसी फजीहती होजायगी। हे चित्तवृत्ते! यह तो दृष्टांत है, अब इसको दार्ष्टांतमें घटाते हैं अपने स्वरूपसे भूला हुआ जीव बेवकूफ हो रहा है, इधर उधर जंगलों और पर्वतोंमें पडा आत्माको खोजता है इसी वास्ते जहांपर जाता है, वहांपर ही इसकी फजीहती होती है। क्योंकि शरीरके अंतर आनंदरूप आत्माका त्याग करके क्षण परिणामी विषयोंमें आनंदको खोजता है। जैसे कूकर सूखी हड्डीको चबाता है, तब तिसके मसूढोंसे रुधिर निकसता है, तिसी रुधिरका रस तिसको स्वादु लगता है और वह जानता है इस हड्डीसे मेरेको स्वाद आरहा है सूखी हड्डीमें स्वाद कहां है स्वाद तो तिसको अपने रुधिरमें है तैसे विषयी पुरुषभी विषयमें स्वादको मानता है, विषयमें स्वाद नहीं है, क्योंकि विषय जड है स्वाद तो अपने आत्मामेंही है यदि स्त्रीरूपी विषयमें आनंद होता तब भोगोत्तर कालमें भी होता ऐसा तो नहीं है, किंतु वीर्यके स्खलन कालमें क्षणमात्र वृत्ति स्थिर होजाती है, तिस वृत्तिमें चेतनका प्रतिबिंब पडता है, तिसीसे इसको आनन्दकी प्रतीति होती है, वह आनन्द आत्माकाही है। विषयका नहीं है। परन्तु इतना इसको ज्ञान नहीं है जो यह आनन्द आत्माका है। यदि इतना इसको ज्ञान होजाय तब विषयोंके पीछे यह टक्करें न मारे। जिस वास्ते अज्ञानी बनकर विषयोंके पीछे यह जीव दुःख पाता है इसी वास्ते इसकी फजीहती होती है॥ ६॥

हे चित्तवृत्ते! इसी विषयपर तुमको हम एक और दृष्टांत सुनाते हैं। एक पुरुषके पुत्रका नाम रूपसेन था तिस रूपसेनके सम्पूर्ण वदनमें बाल बहुतसे

थे, जब कि, वह बाल बहुत बढगये तब एक दिन तिसके पिताने मनमें विचार किया बालोंके बढजानेसे तो लडका हमारा बडा कुरूप जान पडता है, बाल इसके मूंड दिये जाँय, तब यह सुन्दर मालूम होने लगेगा । उसने लडकेसे बालोंके मुँडवानेके लिये कहा परन्तु लडकेने न माना क्योंकि वह उनके मुंडवानेके सुखको जानता नहीं था जब रात्रिके समय लडका सोगया तब तिसके पिताने तिसके सब बालोंको मूँड डाला सबेरे जब कि, लडका जागा तब तिसने अपने बदनपर बालोंको न देखकर जाना मैं तो वह रूपसेन नहींहूं क्योंकि, रूपसेनके वदनपर तो बडे २ बाल थे मेरे वदनमें तो वह नहीं हैं चलो कहीं रूपसेनको खोज लावें ऐसा विचार करके वह जंगलमें जाकर रूपसेनको खोजने लगा । जब कि, तिसने रूपसेनको कहीं भी न देखा तब घरमें आकर अपने बापसे पूँछने लगा रूपसेन कहाँहै उसने कहा रूपसेन तूही है । पिताके कहनेसे तिसका भ्रम दूर हुवा और तिसने जानलिया जिसको मैं खोजताथा वह तो मैंही हूं मैं भ्रम करके अपनेको बाहर जंगलोंमें खोजता फिरताथा, यह तो दृष्टांत है । अब इसको दार्ष्टांतमें घटाते हैं । यह जो जीवात्मा है ये ही ईश्वररूप था, राग द्वेष रूपी बाल जो इसके अंत:करण-रूपी वदनमें निकसे थे, उन्हों करके यह कुरूप प्रतीत होताथा और अपने असली स्वरूपसे भूलकर अन्यरूपसे अपनेको इसने मान रखाथा अर्थात् रागद्वेष कर्तृत्व भोक्तृत्वादिकोंसे रहित होकर अपनेको कर्तृत्व भोक्तृत्वादिकों-वाला इससे मान रखाथा । पितारूप गुरूने इसकी कुरूपताके हटानेके लिये रागद्वेषरूपी बाल इसके दूर करदिये तबभी इसका भ्रम दूर न हुवा, फिरभी अपनेको खोजताही रहा । जब इसको विचार हुवा, तब इसने फिर गुरुरूप पितासे पूछा वह रूपसेनरूपी आत्मा कहाँ है तिसने कहा वह तुमही हो, ऐसा जब कि, महावाक्यों करके तिसको बताया तब इस्का भ्रम दूर हुवा और इसने जानलिया कि जिसको मैं अपनेसे भिन्न जान करके खोजताथा वह तो मैंही निकला फिर अपनेको सुखरूप आत्मा मानकर यह सुखी होगया ॥ ७ ॥

हे चित्तवृत्ते ! इसीविषयपर एक और दृष्टांत तुमको हम सुनाते हैं—

किसी नगरमें एक बनियां बडा धनी और धर्मात्मा रहताथा, तिसका एकही लडकाथा परन्तु तिस लडकेका चालचलन अच्छा नहींथा। बनियांने उसको सुमार्गमें प्रवृत्त होंनेके लिये बहुतसा उपदेश किया तबभी लडकेने नहीं माना तब बनियांने क्या किया एक लकडीके खम्भेमें बहुतसा द्रव्य भर-करके तिसको मकानके भीतर आंगनमें गडवा दिया और अपनी बहीमें लिख दिया, जब कि, बेटा तुमको द्रव्यका काम पडै तब थंभशाहसे लेलेना। कुछ दिनोंके पीछे वह बनियां मरगया तब तिसके लडकेने बाकीका सब धनभी खराब कर दिया जब कि, तिसके पास खानेको भी न रहा, तब वह बही खातेको खोलकर देखने लगा। कई एक पत्र उलटनेके बाद एक पत्रेपर लिखाहुवा मिला बेटा जब कि तुमको कुछ रुपैयाका काम पडे, तब थंभशाहसे लेलेना। वह लडका थंभशाहकी तलाश करने लगा जबकि कहींभी तिसको थंभशाहका पता न लगा, तब दुखी होकर घरमें एक टूटीसी खाटपर पडारहा एक महात्मा तिस बनियांके गुरू कहींसे आनिकले उन्होंने आकर बनियांको पूछा लोकोंने कहा वह तो मरगये हैं और उसका लडका घरमें है परन्तु सब धनको उसने उजाड दिया है, अब वह खानेसेभी तंग है। महात्मा बनियांके घरमें गये और जाकर देखा तो उसका लडका शोकयुक्त एक खाटपर पडा है, महात्माने हालचाल पूंछा तो उसने सब हाल कह सुनाया। और यहभी कहा बहीपत्रेपर लिखा है जब कि, तुमको रुपैयाका काम पडै तब थंभशाहसे लेलेना मैंने थंभशाहकी बहुतसी तलाश की है परन्तु तिसका पता कहींभी नहीं लगता है। महात्माने विचार किया थंभ नाम खम्भेका है मालूम होता है उस बनियांने लडकेको मूर्ख जानकर अपना धन खंभेमें गाड दिया है। महात्माने घरमें जाकरके देखा तो आंगनमें एक खंभा लगाहुआ उनको दिखाई पडा उन्होंने अपनी लाठीसे तिसको ठकोरा तब तिसमेंसे छन्नसी आवाज आई, महात्माने जान लिया इसी खंभेमें धन गाडा है तिस लडकेसे कहा यदि तू आगे सुचालसे रहे तब हम तुमको खंभ-शाहको बताते हैं, लडकेने नेम कर दिया मैं कभीभी आजसे लेकर कुकर्म नहीं करूंगा। महात्माने कहा इस खंभेको तुम खोदो इसीमें तुमको धन मिलैगा। इसीका नाम थंभशाह है। लडकेने तिसको खोदा तब उसमें बहु-

तसा धन तिसको मिला उसी दिनसे कुकर्मका तिसने त्याग कर दिया और महात्माको गुरु करके मानने लगा । हे चित्तवृत्ते ! यह तो दृष्टान्त है, अब इसको दार्ष्टान्तमें घटाते हैं । इस शरीररूपी थंभमें पितारूपी परमेश्वरने आत्मरूपी धनको गाड दिया है, जीव विषयभोगरूपी कुकर्ममें लगकर जब दुःखी हुआ तब सुखरूपी धनकी तलाश करने लगा, महात्मारूपी गुरुने कहा बाहर सुख नहीं है सुखरूप धन तो तुम्हारे शरीररूपी खंभेमें ही गडा है, महात्मा आत्मतत्त्ववित् गुरुकी कृपासे आत्मारूपी धनकी प्राप्ति होती है ॥ ८ ॥

चित्तवृत्ती कहती है हे विवेकाश्रम ! जीवात्माको रहनेका नियतस्थान शरीरको आपने बताया है और ईश्वरात्माको सारे ब्रह्मांड भरमें आपने बताया है आपके कथनसे तो जीवात्माका और ईश्वरात्माका भेद सिद्ध हुआ दोनोंका अभेद तो सिद्ध न हुआ । विवेकाश्रम कहते हैं हे चित्तवृत्ते ! निरवयव निराकारका उपाधिके बिना भेद किसी प्रकारसेभी नहीं हो सक्ता है । उपाधियों करकेही जीवात्मा ईश्वरात्माका भेद प्रतीत होता है, वास्तवसे इन दोनोंका भेद नहीं है, किन्तु अभेदही है । जैसे एकही आकाश घट मठ उपाधियोंके भेदसे घटाकाश मठाकाश कहा जाता है, वास्तवसे आकाशमें भेद नहीं है । उपाधियोंके विद्यमानकालमेंभी आकाशका भेद नहीं है और उपाधियोंके नाश होजानेपर भी आकाशका भेद नहीं है, क्योंकि निराकार वस्तुका भेद किसी प्रकारसे भी नहीं होसक्ता केवल भेदका कथनमात्रही है तैसे निराकार निरवयव शुद्ध बुद्ध स्वरूप आत्माकाभी भेद बिना उपाधिके किसी प्रकारसेभी नहीं होसक्ता है उपाधियोंके विद्यमान कालमेंभी आत्माका अभेदही है और उपाधियोंके नाश होजानेपरभी आत्माका अभेदही है, व्यवहारमें उपाधियोंके विद्यमान कालमें भेदका जो कथन है वह मिथ्या है, क्योंकि भेद केवल कथनमात्रही है वास्तवसे नहीं है । वह एकही चेतन माया अविद्या इन दो उपाधियों करके जीव ईश्वर नामसे कहाता है । स्वरूपसे जीव ईश्वरका भेद नहीं है । एकही चेतन तीन प्रकारके भेदको प्राप्त होजाता है, माया उपाधि करके सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान् ईश्वर कहा जाता है और अविद्या उपाधि करके अल्पज्ञ असमर्थ जीव नामसे कहा जाता है जो कि माया अविद्या दोनों उपायोंसे रहित है वह शुद्ध

ब्रह्म कहा जाता है । चित्तवृत्ति कहती है एकही चेतन तीन प्रकारका कैसे होगया ? आपसे आप होगया या किसी दूसरेने कर दिया ? आपसे आप तो नहीं हो सक्ता है, क्योंकि वह इच्छा आदिकोंसे रहित है, दूसरा कोई इससे बडा चेतन माना नहीं है, जिसने इसको तीन भेद कर दिये हों तब कैसे तीन प्रकारका चेतन बन गया। विवेकाश्रम कहते हैं, हे चित्तवृत्ते ! एकही चेतन मायाकरके तीन प्रकारका बन गया है। जैसे चेतन अनादि है तैसे मायाभी अनादि है । अनादि उसको कहते हैं जिसकी उत्पत्तिका कोईभी आदि काल न हो जो उत्पत्तिसे रहित स्वत: सिद्ध हो वही अनादि कहा जाता है, जो उत्पत्तिवाला हो वह सादि कहा जाता है और तिस मायामें दो अंश हैं एक शुद्ध, एक मलिन, शुद्ध उपाधि ईश्वरकी है, मलिन जो अविद्या है वह जीवकी उपाधि है, उपाधियोंके अनादि होनेसे जीव ईश्वरभी दोनों अनादि कहे जातेहैं, इसीसे जीव ईश्वरका भेदभी अनादि कहा जाताहै और अविद्या चेतनका कल्पित संबंधभी अनादिहै । तात्पर्य यहहै जीव १, ईश्वर २, शुद्धचेतन ३, जीव ईश्वरका भेद ४, अविद्या ५, अविद्या चेतनका सम्बंध ६, यह षट् पदार्थ अनादि हैं, इन छहोंमेंसे एक शुद्धचेतन अनादि अनंतहै और बाकीके पांच अनादि सांतहैं अर्थात् जीवत्व ईश्वरत्व ये दो धर्मभी मिथ्या हैं केवल चेतन भाग जो धर्मी है सो सत्य है, वही सद्रूप चेतन एक है द्वैतसे रहित है । द्वैत सब स्वप्नकी तरह कल्पित है, जैसे स्वप्नका प्रपंच सब झूँठा है बिना हुवेही प्रतीत होता है तैसे जाग्रत्का प्रपंचभी सब झूँठा है बिना हुवेही प्रतीत होता है । संपूर्ण जगत् जब कि बिना हुवेकी तरह प्रतीत होता है, तब तिसमें यह कहना नहीं बनता है जो जगत्को किसने बना दिया है और कब बना है ? मायाका स्वरूप अनिर्वचनीय है, अनिर्वचनीय उसको कहते हैं जिसका कुछभी निर्वचन अर्थात् निर्णय न होसकै । यदि सत्य कहें तब तिसका नाश न हो, सो नाश होता है । असत्य कहें तिसकी प्रतीति न हो प्रतीति भी तिसकी होती है । सत्य असत्यसे विलक्षणहो उसीका नाम माया है । बडे २ ऋषि मुनि इसका विचार करते २ हार गये किसीकोभी मायाके स्वरूपका पता नहीं लगा है । जो मायाके पीछे पडता है उसीको माया काटकर खाजाती है ।

इसलिये बुद्धिमान् इस मायाके स्वरूपका निर्णय नहीं करता है किंतु जो इसके त्यागकी इच्छाको करता है वही इससे बच जाता है । इसमें एक दृष्टांत तुमको सुनाते हैं:-

एक पुरुष एक वृक्षके नीचे बैठाथा, ऊपरसे एक काले रंगका सर्प उसकी गोदमें आकरके गिरा, अब जो वह पुरुष यह विचार करै जो यह सर्प किसीने फेंका है या आपसे आप गिरा है, तबतक तो वह सर्प उसको काटही लेगा और वह विचार भी तिसका निष्फल होजायगा, इसलिये वह बिनाही विचारके तुरंतही तिस सर्पको फेंकदे, सर्पके फेंकनेसे ही वह सर्पके डसनेसे बच सक्ता है विचार करनेसे वह नहीं बच सक्ता है । इसी तरह मायाके स्वरूपकाभी विचार है, मायाकोभी अनिर्वचनीय जानकर तुरंतही इसका त्याग करदेवै आत्माके विचारमें लग जावे तब शीघ्रही आत्मानंदको प्राप्त होजायगा ॥ ९ ॥

हे चित्तवृत्ते ! एक और दृष्टांतको सुनो-किसी पुरुषने एक महात्मासे पूछा संसाररूपी वृक्षका बीज कौन है ? और इसकी शाखाएँ परशाखाएँ और फल पत्र पुष्पादिक कौन हैं ? महात्माने कहा संसाररूपी वृक्षका बीज तो माया है, वह माया क्या है सो स्त्री है येही संसाररूपी वृक्षका बीज है और शब्द स्पर्श रूप रस गंधादिक इसके पत्ते हैं । काम क्रोधादिक इसकी शाखाएँ परशाखाएँ हैं । पुत्र कन्यादिक तिसके फल हैं । तृष्णारूपी जल करके यह बढता है । जिस पुरुषने स्त्रीरूपी मायाका त्याग करदिया है, उसने संसारका त्याग कर दिया है । क्योंकि स्त्रीही बंधनका कारण है, मोहके वशमें प्राप्त होकर पुरुष स्त्रीका संसर्ग करते हैं, क्षणमात्र सुखके लिये अनेक जन्मोंमें फिर कष्टको उठाते हैं और स्वर्गादिकोंमें जो विषभोग हैं उनकी प्राप्तिके लिये पुरुष बडे २ उपवासादिक व्रतोंको करते हैं वह सुखभी दुःखसे मिलाहुवा है और विचारदृष्टिसे तो सब लोकोंमें जितना कि, विषयजन्य सुख है वह बराबरही है ॥

आत्मपुराणमें कहा है:-

रेतसो निर्गमे यावत्सुखं तावद्धि विद्यते ।
विण्मूत्रयोर्विसर्गेपि ततो वै नाधिकं सुखम् ॥ १ ॥

स्त्रीके साथ भोगकालमें वीर्यके त्याग करनेमें जितना सुख होता है उतनाही सुख विष्ठा और मूत्रके त्याग करनेमें भी होता है, तिससे अधिक स्त्रीके संभोगका सुख नहीं है ॥ १ ॥

जायते म्रियते ब्रह्मा विट्क्रिमिश्च तथैव हि।
सुखदुःखकरं तद्वत्सदेहत्वं समं द्वयोः ॥ २ ॥

जैसे क्रिमि जन्मता मरता है, तैसे ब्रह्माभी जन्मता मरता है और सुख दुःख और सदेहत्वभी दोनोंको बराबरही है ॥ २ ॥

तिसी आत्मपुराणके चतुर्थ अध्यायमें दध्यङ्ङाथर्वण ऋषिने इन्द्रके प्रति कहा है:—

निंदयामो वयं यद्वत्कष्टं जन्म शुनोऽधनाः।
अस्माकं च तथैवैते निंदन्ति ब्रह्मवादिनः ॥ ३ ॥

ऋषि कहते हैं हे इन्द्र! जैसे हमलोक कूकरके जन्मकी निंदा करते हैं, तैसेही ब्रह्मवादीलोक हमारे जन्मकी निंदा करते हैं ॥ ३ ॥

उत्कृष्टता यथास्माकं स्वदेहे शक्र विद्यते।
शुनोपि च स्वदेहे सा तादृश्येवहि वर्तते ॥ ४ ॥

हे इन्द्र! जैसे हमलोकोंकी उत्कृष्टता अपने देहमें है, तैसे कूकरकी उत्कृष्टता अपने देहमें है ॥ ४ ॥

श्वविष्ठासदृशो देहः शक्र सर्वशरीरिणाम्।
हेयं धिया परित्यक्के तस्मिन्नात्मा प्रकाशते ॥ ९ ॥

हे शक्र! कूकरके विष्ठाके तुल्य सब जीवोंके शरीरभी मल मूत्रवाले हैं। हेय बुद्धिका त्याग करके तिसमें आत्माही प्रकाशमान है अर्थात् शरीरोंकी जैसे तुल्यता है तैसे आत्माकीभी है ॥ ९ ॥

हे चित्तवृत्ते! विचार दृष्टिसे तो कहींभी न्यूनाधिकता प्रतीत नहीं होती है केवल विचारकी न्यूनाधिकता प्रतीत होती है। विचारहीन दुःख पाता है, विचारवान् सुखको प्राप्त होता है ॥ १० ॥

हे चित्तवृत्ते! एक लडकेने मधु खानेके लिये मधुके छातामें हाथ डाला, ज्योंही तिसने मधुके लोभसे हाथ डाला त्योंही मधुमाखियोंने तिसको काट-

खाया, यह तो दृष्टांत है । दार्ष्टांतमें जीवरूपी लडकेने विषयरूपी मधुके भोगनेके लिये हाथ डाला आगे रागद्वेष रूपी मक्खियोंने इसको काट खाया है उनके काटनेसे यह दुःखी भी रहता है, तब भी उन विषयोंका यह त्याग नहीं करता है ॥ ११ ॥

हे चित्तवृत्ते ! एक और दृष्टांतको सुनोः—किसी ग्राममें एक कुतिया व्याई थी उसने बहुतसे बच्चे दिये, ग्रामके लडकोंने हरएकको अपना २ बनाकर तिसके गलेमें अपना २ पट्टा बाँध दिया । किसीने लाल, किसीने पीला, किसीने काला, जिसने जिस बच्चाके गलेमें अपना पट्टा बांधा, वह बच्चा उसीके पीछे दौडने लगा, यह तो दृष्टांत है । दार्ष्टांतमें अविद्यारूपी कुतिया व्याई है, तिसने जीवरूपी बच्चोंको किया है, आचार्यरूपी बालकोंने अपने २ कंठी और माला आदिक पट्टे अपने २ बच्चोंके गलोंमें बांध दिये हैं, इसी वास्ते वह अपने २ आचार्यके पीछे चलते हैं, विचार नहीं करते हैं इसी संसारचक्रमें सब जीव भ्रमते फिरते हैं । हे चित्तवृत्ते ! वेदांतशास्त्रके विना जितने शास्त्र हैं ये सब जीवको फँसानेवाले हैं, छुडानेवाला कोई भी नहीं है । क्योंकि सब इसको पापी अधमही बनाते हैं, असंग आत्माको पापोंका संगी वेदसे विरुद्ध बताते हैं । वेदांतशास्त्र इसको पापोंसे रहित शुद्ध बुद्ध स्वरूप कहता है, तुम वेदांतको धारण करो ॥ १२ ॥

हे चित्तवृत्ते ! किसी नगरमें एक साहूकार रहता था, तिसके तीन लडके थे, तीनों लडके जब सयाने होगये तब एकदिन साहूकारने अपने तीनों लडकोंको बुलाकर कहा मेरे पास एक अलौकिक मणि है, उस मणिमें अनेक गुण भरे हैं, और यह मणि इस डिबियामें रक्खी है, इस मणिको तुमलोक सँभाल करके रक्खो, रात्रिके समय अपनी २ पारी लगाकर अर्थात् रात्रिके तीन विभाग करके एक २ भागमें एक २ लडका इस मणिको लेकर एकांतमें बैठकर इस मणिमेंसे गुणोंको ग्रहण करै । लडकोंने मणिवाली डिबियाको लेकर हिफाजतसे धर दिया, कुछ कालके पीछे उनका पिता मरगया, तब लडकोंने एकदिन रात्रिके तीन विभाग करके अर्थात् सवा २ पहरकी एक २ की पारी लगादी । प्रथम एक लडका तिस मणिको लेकर कोठेपर एकांत

देशमें जाकर बैठा जब कि, तिसने मणिको निकालकर अपने आगे रक्खा तब मणिके प्रकाशसे अँधेरा जातारहा, जब कि, कुछ क्षण मणिको रखे हुवे व्यतीत हुआ तब तिसका मन खाली बैठनेमें न लगा तब उसने क्या किया थोडीसी राखको बटोरकर अपने पास रख लिया, जब कि थोडी देर बीते तब जरासी राखको मणिपर डाल देवै फिर जरासी अपने ऊपर डाल देवै, इसी तरह करते उसकी पारी गुजरगई। फिर दूसरेकी पारी आई उसको भी सवा पहर बिताना मुश्किल होगया। वह तिस मणिके प्रकाशमें शिकार करके खाने लगा। फिर जब तीसरेकी पारी आई और वह मणिको आगे रखकर बैठा इतनेमें चन्द्रमा उदय होआया। चन्द्रमाकी किरण जो मणिपर पडी, तब मणिसे अमृत निकलने लगी, उस अमृतको वह पान करने लगा, तब तिसको बडा आनंद प्राप्त हुवा।

हे चित्तवृत्ते! यह तो दृष्टांत है, अब इसको दार्ष्टान्तमें घटाकर तुमको बताते हैं, वेदांत शास्त्ररूपी एक मणि है, उस मणिको तीन पुरुषोंने पाया है एक तो वह पुरुष है, जो कि, वेदांत रूपी शास्त्रको पढकर मद्यपान परस्त्री गमनादिकोंको करते हैं, वह तो राखको उडाकर अपने ऊपर और मणिके ऊपर डालते हैं। क्योंकि, ऐसी मणिको पाकरके फिर भी अपनी आयुको विषय विकारोंमें खोते हैं। दूसरे वह हैं जो कि, वेदान्तरूपी मणिके प्रकाशसे शिकार करते हैं। उनका शिकार करना येही है। वेदांतकी बातोंको सुनाकर लोकोंसे धनको वंचन करना। तीसरा वह है जो कि, वेदांत रूपी मणिको पाकर तिसके प्रकाशसे सत्य असत्यका निर्णय करते हैं और मनको विषयोंकी तरफसे हटाकर आत्मामें लगाते हैं। वही तिस मणिके आनंदगुणको प्राप्त होते हैं॥ इसीपर कहाभी है:—

पाठकाः पठितारश्च ये चान्ये शास्त्रचिंतकाः।
सर्वे व्यसनिनो मूर्खा यः क्रियावान् स पंडितः॥ १॥

जितनेक शास्त्रको पढने और पढानेवाले हैं और जो केवल चिंतनही करनेवाले हैं, शास्त्रोक्त धारणासे शून्य हैं वह संपूर्ण व्यसनी और मूर्ख हैं। जो कि शास्त्रको पढकर वैराग्यादि गुणोंको धारण करता है वही पंडित है॥ १॥

हे चित्तवृत्ते ! विना शास्त्रोक्त गुणोंके धारण करनेसे वह आत्मानंद कदापि नहीं मिलसक्ता है ॥ १३ ॥

हे चित्तवृत्ते ! यह आत्मा असंग है, अकर्त्ता है, अभोक्ता है, देहादिकोंके साथ सम्बन्ध होनेसे इसने अपनेको कर्त्ता भोक्ता आदि गुणोंवाला मान रक्खाहै, सी पर तुमको एक और दृष्टांतको सुनाते हैं:–

किसी राजाके मंदिरमेंसे सोये हुवे राजाके बालकको रात्रिके समयमें एक भील उठाकर लेगया और वनमें लेजाकर अपने लडकोंके साथ तिसको भी पालने लगा जब कि वह लडका कुछ बडा हुआ तब वहभी भीलोंके कर्मोंको करने लगा अर्थात् घृणासे रहित होकर हिंसा प्रधान जितने कर्म हैं उन सबको वह करने लगा, तिसी वनमें एक महात्मा जा निकले उन्होंने तिस लडकेको पहचान कर कहा तुम तो राजकुमार हो भील नहीं हो, भीलोंके साथ रहकरके तुमनेभी अपनेको भील मान रक्खा है और अयोग्य कर्मोंको तुम कर रहे हो, तुम अपनेको चीन्हो और अपने स्वरूपका स्मरण करो । जब तुम अपनेको चीन्होगे तब तुम भीलपनेको त्यागकर अपने राजमंदिरमें जाकर आनंदसे रहोगे । महात्माके वाक्यको सुनकर राजपुत्रकोभी सब अपना पिछला स्मरण हो आया और उसको विश्वास होगया जो मैं भील नहीं हूँ किन्तु राजपुत्र हूँ वह तुरंतही भीलोंके वेशको त्यागकर अपने घरको चला आया, हे चित्तवृत्ते ! यह तो दृष्टांत है । अब दार्ष्टांतको सुनो इस जीवरूपी राजकुमारने अज्ञानरूपी भीलकी संगति करके अपनेको भील मान रक्खा है, वह भीलपना क्या है कर्म भोक्ता पुनः पापी बनना, अज्ञानी बनना, इसीसे जीव नानाप्रकारके फलोंके देनेवाले कर्मोंको कर्ता है और संसाररूपी वनमें दुःखी होकर पडा भ्रमता है । पूर्व जन्मके किसी पुण्य कर्मके प्रभावसे तिस जीवको जब कि आत्मवित् गुरुसे मिलाप होगया तब तिस महात्मा गुरुने उपदेश किया तू अज्ञानी नहीं है याने भील नहीं है न तू कर्ता है न भोक्ता है न तू पुण्य पापके सम्बन्धवाला है किंतु तू सच्चिदानन्दरूप है तू अपने स्वरूपसे भूला हुआ है, अपने स्वरूपका तुम स्मरण करो और अपने आपको चीन्हो तब तुमको सुख होगा । महात्माके उपदेशसे तिसको अपने स्वरूपका स्मरण होता है, तभी तिस भीलपनेको त्यागकर सुखी हो जाता है ॥ १४ ॥

हे चित्तवृत्ते ! यह भेदवादी पुरुषको दुःखी करता है, इसी वास्ते शास्त्रोंमें भेदवादकी निंदा की है, अज्ञानी भेदवादियोंने ईश्वरमें भी भेदको लगाकर अपने २ भिन्न २ ईश्वर कल्पना करलिये हैं इसीमें तुमको एक दृष्टांत सुनाते हैं:-

एक वैष्णव साधु गणेशजीका भक्त था, गणेशजीकी उपासनाको वह बडे प्रेमसे करता था, उसने पांच तोला सोनेकी एक गणेशजीकी मूर्ति बनवाई और पांच तोला सोनेकी एक गणेशजीके वाहन मूसाकी मूर्ति बनवाई दोनोंकी बडे प्रेमसे वह पूजा करने लगा। पूजा करते २ जब कि, कुछ काल व्यतीत होगया तब एक दिन तिसको कुछ द्रव्यका काम पडा तिसके पास उस कालमें एक टकाभी नहीं था, उसने विचार किया इन मूर्तियोंको वेंचकर अब काम चला लेना चाहिये फिर कुछ द्रव्य कहींसे मिलजायगा तब और मूर्तियें बनवा लेवेंगे वह दोनों मूर्तियोंको लेकर एक सुनारके पास वेंचनेको लेगया सुनारने दोनोंको तौलकर दोनोंका बराबरही दाम लगा दिया तब वैरागीने उससे कहा अरे लंडी, गणेशजीको मूसेके बराबर करदिया गणेशजी स्वामी हैं मूसा उनका वाहन है, क्या कहीं स्वामी और वाहनभी बराबर होसक्ता है ? सुनारने कहा अरे वैरागडे स्वामिपना और वाहनपना अर्थात् गणेशपना और मूसापना जो तुमने इन मूर्तियोंमें मान रखा है उसको तुम निकाल करके अपने पास रख लेयो हमको तो सोनेका दाम देना है सोना तौलमें दोनोंका बराबर है अर्थात् दोनों मूर्तियोंमें पांच २ तोला सोना बराबरही है वैरागी सुनारकी वार्ताको सुनकर चुप होगया। हे चित्तवृत्ते ! यह तो दृष्टांत है। अब दार्ष्टांतको सुनो। सब शरीर पांचों भूतोंकेही कार्य्य हैं और सब शरीरोंमें अस्थि, मज्जा, चर्म, रुधिर, मलमूत्रभी बराबरही हैं फिर सब शरीरोंकी उत्पत्तिभी वीर्यसे होती है और सब शरीर उत्पत्ति नाशवाले भी हैं और सब शरीरोंमें खान पानादिक व्यवहारभी बराबरही होता है। भेद तो शरीरोंमें किसी प्रकारसे भी साबित नहीं होता है और आत्माभी सब शरीरोंमें चेतनरूप करके बराबरही विद्यमान है और अभिमानभी सब शरीरधारियोंको बराबरही है कोईभी देहधारी अपनेको नीच और दूसरेको उत्तम नहीं समझता

है, किंतु सब कोई अपनीही जातिको उत्तम जानते हैं, किसी प्रकारसे भी भेद नहीं साबित होसक्ता है । तब भी अज्ञानी लोक कल्पित धर्मोंको मानकर भेद बुद्धिको करके दुःखको पाते हैं । यदि उन कल्पित धर्मोंको निकाल दिया जाय तब बाकी आत्माही केवल शुद्ध सच्चिदानंद रूप सिद्ध होता है । सो ज्ञानी लोकही सर्वत्र आत्मदृष्टिको करते हैं वही सुखी रहते हैं अज्ञानी लोक आत्मदृष्टिको नहीं करते हैं । जैसे कल्पित गणेशपनेको और मूसापनेको छोड करके सोना दृष्टिको सुनार करता है । तैसे ज्ञानवान् भी ब्राह्मणत्व क्षत्रियत्वादि धर्मोंका त्याग करके सर्वत्र आत्मदृष्टिकोही करता है । इसीसे वह सुखी रहता है । चित्तवृत्ति कहती है हे भ्राता ! जब कि ज्ञानवान्की दृष्टिमें आत्मा सब शरीरोंमें एक है, शुद्ध है, निर्दोष है, तब फिर सबके साथ ज्ञानवान् खान पानादि व्यवहारको क्यों नहीं करता है । विवेकाश्रम कहते हैं हे चित्तवृत्ते ! ज्ञानवान् दो प्रकारके होते हैं । एक तो जीवन्मुक्त कहे जाते हैं, जिनको अपने शरीरकी भी खबर नहीं है और दुसरे चतुर्थी भूमिकावाले आचार्य्य कहे जाते हैं, जो कि जीवन्मुक्त हैं वह तो अजगर वृत्तिवाले होते हैं । किसीने उनके मुखमें अन्नको डाल दिया तब खाजाते हैं पानीको डाला तब पीजाते हैं धूपमें किसीने उठाकर धर दिया या छायामें या वर्षामें उसी जगह पडे रहते हैं उनको सब बराबरही होता है । क्योंकि, वह आत्मानंदमें डूबे रहते हैं जगत् उनको दिखाताही नहीं है आत्माही आत्मा उनको सर्वत्र दिखाता है उनके मुखमें ब्राह्मणादि चारों वर्णोंमेंसे कोई अन्नको डालदे या भंगी चमार डालदे उनके अन्न खानेमें उनको कोई भी दोष नहीं होता है । क्योंकि उनकी दृष्टिमें न कोई ब्राह्मण है न कोई भंगी या चमार है । आत्माही आत्मा है वह किसीसे बातचीतभी नहीं करते हैं उन जीवन्मुक्तोंका शरीरभी थोडेही कालतक रहता है, वह तो सर्व प्रकारसे निर्दोष हैं वेदादिक किसी शास्त्रकी आज्ञाभी उनपर नहीं है । क्योंकि वह ब्रह्मरूप हैं, महान् सुखमें वह निमग्न रहते हैं । दूसरे आचार्य्य कोटिमें जो हैं, वे सर्वत्र आत्मामें समदृष्टि हैं अर्थात् सब जीवोंमें एकही आत्माको देखते हैं, इसीसे उनका किसीके साथ राग द्वेष नहीं होता है । परन्तु वह समवर्ती नहीं होते हैं क्योंकि समवर्ती होनेसे

श्रेष्ठाचार जाता रहता है। दूसरा यदि सब किसीका जूंठा खानेसे ज्ञानी होसक्ता हो तब जितने कि भंगी चमार वगैरा हैं येभी सब ज्ञानी कहे जायँगे, इनको तो कोईभी ज्ञानी नहीं कह सक्ता है। इसीसे समवर्तीका नाम ज्ञानी नहीं है। तीसरा जिसको इतर सब व्यवहारके वर्णाश्रमका ज्ञान है, वह यदि समवर्ती होकर सबका खाने लगेगा तब लोकमें वह पतित कहावेगा । जब कि, और सब विधि निषेधका तिसको ज्ञान है और उसको वह मानता है तैसे अपनेसे नीच ऊँच जाति वालेके जूंठेके निषेधकाभी तो तिसको ज्ञान है। अगर पागलकी तरह उसको कोईभी ज्ञान न हो तब तिसको जूंठे खानेका भी दोष न हो । वह पागलोंमें तो गिना नहीं जाता। इसलिये तिसको समवर्ती होना मना है । चौथा ज्ञानका फल समवर्ती होना कहींभी नहीं लिखा है। ज्ञानका फल राग द्वेषकी निवृत्ति परमानंदकी प्राप्ति है। सो जो रागद्वेषसे रहित है; अपने आत्मानंदमें आनंदित है वही ज्ञानी है जो राग द्वेष करके युक्त विषय भोगोंसे आनन्द मानता है, वही अज्ञानी है। ज्ञानी अज्ञानीका इतनाही फरक है ॥ १९ ॥

विवेकाश्रम कहते हैं हे चित्तवृत्ते ! इसी विषयपर एक और दृष्टांत तुमको सुनाते हैं:-

एक पंडित किसी ग्रामको कथा बाँचनेके लिये जातेथे, रास्तामें एक खेतके किनारेपर एक वटके पेडके नीचे बैठकर सुस्ताने लगे। उस खेतमें एक जाट हल जोतताथा, उसके आगे जो बैलथे वह दुर्बलथे शीघ्र चल नहीं सक्तेथे बार २ खडे होजातेथे जब २ तिसके बैल खडे होजायँ तब २ वह जाट अपने बैलोंको बुरी २ गाली अर्थात् बैलोंके खसमको जोरू और लडकीके फलानकी गालियें देताथा पंडितने उससे पूछा यह बैल किसके हैं उसने कहा यह बैल हमारे हैं तब कहा इनका खसम कौन हुवा जाटने कहा इनके खसम हमहीं हुए तब पंडितने कहा तुम जो इन बैलोंको गालियाँ देतेहो वह सब गालियें किसको लगती हैं जाटने कहा जो सारा गालियोंके अर्थोंको समझता है ये सब गालियें उसी सारेको लगती हैं पंडित जाटकी बातको सुनकर लाजवाब होगया। क्योंकि जाटका यह तात्पर्यथा मैं तो गालियोंके अर्थको समझता

नहीं मेरेको क्यों लगेंगी ? तुम पंडितहो तुमको इनके अर्थका ज्ञान है यह गालियें तुमहींको लगैंगी। हे चित्तवृत्ते! जिस पुरुषको गालियोंके अर्थका ज्ञान नहीं होता है, उसको गालियें नहीं लगती हैं। इसीसे वह बुराभी नहीं मानता है। जैसे बालकको गालियोंके अर्थका ज्ञान नहीं है इससे बालक गाली देनेपर बुरा नहीं मानता है, और बालककी गालीपर दूसराभी कोई बुरा नहीं मानता है। जैसे बालकको धर्म, अधर्म, पुण्य, पापका ज्ञान नहीं है, इसीसे उसको पुण्य पापभी नहीं लगता और शास्त्रकारोंने भी तिसको पुण्य पापका निषेध किया है। जैसे बालकको आचारका ज्ञान नहीं है ऊपर मुखसे तो रोटी खाता जाता है और नीचेसे मलमूत्रका त्यागभी करता जाता है किसी-कोभी तिसकी क्रियापर ग्लानि नहीं फुरती है। तैसे जीवन्मुक्तको भी कोई पुण्य पाप नहीं लगते हैं क्योंकि तिसको उनका ज्ञानही नहीं है और न कोई तिसकी क्रिया पर बुराही मानता है और जो कि आचार्य्यकोटिमें ज्ञानी हैं, वह यदि भ्रष्टाचारको करने लगें परस्त्रीगमन, मांस मद्यका सेवन करें तब तिनको अवश्य पाप लगेगा। क्योंकि उसको तो सर्व प्रकारका ज्ञान है और लोक उससे घृणाभी करते हैं क्योंकि उसको अभी ज्ञानका कुछभी आनंद नहीं मिला है तब महान् आनन्दका त्याग करके तुच्छ आनन्दके साधनोंमें वह प्रवृत्त न होता। जिनको काकविष्ठाके तुल्य जानकरके त्याग कर दियाथा उनके ग्रहण करनेमें फिर प्रवृत्त न होता वह ज्ञानी आचार्य्य नहीं है। ज्ञानवान् चतुर्थ भूमिकावाला आचार्य्यकोटिमें वह गिना जाता है जो निषिद्ध कर्मोंका त्याग करके विहित कर्मोंको निष्कामतासे श्रेष्ठाचारके लिये अनासक्त होकर करता है, अथवा निषिद्ध कर्मोंको और विहित कर्मोंको नहीं करता है. केवल आत्म-चिंतनही करता है वही आचार्य्य कोटिमें है। और जो विहित कर्मोंको त्याग करके निषिद्ध कर्मोंको करता है और आत्मबोधसे शून्य होकर असंग बनता है, वही वन्ध्य ज्ञानी, मूर्ख, पाप पुण्यका भागी होता है। तिसका जन्म मरण-रूपी संसार कदापि नहीं छूटता है ॥ १६ ॥

अष्टावक्र गीतामें कहा है:—

यस्याभिमानो मोक्षेपि देहेपि ममता तथा ॥
न वा योगी न वा ज्ञानी केवलं दुःखभागसौ ॥ १ ॥

जिस पुरुषका मोक्षमें अभिमान है और देहादिकोंमें ममता है वह पुरुष न तो योगी है और न ज्ञानी है केवल दुःखको ही वह भजनेवाला है ॥ १ ॥

कपिलगीतामेंभी ज्ञानीका लक्षण दिखाया है–

न निंदति न च स्तौति न हृष्यति न कुप्यति ।
न ददाति न गृह्णाति मुक्तः सर्वत्र नीरसः ॥ १ ॥

जो न किसीकी निंदा कर्त्ता है और न किसीकी स्तुति कर्ता है, न किसीको देता है न किसीसे लेता है, जो सर्वत्र रागसे रहित है वही मुक्त कहाजाता है ॥ १ ॥

सानुरागां स्त्रियं दृष्ट्वा मृत्युं वा समुपस्थितम् ।
अविकलमनाः स्वस्थो मुक्त एव महाशयः ॥ २ ॥

जो अनुरागके सहित स्त्रीको देखकरके और मृत्युको भी सन्मुख उपस्थित देखता है, फिरभी जिसका मन व्याकुल नहीं होता है वह महाशय मुक्तरूप है ॥ २ ॥

हे चित्तवृत्ते ! जो सर्वत्र आत्माकोही देखता है किसीमें भी कमती बढती नहीं देखता है वही आत्मदर्शी तथा ज्ञानी कहा जाता है आत्माकी समतामें एक और दृष्टांत तुमको सुनाते हैं:–

जो कि मैला उठानेवाले भंगी होते हैं, वहभी अपनेसे ऊंचा किसी क्षत्री ब्राह्मणादि जातिवालेको नहीं मानते हैं, क्योंकि पंजाबदेशमें जब कि भंगियोंका विवाह होता है और इनकी सब बिरादरी आकरके बैठती है और जिस कालमें वर कन्याका पाणिग्रहण होता है तिस कालमें भंगनका बाप अपनी लडकीके हाथको दामादके हाथ पर धर करके कहता है इसको तुम भंगन मत जानना कोई ब्राह्मणी जानना या क्षत्रानी जानना वैश्यानी या शूद्रानी जानलेना या इनसे और कोई छोटी जातिवाली मुगलानी या पठानी जान लेना भंगन मत जानना । तात्पर्य उसका यह होता है भंगी जाति किसीसे छोटी नहीं है अब देखिये जिनके छूजानेसे स्नान करना पडता है वहभी अपनेको छोटा नहीं मानते हैं अब बताइये इसका कारण क्या है ? इसका कारण यही है कि, आत्मामें छोटापना किसीके भी नहीं है केवल उपाधियोंका भेद है इसीसे भंगीभी

अपनेको छोटा नहीं मानते हैं । भंगियोंके गुरु लालबेग हुवे हैं, एक दिन भंगियोंने अपने लालबेग गुरुसे कहा महाराज ! हम लोगोंका कल्याण होनेमें तो कोईभी संदेह नहीं है, क्योंकि आप सरीखे हमारे गुरू हैं, परन्तु इन क्षत्री ब्राह्मणोंका कल्याण कैसे होगा ? भंगियोंके गुरु लालबेगने कहा उनका कल्याण तुम्हारे हाथ है, तुम लोक जो सबेरे गलियों और बाजारोंमें झाडू देते हो और वह लोक जो स्नान करके आते हैं तुम्हारे झाडूकी रज जो उनपर पडती है उसीसे उनका भी कल्याण होजायगा । भंगी लोक भी अपनी जातिको इतना बडा मानते हैं बस इसीसे जाना जाता है । आत्मामें नीचता ऊंचता नहीं है, आत्मा सबका बराबरही है । क्योंकि सबको अपनेही आत्माकी पवित्रताका अभिमान है । इसी तरह और भी जितने कि, मुसलमान ईसाई बौद्ध जैनी वगैरह मतोंवाले हैं, सब कोई अपने २ आत्माको पवित्र मानते हैं । इसीसे भी जाना जाता है कि, आत्मामें अपवित्रता और नीचता नहीं है । यदि होती तब सब ऐसा न मानते । हे चित्तवृत्ते ! आत्मा सबमें एकही है जैसे एकही आकाश मंदिरमें भी है, और पाखानामें और मसजिदमें गिरजेमें जैनमंदिरमें बौद्धमंदिरमें भी है, भंगी चमारोंके घरोंमें भी है, उत्तम २ मूर्तियोंमें भी है, मलमूत्रादिकोंके पात्रोंमें भी है; परंतु अति सूक्ष्म होनेसे उपाधियोंके साथ तिसका कोईभी सम्बंध नहीं है और न उपाधियोंके गुण दोषों करके आकाश गुणदोषवाला होजाता है । इसी प्रकार एक ही आत्मा ऊंच नीच सब शरीरोंमें विद्यमान है, शरीरोंके गुण दोषों करके वह गुणदोषवाला नहीं होता । क्योंकि, आकाशसे भी अतिसूक्ष्म है इसीसे असंग और निर्लेप भी है ॥ १७ ॥

हे चित्तवृत्ते ! इसी विषयमें एक और दृष्टांतभी तुमको सुनाते हैं:—

किसी नगरके बाहर नदीके किनारेपर एक अद्वैतवादी महात्मा रहते थे, एक दिन एक द्वैतवादी पंडित उनके साथ वादविवाद करनेको गये और जाकर पंडितने महात्मासे कहा मैं द्वैतको साबित करताहूं आप मेरेसे वाद विवाद करिये । महात्माने कहा हमारे शिरके बाल बहुत बढगयेहैं, इनके बढनेसे हमारा शिर दुखताहै जबतक हम हजामत बनवा नहीं लेंगे तबतक

वादको नहीं करैंगे सो प्रथम तुम जाकर किसी नाऊको बुलालावो पश्चात् हम तुमसे शास्त्रार्थ करैंगे पंडितजी जाकर नाऊको बुला लाये नाऊने आकर महात्माकी हजामत बनाई जब कि नाऊ हजामत बना चुका तब महात्माने नाऊसे कहा तुम तो परमेश्वर हो। नाऊने कहा अरे महाराज! मैं तो महापापीहूँ मैं कैसे परमेश्वर हो सक्ताहूँ? महात्माने पंडितसे कहा देखो द्वैतको तो यह नाऊ भी साबित कर रहाहै बल्कि इस नाऊसे जो मूर्ख हैं महामूढ हैं वह भी द्वैतको साबित कररहेहैं जब कि तुम भी द्वैतको ही साबित करोगे तब फिर इस नाऊसे भी तुम्हारी कुछ अधिकता साबित नहीं होगी किंतु तुल्यताही होगी। अधिकता तो अद्वैत सावित करनेसे होती है॥ १८॥

हे चित्तवृत्ते! किसी नगरमें एक द्विज रहताथा तिसके तीन लडके थे, एक सबसे बडा पंद्रह या सोलह बरसका था, दूसरा तिससे छोटा सात बरसका था, तीसरा चार बरसका था। तिस नगरके बाहर एक देवताका स्थान था, वहांपर सालमें एक दिन मेला होता था, तिसमें वह द्विज अपने लडकोंको साथ लेकर चला। मेलामें भीड बहुत थी देवस्थानतक जाना कठिन था इसलिये छोटे लडकेको तिसने कांधेपर उठालिया मझोलेका हाथ पकड लिया, बडा पीछे २ चलने लगा। जो कि, सबसे छोटाथा वह कांधे पर बैठा हुआ आरामसे देवस्थानमें पहुँच गया। मझोला भी धक्के खाकर पहुँचा धक्के तो तिसने खाये परन्तु बापका हाथ न छोडा। जो कि, सबसे बडा था वह धक्के खाकर पीछेको ही रह गया। हे चित्तवृत्ते! यह तो दृष्टांतहै अब दार्ष्टांतमें सुनो। देवस्थान कौन है? आत्मपद, पिता कौन है? परमेश्वर, छोटा लडका वेदांतीहै, मझोला लडका भक्तहै, सबसे बडा कर्मी है। जब कि, परमेश्वर अपने तीनों लड़कोंको आत्मपदकी तरफ लेजाताहै तब सबसे बडा लडका जो कि भेदवादी कर्मी है, वह तो रागद्वेषरूपी धक्कोंको खाकर पीछेही संसारमें रह जाता है जब कि शुभ कर्म करताहै तब स्वर्गको जाता है स्वर्ग भोगकर नीचेको आताहै। इसीतरह चक्रमें भ्रमताही रहता है और जो दूसरा भक्त है, वह धक्के तो खाताहै

अर्थात् भेद भावना करके उपासना करनेसे जन्मोंकी परंपरारूपी धक्कोंको तो खाताहै परन्तु अपने पितारूपी परमेश्वरका हाथ नहीं छोडताहै । इसलिये कभी न कभी अंतःकरणकी शुद्धिद्वारा वहभी पहुँच जाताहै तीसरा जो ज्ञानी है वह बिनाही धक्कोंके खानेसे पिताके कांधेपर सवार होकर पिताके साथ जो अभेद ज्ञान होताहै, इसीसे वह आरामसे पहुँच जाताहै क्योंकि जो भेद मानताहै वही दूर रहजाताहै । अथवा वेदरूपी पिताके कांधेपर बैठकर पहुँच जाताहै । वेदकी आज्ञा तिसके ऊपर नहीं रहतीहै यही कांधेपर बैठनाहै और जो कि वेदमें ईश्वरमें प्रेम करना कहाहै तिसको जो भक्त नहीं छोडताहै यही हाथ पकडना । और कर्मी अर्थवादरूपी फलोंको जो वेदने कहाहै उन्हींके पीछे दौडताहै इसलिये वह परमपदसे दूर रह जाताहै . क्योंकि दुःखका जनक भेदवाद है और सुखका जनक अभेदवाद है । बिना अभेदवाद ज्ञानके इस जीवकी मुक्ति कदापि नहीं होती है ॥ १९ ॥

श्रुतिभी इसी अर्थको कहतीहैः—

अन्योसावहमन्योस्मीत्युपास्ते योऽन्यदैवतम् ।
न स वेद नरो ब्रह्मन् स देवानां यथा पशुः ॥ १ ॥

वह ब्रह्म मेरेसे अन्य याने भिन्नहै और मैं तिससे भिन्नहूँ, इस प्रकार जान करके जो अन्य देवतोंकी उपासना करताहै हे ब्रह्मन् ! वह पुरुष ब्रह्मको नहीं जानताहै । जैसे मनुष्योंके लादनेके पशु होतेहैं, वैसेही वहभी देवताके लादनेका एक पशुही होताहै ॥ १ ॥

भेदवादकथोन्मत्तः कार्य्याकार्य्यविवर्जितः ।
मद्यसंपर्कमात्रेण कथं वाच्यः स वै द्विजः ॥ इति ॥ १ ॥

जो द्विज भेदवादरूपी कथामें मत्त होरहाहै, कर्तव्य अकर्तव्यको नहीं जानताहै, जैसे मदिराकी एक बूंदके मिलनेसे गंगाजलका घट अपवित्र होजाताहै वैसेही तिसकोभी जान लेना ॥ १ ॥

हे चित्तवृत्ते ! जैसे कोई पुरुष अंधकारसे अंधकारको दूर करना चाहे जैसे कोई मट्टीकी गैया बनाकर दूध पीना चाहे, जैसे कोई संकल्पकी मिठा-

ईसे पेट भरना चाहे तैसेही वहभी करता है जो भेदवादका आश्रयण करके अपनी कल्याणकी इच्छा करता है। हे चित्तवृत्ते ! इसीपर एक और दृष्टांतको भी सुनोः—

हे चित्तवृत्ते ! एक पुरुष गणेशजीकी उपासना करता था, एक दिन वह पूजा कररहा था कि इतनेमें एक मूसा जो बिलसे निकला वह आतेही गणेशजीके ऊपर चढकर चावलोंको खाने लगा और भोगकी मिठाईको लेकर भाग गया। तब तिस उपासकने विचार किया कि गणेशजीसे तो मूसाही बली निकला और पूजाभी बलीकी करना चाहिये। क्योंकि बलीसे ही कुछ मिलता है। दुर्बलसे तो कुछ मिलता नहीं ऐसा विचार करके तिसने एक मूसाको पकड कर तिसके पांवमें तागा बांधकर पर्यंकमें तिसको बिठाकर तिसीकी नित्य पूजा करने लगा। एक दिन बिलारने वहांपर आकर मूसेकी तरफ जो ताका मूसा तुरंतही भागकर बिलमें घुसगया। उपासकने देखा मूसासे तो बिलारही बली निकली। उसी दिनसे वह बिलारको बाँधकर चौकीपर बिठाकर तिसकी पूजा करने लगा। एक दिन कूकर एक वहांपर आ निकला और ज्योंही वह बिलारपर झपटा त्योंही बिलार भागी। बिलारको भागते देखकर उस उपासकने जान लिया कि बिलारसे कूकर बली है। उसी दिनसे वह कूकरकी पूजा करने लगा। एक दिन वह कूकर उनके चौकामें चला गया तिसकी स्त्रीने एक लाठी जो उठाकर तिस कूकरको मारी वह भाग गया। तब तिसने जाना कूकरसे तो हमारी स्त्री बली है। उसी दिनसे अपनी स्त्रीकी वह पूजा करने लगा। एक दिन किसी वार्तासे तिसको अपनी स्त्रीपर क्रोध आगया लेकर लाठी तिसके मारनेको वह दौडा तब स्त्री भागी। उसने मनमें विचार किया सबसे बली तो मैंही निकला। उसी दिनसे वह अपनी पूजा करने लगा। आत्माकी मानस पूजा करते २ तिसके मनका निरोध होगया उसीसे उसको परमानंदकी प्राप्ति होगई। हे चित्तवृत्ते ! जैसे पक्षी दिनभर इधर उधर भ्रमता रहता है, सुखको नहीं प्राप्त होता है। जब अपने घोंसलेमें आता है तभी तिसको सुख मिलता है। तैसे यह जीवभी अपनेसे भिन्न देवतान्तरकी सुखकी प्राप्तिके लिये उपासना करता है परंतु इसको सुख नहीं मिलना है।

क्योंकि वासनोंको लेकर उपासना करता है । जब कि यह निर्वासनिक होकर अपने आत्माकी अहंग्रह उपासनाको करता है तबही इसको नित्य सुखकी प्राप्ति होती है अन्यथा किसी प्रकारसे भी नित्य सुखकी प्राप्ति नहीं होती है ॥ २० ॥

हे चित्तवृत्ते ! एक और दृष्टांतको सुनोः—

एक पुरुषके तीन लडके थे तीनोंमेंसे एक तो लूला और लंगडा था । दूसरा अंधा था तीसरा सर्वांग संपन्न था । तीनोंमेंसे जो कि लूला और लंगडा था यह तो मातापिताकी सेवा किसी प्रकारसे भी नहीं कर सकताथा। क्योंकि सेवा हाथपाँवसे होती है सो हाथ पांव तो तिसके थे नहीं, दूसरा जो अंधा था उसको दीखताही नहीं था इसलिये वह भी सेवालायक नहीं था । तीसरा जो कि, सर्वांग संपन्न था वही सेवालायक था और वही सेवा करता भी था क्योंकि तिसको सब कुछ दीखताभी था यह तो दृष्टांत है । अब इसको दार्ष्टांतमें घटाते हैं । संसारमें तीन प्रकारके पुरुष हैं, एक तो कृपण और आलसी हैं । दूसरे विषयी हैं । तीसरे उद्यमी और उदार हैं । तीनोंमेंसे जो कि कृपण और आलसी हैं वही लूले और लंगडे हैं । वह तो परमेश्वरकी सेवा किसी प्रकारसे भी नहीं करसक्ते हैं क्योंकि हाथोंसे वह कुछ दानको नहीं करते हैं और पांवसे चलकर किसी सत्संगमें या किसी महात्माके पास वह नहीं जाते हैं । और जो विषयी हैं, वह अंधे हैं क्योंकि उनको तौ परमार्थ दीखताही नहीं है और न उनको परमेश्वर भी दीखता है । इसलिये वह भी परमेश्वरकी सेवा बंदगी नहीं करसक्ते हैं तीसरे जो उद्यमी और उदार हैं, वही उद्यम करके सत्संगमें जाते हैं, हाथोंसे दान करते हैं, वही परमेश्वरकी सेवाको करते हैं । वही ज्ञानके भी अधिकारी कहे जाते हैं, दूसरे नहीं वही अन्तःकरणकी शुद्धिद्वारा ज्ञानको प्राप्त होकर मोक्षको भी प्राप्त होजाते हैं ॥ २१ ॥

हे चित्तवृत्ते ! इसी विषयपर एक और दृष्टांतभी तुमको सुनाते हैंः—

हे चित्तवृत्ते ! संसारमें तीन तरहके घोडे होते हैं, तीनोंमेंसे एक लादवे टट्टू कहलाते हैं, जिनपर कि, हमेशा बोझाही लादा जाता है । वह तो हमेशा लदतेही रहते हैं । और इसीमें मर भी जाते हैं । दूसरे रिसालेके घोडे

होते हैं, जो कि, तुरमके आवाजको सुनकर हमेशा कवायद परेटही करते रहते हैं। वह परेट कवायद करते २ ही मर जाते हैं। तीसरे तोपखानेके घोडे होते हैं, वह हजारों तोपोंके गोलोंके चलने परभी अपने कानको नहीं उठाते हैं। क्योंकि उनको इतना विश्वास हो चुका है, जो यह तोपें नित्य ही चलती रहती हैं इनके चलनेसे हमारी कुछभी हानि नहीं है। हे चित्तवृत्ते ! यह तो दृष्टांत है, अब इसको दार्ष्टांतमें घटाते हैं। संसारमें भी तीन प्रकारके पुरुष हैं, एक तो वे हैं जो कि, हमेशाही स्त्री पुत्रादिकोंकी सेवामें रहते हैं कभी भी कहीं सत्संगमें नहीं जाते हैं। वह तो लादवे टट्टू हैं। क्योंकि हमेशा स्त्री पुत्रादिक उनको लादतेही रहते हैं। और वह लदते २ उसीमें मर जाते हैं। दूसरे कर्मी हैं जो कि श्रुति स्मृति उक्त कर्मोंके करनेमें ही सदैवकाल लगे रहते हैं। रिसालेके घोडोंकी तरह हमेशा कर्मरूपी कवायदको ही करते रहते हैं। वह कवायद करते ही खतम होजाते हैं। तीसरे ज्ञानी हैं, जो कि अर्थवादरूपी स्वर्गादि फलोंके दिखानेवाले जो वेदादिक हैं उनके वाक्यरूपी गोलोंके चलने परभी वह तोपखानेके घोडोंकी तरह कानको नहीं उठाते हैं अर्थात् आत्मविचारको छोडकर अनात्मविचारमें नहीं लगते हैं, वही पुरुष परमानंदको प्राप्त होते हैं॥ २२ ॥

हे चित्तवृत्ते ! राजा अपनी सेनाको प्रथम युद्ध करनेकी रीतिको सिखाता है, एक मैदानमें अपनी फौजको लेजाकर आधी फौजको पूर्वकी तरफ भेज देता है और आधी फौजको पश्चिमकी तरफ भेज देता है। दोनों फौजें खाली बारूदके गोलोंको चलाती हुई आपसमें झूठी लडाईको करती हैं। जो लोक इस वार्ताको जानते हैं जो यह बारूदके झूठे गोले चलते हैं इनके चलनेसे हमारी कुछभी हानि नहीं होती है। तो वह दोनों फौजोंके बीचमें घूम २ करके दोनोंका तमाशा देखते हैं। न डरते हैं। और न भागते हैं। और जो लोक उन गोलोंको सच्चा जानते हैं वे डरते भी हैं और भागतेभी हैं यह तो दृष्टांत है। अब इसको दार्ष्टान्तमें घटाते हैं। इस संसाररूपी मैदानमें आसुरी संपदवाले और दैवी संपदवाले दो प्रकारके पुरुष हैं। दोनों अपने २ संकल्प विकल्पके रोचक भयानक अर्थवादरूपी झूंठे गोलोंको

पडे चलाते हैं । जो कि अज्ञानी जीव हैं, वह तो उन गोलोंकी आवाजको सुनकर डरते भी हैं और भागते भी हैं और जो कि ज्ञानवान् हैं, वह उन झूँठे गोलोंकी आवाजको सुनकर न डरते हैं न भागते हैं किंतु मैदानमें ही खडे रहते हैं और दोनोंके तमाशेको देखते हैं ॥ २३ ॥

हे चित्तवृत्ते ! एक आदमीको एक पुरुषका सौ रुपैया देना था, जब वह माँगे तभी वह कहदे, मेरे पास इस कालमें रुपैया नहीं है, जब मेरे पास होगा तभी मैं देऊंगा । एक दिन उसके लेनदारने तिसको पकड करके तंग किया, तब भी उसने तिसको रुपैया न दिया और कहा मेरे पास नहीं है और रुपैया उसके घरमें रखा था, परन्तु देता नहीं था । तब तिस लेनदारने कहा यदि तुम सौ गठा प्याजका खा जाओ तब हम तुमको रुपैया छोड देवैंगे । उसने सौ गठा प्याज खानेको मंजूर किया । जब खाने लगा तब तिससे नहीं खाये गये किंतु दस बीस खाकरकेही रह गया । तिससे और नहीं खाये गये । तब उसने कहा अच्छा तुम सौ लाल मिरचाको खालेवो तो हम तुमको रुपैया छोड देवैंगे । उसने मंजूर किया जब कि मिरचाको वह खाने लगा तब तिससे सौ मिरचा खाये न गये किंतु दस पांच ही खाकर रह गया । फिर तिसने कहा तुम सौ जूताकी मार सह लेवो हम तुमको रुपैया छोड देवैंगे । उसने मंजूर किया जब कि दस पांचही जूता लगे तभी चिल्लाने लगा सौ जूता भी उससे नहीं सहागया आखिर हारकर तिसको रुपया देनाही पडा । गठे, मिरचे, जूते सब तिसने मुफ्तमें खाये ॥

हे चित्तवृत्ते ! यह तो दृष्टांत है अब इसको दार्ष्टांतमें घटाते हैं । अज्ञानी मूर्ख संसारके दुःखों करके दुःखित होकरके जब कि आत्मवित् किसी महात्माके पास उपदेशके लिये जाता है, महात्मा यदि प्रथमही तिसको कह दे तूं ब्रह्म है तब वह किसी प्रकारसे भी नहीं मानता है, जब कि प्रथम तिससे अनेक देवतोंकी उपासना कराता है फिर अनेक प्रकारसे व्रतोंको करवाता है, फिर अनेक तीर्थोंमें तिसको फिराता है यही सब गठे स्थानापन्न तिसको खाने पडते हैं जब कि सब कुछ करके हार जाता है तब अंतमें महात्माकी कही हुई बातको मानता है । तात्पर्य यह है प्रथम मूर्ख सच्चे उपदेशको नहीं मानता है

जब कि इधर उधर भटककर हार जाता है, तब शास्त्रके जूतोंको खाकर इसको माननाही पड़ता है जो मैं ही ब्रह्महूं तब यह शांतिको प्राप्त होता है और इधर उधरकी भटकनासे छूटता है॥ २४ ॥

हे चित्तवृत्ते! एक और दृष्टांतको तुम सुनोः—

एक पुरुषका चित्त संसारसे जब बहुत उपराम हुआ तब तिसने अपनी स्त्रीसे कहा हमारा चित्त गृहस्थाश्रममें नहीं लगता है हम अब संन्यासाश्रमको अंगीकार करैंगे और गृहस्थाश्रमका त्याग करदेवैंगे। स्त्रीने तिसको बहुतसा मना किया परन्तु तिसने नहीं माना, जाकर एक महात्मासे कहा हमको उपदेश कीजिये, महात्माने उत्तम अधिकारी जानकर तिसको महावाक्यका उपदेश करके अपना चेला बना लिया तिसने मनमें विचार किया, महात्माने जो हमको उपदेश किया है इसमें तो कुछभी देर नहीं लगी है क्योंकि जरासी बात इन्होंने बता दी है न मालूम वेदोंमें क्या लिखा है। चलकर किसी पंडितके पास थोडे कालतक पढना चाहिये मनमें ऐसा विचार करके वह एक पंडितके पास पढनेके लिये गया और पंडितसे कहा हमको भी कुछ पढाया करिये। पंडितने कहा हमारे पास जितने कि विद्यार्थी पढते हैं एक २ काम हमारा सब विद्यार्थी करते हैं आपभी हमारा एक काम किया करैं और विद्या पढा करैं। तिसने भी मंजूर कर लिया और पंडितसे कहा आप हमको जो काम बतादें हम उसको नित्य किया करैंगे। पंडितने कहा हमारी गैयाका कोई गोबर पाथनेवाला नहीं है आप हमारी गैयाका गोबर नित्य पाथ दिया कीजिये उसने मंजूर करलिया। नित्यही पंडितजीकी गैयाका गोबर वह पाथा करै और विद्या पढा करै क्रमसे वह पढने लगा। प्रथम व्याकरण, फिर न्याय, फिर सांख्य, फिर योग, फिर मीमांसाको तिसने पढा इतनेमें बारहबरस व्यतीत होगये जब वेदांतको उसने पढा तब सब वेदोंका सारभूत वही बातआयी जिसको कि गुरूने प्रथमही तिसके प्रति बता दिया था। तब तिसने कहा बात तो वही सारभूत निकली जिसको कि, गुरूने मेरेको पहले ही बता दिया था गोबरको हमने बारहबरस मुफ्तमें पाथा। इसीपर एक महात्माने भी कहा हैः—

श्लोकार्द्धं च प्रवक्ष्यामि यदुक्तं ग्रन्थकोटिभिः ।
ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या जीवो ब्रह्मैव केवलम् ॥ १ ॥

अर्द्ध श्लोकमें हम उस वार्ताको कहते हैं जो वार्ता कि, करोडों ग्रन्थोंमें कही है। ब्रह्म सत्य है और जगत् मिथ्या है और जीव जो है सोई केवल ब्रह्मरूप है ॥ १ ॥

हे चित्तवृत्ते ! उत्तम अधिकारीके लिये तो एक वाक्यही अलं है, मध्यम अधिकारीके वास्ते सब शास्त्र बने हैं। कनिष्ठ अधिकारीके प्रति शास्त्रकी भी कुछ नहीं चलती है ॥ २९ ॥

हे चित्तवृत्ते ! एक और दृष्टांतको तुम सुनोः–

एक किसान अपने पकेहुए खेतको बहुतसे मजदूरोंसे कटवा रहा था, जब कि थोडासा दिन बाकी रहगया, तब किसानने मजदूरोंसे कहा जल्दी २ काटो ऐसा न हो कि, संध्या होजाय । जितना डर हमको संध्याका है इतना हमको सिंहका भी नहीं है । एक अनाजके खेतमें सिंह बैठा हुवा किसानकी वार्ताको सुन रहा था सिंहने जाना संध्या कोई हमसे भी बली जानवर है जो यह किसान हमारा डर तो नहीं मानता है और संध्याका डर मानता है । इतनेमें दिन अस्त होगया किसान और मजदूर सब अपने २ घरोंको चले गये। उसी ग्रामके धोबीका गधा उस दिन कहीं भाग गया था, अंधेरी रात्रिमें धोबी गधेको खोजता हुवा जब कि, तिस खेतमें आया जहाँपर सिंह बैठाथा उसने जाना यह हमारा गधाही छिपकर खेतमें बैठा है दो लाठी धोबीने सिंहकी कमरमें दी और गलेमें रस्सी बांधकर आगे धर लिया सिंहने जाना यह वही संध्या आगई है, जिसका जिकर किसान दिनमें कररहाथा सिंह धोबीके साथ २ चल पडा सिंहने जाना यदि बोलूंगा तब दो लाठी और कमरमें लगावेगा धोबीने घरमें लेजाकर तिसको खूटेके साथ बांधदिया जब एक पहर रात्रि बाकी रही तब धोबीने सिंहपर दो चार लादीको लाददिया और नदीकी तरफ चलपडा आगे रास्तामें एक सिंह खडाथा उसने देखा यह सिंह होकर धोबीकी लादियोंको उठाये हुये चला आता है, इसमें क्या कारण है ?

भला सिंहसे पूंछें तो तुम इसके बोझा ढोने वाले क्यों बनेहो ? सिंहने उस लदेहुए सिंहसे पूंछा तुम धोबीके गधे क्यों बनेहो उसने कहा बोलो मत यह संध्या बडी बलवान् है हमको अपना गधा इसने बनालियाहै, यदि तुम बोलोगे तो संध्या पीछे २ चली आती है तुमको भी पकडकर वह अपना गधा बनालेगी तुम जल्दी यहांसे भागजावो तिस सिंहने कहा अरे तू बडा मूर्ख है संध्या कौन चीज है अंधेरेका नाम संध्या है संध्या कोई तुमसे बली जानवर नहीं है, तुम्हारे संकल्पका रचा हुवा वह जानवर है। तुम इस संकल्पको दूर करके अपने स्वरूपका स्मरण करो। तुम तो सिंहहो ये तो सब तुम्हारे खाद्यहैं तुम्हारी आवाजको सुनकर ये सब भाग जायँगे। सिंहको तिसके कहनेसे अपने स्वरूपका स्मरण हो आया ज्योंही लादीको फेंक कर वह गरजा त्योंहीं धोबी घरकी तरफ भागा और सिंह वनमें चला गया। हे चित्तवृत्ते ! यह तो दृष्टांतहै अब दार्ष्टांतमें इसको घटातेहैं। यह जीव तो वास्तवमें सिंह था कर्मीरूपी किसानके भयानक वचनरूपी संध्याको सुनकर अज्ञानरूपी धोबीका यह गधा बनकर कर्मरूपी लादीको ढोने लगा जब कि सिंहरूपी आत्मवित् गुरूने इसको उपदेश किया तुम गधे नहींहो किंतु सिंहहो अर्थात् तुम पुण्य पापके कर्ता भोक्ता नहींहो, किंतु असंग, चैतन्यस्वरूप हो, तभी अपने स्वरूपका इसको स्फुरण होआताहै और बंधनसे रहित होजाता है॥ २६॥

चित्तवृत्ति कहतीहै हे भ्राता ! जीव ईश्वरकी उपाधियोंके त्यागमें कोई दृष्टांत तुमने नहीं कहा है, सो कहना चाहिये। विवेकाश्रम कहते हैं। हे चित्तवृत्ते ! अब हम तुमको उपाधियोंके त्याग करनेमें दृष्टांतको सुनातेहैं:—

हे चित्तवृत्ते ! किसी ग्राममें दो भाई बनियां एक मकानमें रहते थे उन दोनों भाइयोंकी स्त्रियें बडी लडाकीं थीं, जिस कालमें वे दोनों भाई अपने घरमें आते थे उसी कालमें वह दोनों स्त्रियें परस्पर लडाईको शुरू कर देती थीं। दोनों भाइयोंकी आपसमें फूटकोही बनाये रखतीथीं। किसी प्रकारसेभी उनको परस्पर मिलने नहीं देतीथीं नित्यही कलह करती थीं। दोनों भाइयोंने परस्पर विचार करके दोनों स्त्रियोंको घरसे निकाल दिया

तब दोनों भाई परस्पर एक होगये और नित्यकी कलह भी दूर होगई। यह तो दृष्टांतहै अब दार्ष्टांतमें इसको सुनो! जीव ईश्वर दोनों सगे भाई हैं जीवकी स्त्री अविद्या है ईश्वरकी स्त्री माया है वह दोनों परस्पर नित्यही लडती रहती हैं। इसीसे दोनोंका मेल परस्पर नहीं होताहै जब कि, अविद्या मायारूपी स्त्रियोंका त्याग करदिया जाता है। तब दोनों परस्पर मिलजाती हैं अर्थात् दोनोंकी एकता होजातीहै ॥ २७ ॥

हे चित्तवृत्ते! इसी विषयपर एक और दृष्टांत तुमको सुनाते हैं:—

प्रयागराज तीर्थमें बाप और बेटा दोनों स्नान करनेके लिये गये जब कि, दोनों स्नान करचुके, तब बेटा वहां पर गंगाजीकी बालुकासे खेलनेलगा अर्थात् बेटेने गंगाजीकी बालूका एक किला बनाया बाप कितनाही बेटेसे घर जानेके लिये कहताथा, परन्तु बेटाने बापकी वार्ताका ख्यालही न किया ऐसे खेलमें बेटा लगा जो बापकी तरफ देखे भी नहीं। तब बापभी लगे खेलने, याने बापने बेटेसे भी अधिक एक बडा भारी रेतीका किला बनाया। बेटेने देखा बापने तो हमसे भी भारी किला बनाया है, तुरंतही बेटेने बापके किलेको गिरादिया बापने बेटेके किलेको गिरा दिया दोनों परस्पर मिल करके अपने घरको चले गये। यह तो दृष्टांतहै अब इसको दार्ष्टांतमें घटाते हैं। जीव बेटा है, ईश्वर बाप है। ईश्वर वेदवाक्यों करके जीवको अपने घरमें जानेके लिये बार २ उपदेश करता है परन्तु जीव अपने खेलमें ऐसा लगा है, जो बापके उपदेशको नहीं सुनता है, जीवने अपने संकल्पका एक किला बनाया है वह किला इस तरहका है कि, यह मेरी स्त्री है, यह मेरे पुत्र हैं, यह मेरा धन है, यह मंदिर है, इस कामको आज मैंने करलिया है, इसको कल करूंगा, ऐसे दृढ किलोंको बनाताही चला जाता है और ईश्वररूपी पिताकी वार्ताको नहीं सुनता है। जब ईश्वररूपी पिताने देखा कि जीवरूपी पुत्र तो इस तरहसे मेरी वार्ताको नहीं मानता है, तबतक हम भी इसीकी तरह एक संकल्पके किलेको बनावैंगे। तब ईश्वरने भी कर्म उपासनारूपी एक भारी किलेको बनाया। जीवने देखा बापने तो मेरे किलेसे भी अपना वडा किला बनाया है। तब जीवने ईश्वरके बनाये हुए किलेको तोड दिया याने मिथ्या करदिया तब ईश्वरने

जीवके बनाये हुए किलेको भी श्रुतिवाक्यों करके मिथ्या कर दिया। तब दोनों जीव और ईश्वर अपने शुद्धस्वरूपरूपी घरमें स्थित होगये अर्थात् दोनों एकही होगये ॥ २८ ॥

हे चित्तवृत्ते ! इसी विषयपर एक और भी लौकिक दृष्टांत तुमको सुनातेहैं:—

किसी नगरमें एक बनियां बडा गरीब रहता था, उसके एक लडका पैदा हुआ। जब कि, वह लडका एक सालका हुआ तब वह बनियां गरीबीके दुःखके मारे विदेशमें कमानेके लिये चला गया। घूमता फिरता वह काशीजीमें जा निकला। वहांपर जातेही तिसका रोजगार जम गया और जब कि तिसको काशीजीमें रहते दश या बारह बरस बीतगये तब तिसके पास बहुतसा धन जमा होगया। एक दिन तिसके मनमें आया इस धनमेंसे कुछ धन शुभ मार्गमें लगाना चाहिये। उसने ऐसा विचार करके एक मंदिरका बनाना शुरू कर दिया और इधर पीछे तिसका लडका भी सयाना होगया। उसने अपनी मातासे पूंछा पिता हमारे कहांपर गये हैं? माताने तिसको सब हाल पूर्ववाला कह सुनाया। लडकेने मातासे कहा चलो उनको खोजैं। माताकी भी सलाह होगई, वह दोनों मां बेटा विदेशमें निकल पडे। खोजते २ वह काशीमें जा पहुँचे। एक मकानमें डेरा लगाकर लडकेने मातासे कहा हम मजदूरी करनेको जाते हैं, कुछ कमा लावेंगे तब रात्रिको भोजन बनैगा। माताकी आज्ञाको लेकर लडका मजदूरी करनेको निकला, जहांपर बनियाँका मंदिर बनता था, वहां पर जाकर वह लडका भी मजदूरोंमें काम करने लगा। बनियाँ जब कि, मंदिर देखनेको आया तब उसने उस लडकेको नया जानकर पूंछा तुम्हारा मकान कहाँपर है? और तुम कौन जाति हो? और कैसे तुम यहाँपर काम करनेको आये हो? लडकेने शुरूसे अखीरतक सब अपना हाल बनियांको कह सुनाया, तब बनियांने जानलिया यह मेराही लडका है, उसकी मांको बुलाकर घरके भीतर भेज दिया और लडकेको स्नान कराकर सुन्दर वस्त्रोंको पहराकर अपनी गद्दीपर बैठाकर अपना सब धन तिसको सौंप दिया। बाप बेटा दोनों मिलकर बडे आनंदसे रहने लगे। हे चित्तवृत्ते ! यह तो दृष्टांत है, अब तुम इसको दार्ष्टान्तमें सुनो। यह जीवरूपी पुत्र जब कि महान् प्रयत्नको करके

अपने पिताकी खोज करता है, तब अवश्यही अपने पितासे जा मिलता है और पिता भी तब इसको अपना सब देदेता है । तात्पर्य यह है इस कायारूपी काशीपुरीके भीतर पितारूपी परमेश्वर रहता है, जबतक जीव बाहर तिसको खोजता है, तबतक पितासे नहीं मिलता है जब इस कायारूपी पुरीके भीतर खोजता है, तब अपने पितासे जा मिलता है। और पिता भी तिसको अपना सब धनरूपी जो कि महान् सुख है अर्थात् मोक्षरूपी नित्य सुखको जीवके प्रति देदेता है ॥ २९ ॥

हे चित्तवृत्ते ! इसी विषयमें एक और दृष्टांतको तुम सुनोः–

एक अन्धा और दूसरा आँखवाला दोनों मिलकर रास्तामें चले जाते थे, दैवयोगसे पूर्वकी तरफसे आँधी उठी और ऐसा गरदा उडने लगा जो समीपकी वस्तु भी नहीं दीखती थी उन दोनोंकी आंखमें मट्टी भरगई थोडी देरमें जब कि, आँधी हटगई, तब दोनोंने आंखोंको झाड दिया अर्थात् आंखोंसे मट्टीको निकाल दिया तब आँखवालेको तो दीखने लग गया; परंतु अंधेको मट्टीके निकालने पर भी न दिखाई दिया । हे चित्तवृत्ते ! यह तो दृष्टांत है अब दार्ष्टांतमें इसको सुनो ।

ज्ञानी तो आँखवाला है क्योंकि तिसको सर्वत्र एकही आत्मा दीखता है और अज्ञानी अंधा है, क्योंकि तिसको सर्वत्र आत्मा नहीं दीखता है किंतु भिन्न करके परिच्छिन्न आत्माको वह जानता है. इसीसे वह अंधा है । जब कि क्रोधरूपी आँधी आती है तब दोनोंकी आँखोंमें अविचाररूपी मट्टी तिस कालमें भरजाती है क्रोधरूपी आँधीके हटजानेके पीछे ज्ञानी तो विचारके बलसे अविचाररूपी मट्टीको तुरंतही निकाल देता है । उसको तो फिर उसी तरह सर्वत्र एकही आत्मा दिखाई पडने लग जाता है । इसीसे तिसका राग-द्वेष फिर किसीसे भी नहीं रहता है और अज्ञानीको क्रोधरूपी आँधीके हट-जानेपर भी सर्वत्र आत्मा नहीं दीखता है क्योंकि विचाररूपी तिसको आँखे नहीं हैं, इस लिये तिसकी आँखोंमें अविचाररूपी मट्टी कुछ न कुछ रहही जाती है, इतनाही ज्ञानी अज्ञानीका फरक है । ज्ञानवान्‌को क्रोधादिक पानी-पर लीक हैं, अज्ञानीके पत्थरपर लीक हैं, इसीसे ज्ञानवान् सदैवकाल आनन्दमें रहता है। अज्ञानी दुःखमें रहता है ॥ ३० ॥

चित्तवृत्ति कहती है, हे विवेकाश्रम ! आपने पीछे कहा है कि, ज्ञानवान् अपनेको अकर्ता अभोक्ता मानता है और ज्ञानहीन अपनेको कर्ता, भोक्ता मानता है, ऐसा तो संसारमें देखनेमें नहीं आता है । क्योंकि बिना कर्ता भोक्ता माननेसे व्यवहार चलही नहीं सक्ता है, तब फिर व्यवहारको करनेवाला ज्ञानी अकर्त्ता कैसे हो सक्ता है ?

विवेकाश्रम चित्तवृत्तिके प्रति कहते हैं, व्यवहारको कर्त्ता हुवा भी ज्ञानवान् अकर्ता ही होता है; क्योंकि वह अपनी खुशीसे नहीं करता है । इसीमें एक दृष्टांतको कहते हैं:–

एक राजा अपने मंत्रीको साथ लेकर बनमें शिकारको गया, शिकार खेलते २ राजाको प्यास लगी तब राजाने मंत्रीसे कहा कहींसे पानीको मँगावो । मंत्रीने इधर उधर देखा तो ग्रामकी तरफसे एक आदमी चला आता था, उस आदमीसे मंत्रीने लोटा देकर कहा जल्दी पानी लेआवो वह लोटा लेकर ग्रामकी तरफ पानी लेनेको जब चला, वजीरको जंगलकी तरफ दोपहरकी धूपसे रेता चमकता दीखता था, उसने जाना यह पानीकी नदी चल रही है, वजीरने उससे कहा वो सामने पानी दीखता है तुम दूसरी तरफ क्यों जाते हो ? उसने कहा वह पानी नहीं है; पानीका कुवा ग्राममें है; हम ग्रामसे पानीको लाते हैं । वजीरने कहा तुम झूठँ बोलते हो हमको पानी दीखता है, तुम हमको धोखा देकर भागना चाहते हो । ऐसा कहकर वजीरने चार पांच कोडे तिसको लगा दिये तब वह उधरकोही चला; जिधरको मृगतृष्णाका जल तिसको दीखता था उसने विचार किया यदि नहीं जाऊंगा तो चार कोडे और लगावेगा । हे चित्तवृत्ते ! यह तो दृष्टांत है । अब दार्ष्टांतमें इसको सुनिये । ज्ञानवान्ने संसारके भोगोंको मृगतृष्णाके तुल्य जानकर त्यागदिया है और उनकी तरफ नहीं भी जाता है, तबभी प्रारब्धरूपी कोडा तिसको उधर भोगोंकी तरफही भेजता है, न जाय तो और कोडे लगाते हैं । तात्पर्य यह है ज्ञानवान्को भोगोंकी इच्छा नहीं भी है, तब भी प्रारब्धरूपी कर्म जबरदस्ती इसको भोगोंको भुगाता है और प्रारब्धनेही इसके शरीरको बना रक्खा है, वास्तवसे इसकी दृष्टिमें शरीरभी नहीं है, किंतु ज्ञानवान्के शरीरका योगक्षेमभी प्रारब्ध कर्मही करता है ॥ ३१ ॥

चित्तवृत्ति कहती है, हे विवेकाश्रम ! आपने कहा है जीवात्मा और ईश्वरात्मामें भेद नहीं है, किंतु दोनों एकही हैं, तब फिर ईश्वरमें जो सर्वज्ञतादिक गुण हैं, वह जीवमें क्यों नहीं हैं ? आत्मा तो दोनोंमें एकही है । विवेकाश्रम कहते हैं, हे चित्तवृत्ते ! इसमेंभी हम तुमको एक दृष्टांत सुनाकर विरोधको हटाकर दिखाते हैं:—

किसी नगरके बाहर एक महात्मा जंगलमें रहतेथे एक दिन एक पुरुषने जाकर उनसे यही सवाल किया कि आप लोक कहते हैं, जीवात्मा और ईश्वरात्माका भेद नहीं हैं, किंतु दोनोंमें एकही आत्मा है । तब फिर ईश्वरात्मामें जो कि सर्वज्ञतादिक गुण हैं वे जीवात्मामें क्यों नहीं हैं ? महात्माने कहा हमको प्यास लगी है, और गंगाजलको ही हम पीते हैं और गंगाजी हमारी कुटीसे दूर किंतु दो कोसके फासले पर हैं । प्रथम तुम जाकर हमारी तूंबडीमें गंगाजलको गंगाजीसे भरलावो मगर गंगाजलको ही लाना कूपके जलको न लाना जब कि हम गंगाजलको पानकर लेवैंगे, तब फिर तुम्हारे प्रश्नका उत्तर देवैंगे । वह महात्माकी तूंबडी लेकर गंगाजीसे जल भरलाया और महात्माके आगे तिसने तूंबडीको धर दिया और महात्मासे कहा लीजिये गंगाजलको मैं लाया हूं । महात्मा तूंबडीके जलको देखकर कहने लगे यह तो गंगाजल नहीं है, उसने कहा महाराज ! यह गंगाजलही है महात्माने कहा हम कैसे विश्वास करलें ? जो यह गंगाजलही है । वह कसमें खाने लगा कि, यह गंगाजलही है । महात्माने कहा तुम तो सच कहते हो परन्तु गंगाजीमें तो पचासों नावें चलती हैं हजारों मछलियें रहती हैं लाखों मनुष्य तिसमें स्नान करते रहते हैं, सैकडों पर्वत और वृक्ष तथा नगर और ग्राम तिसके किनारेपर रहते हैं, उनमेंसे तो इसमें एक भी नहीं दीखता है, तब हम कैसे जानलें कि, यह गंगाजलही है । उसने कहा महाराज ! वह बडा भारी गंगाजीका प्रवाह है, जिसके किनारेपर हजारों नगर और पर्वतादिक हैं, यह थोडासा उसी प्रवाहका हिस्सा है, इसमें वह सब कैसे रहसक्ते हैं ? सारांश यह है कि, गंगाजल होनेमें तो कोईभी संदेह नहीं है । क्योंकि, जो: माधुर्य उसमें है, सोई इसमें भी है । महात्माने कहा इसीतरह तू जीवात्मा और ईश्वरात्मामें भी घटाले जीवात्माकी ।

उपाधि जो अंतःकरण है, वह छोटीसी उपाधि है, ईश्वरात्माकी उपाधि जो माया है वह सारे ब्रह्मांडमें फैली हुई है । इसीवास्ते ईश्वरात्मामें सर्वज्ञतादिक धर्म रहते हैं, जीवात्मामें नहीं रहते हैं। परन्तु सुखरूपता दोनोंमें बराबरही है और नित्यत्व चेतनत्वादिकभी धर्म दोनोंमें बराबरही हैं। इसीसे सिद्ध होता है कि, जीवात्मा और ईश्वरात्माका बिलकुल भेद नहीं है ॥ ३२ ॥

चित्तवृत्ति कहती है, ईश्वरात्मा और जीवात्मा यदि दोनों विद्यमान हैं, तब इन नेत्रोंसे क्यों नहीं दीखते हैं, जो वस्तु नेत्रोंसे नहीं दीखती है, उसकी सत्यतामें क्या प्रमाण है? विवेकाश्रम कहते हैं, हम एक दृष्टांतको देकर इस वार्ताके उत्तरको कहते हैं:—

हे चित्तवृत्ते ! किसी नगरके बाहर वनमें एक महात्मा रहतेथे उनके पास जाकर एक मूर्ख पुरुषने इसी प्रश्नको किया । तब महात्माने उसको शास्त्रके वाक्यों और युक्तियोंसे बहुत समझाया, तब भी वह मूर्ख न समझा और उसने हठ किया हमको इन नेत्रोंसे दोनोंको दिखला देवो । महात्माने एक मट्टीके ढेलेको उठाकर तिसके शिरमें मारा तिसका शिर फटगया और वह रोता रोता राजाके पास फिरयादी गया और राजासे तिसने जाकर कहा मैंने फलाने महात्मासे ऐसा सवाल किया और उन्होंने जवाबके बदलेमें मेरा शिर फोड दिया, अब मेरेको ऐसा दर्द होता है जो दर्दके मारे मेरे प्राण निकले जाते हैं। राजाने सिपाहीको भेजकर उन महात्माको बुलाया और कहा आपने इसका शिर क्यों फोड दिया है? महात्माने कहा हमने इसके सवालका जवाब दिया है ये जो आपके पास फिरयादी आया है सो क्यों आया है? उसने कहा इसके शिरमें दर्द होता है तिसीसे यह फिरयादी आया है। महात्माने कहा जैसे दर्द होता है और दीखता नहीं है, तैसे जीवात्मा और ईश्वरात्मा विद्यमान हैं परन्तु दीखते नहीं हैं। हमको यह अपने दर्दको नेत्रोंसे दिखादे तब हमभी इसके प्रति आत्माको नेत्रोंसे दिखा देवैंगे । जैसे दर्द है भी और नेत्रों करके नहीं दीखता है तैसे आत्मा भी है और नेत्रों करके नहीं दीखता है। राजाने कहा ठीक है महात्मा अपने आसनपर चले आये, हे चित्तवृत्ते ! यही तुम्हारे प्रश्नकाभी उत्तर है ॥ ३३ ॥

चित्तवृत्ती कहती है । हे भ्राता ! जो लोक वैराग्यपूर्वक गृहस्थाश्रमका त्याग करके संन्यासाश्रममें हो जाते हैं, वे पहले घरके प्रपंचको त्याग करके फिर संन्यासाश्रममें जाकर उससे भी अधिक प्रपंचको क्यों फैलाते हैं ? इसका क्या कारण है ? विवेकाश्रम कहते हैं उनको पहले मंद वैराग्य हुआ था मंद वैराग्य अल्प कालतक रहता है फिर नष्ट होजाता है । जब कि, स्त्रीको लडका पैदा होने लगता है, तब उस कालमें उसको बडा क्लेश होता है तिसकालमें वह कहती है कि, फिर पतिके पास नहीं जाऊँगी । जब कि, कुछ दिन बीत जाते हैं तब वह दुःख भूल जातीहै फिर वह पतिके पास जाती है ।

इसीप्रकार जब किसी पुरुषको किसी तरहका घरकार्य्योंसे या धनादिकोंके नष्ट होजानेसे दुःख प्राप्त होता है, तब वह गृहस्थाश्रमको किसी मंद वैराग्यमें त्याग देता है । कुछ दिन बीते जब कि, दुःख भूल जाता है और धनादिकोंकी तिसको प्राप्ति होने लगती है, तब वह संन्यासाश्रममें ही फिर मठादिकोंको बांधकर गृहस्थाश्रम बना लेता है । क्योंकि, तिसका वह मंद वैराग्यभी जाता रहता है, जैसे वैष्णवको मांससे बडा तिरस्कार रहता है कभी स्वप्नमें भी तिसका मन मांसकी तरफ नहीं जाता है, ऐसा जब कि, स्त्री धनादिकोंसे जिसको वैराग्य होजाता है वह फिर त्यागे हुए प्रपंचकी रचनाको नहीं करता है, इसीमें एक दृष्टांतको कहते हैं:—

हे चित्तवृत्ते ! ईरान देशमें किसान लोक घोडोंको पालते हैं, याने चार २ पांच २ सौ घोडियोंके गोलोंको वह रखते हैं । जब कि, वह घोडियें बच्चोंको उत्पन्न करती हैं, तब वह किसान लोक जंगलमें एक किलेको बनाते हैं । गिरदे तिसके तीन खाइयोंको खोददेते हैं, उस किलेमें नये उत्पन्न हुए घोडियोंके बच्चोंको रखकर भीतर जानेके रास्ताको भी बंद कर देते हैं और ऊपरके रास्तासे बच्चोंको मसाला वगैरह खिलाकर पालते हैं और उस जंगलमें तिस किलेके समीप किसी प्रकारके शब्दको भी वह नहीं होने देते हैं जब कि वह बच्चे एक सालके होजाते हैं; तब एक दिन वे किसान लोग एक तोपको ले जाकर तिस किलेके समीप चलाते हैं, तिस तोपके आवाजको सुनकर वह

घोडियोंके बच्चे कूदने लगते हैं, कोई तो तीनों खाइयोंको फाँदकर जंगलको दौड जाते हैं, कोई दो खाइयोंको फाँदकर तीसरीमें फँस जाते हैं, कोई एक खाईको कूदकर दूसरीमें फँस जाते हैं, कोई एकमें ही गिरकर फँस जाते हैं, कोई उसी जगहमें फडफडाकर रहजाते हैं। हे चित्तवृत्ते ! यह तो दृष्टांत है, इसको दार्ष्टांतमें घटाते हैं। गृहस्थाश्रमरूपी एक किला है तिसमें जीवरूपी घोडियोंके बच्चे सब फँसे हैं, जिसकालमें कोई विरक्त महात्मा आकर वैराग्य-रूपी तोपको चलाता है, तिस कालमें जो कि, तीव्रतर वैराग्यवान् होते हैं, वे तीनों खाइयोंको कूदकर निकल जाते हैं। प्रथम खाई तो स्त्री पुत्रादिकोंका मोहरूप है, दूसरी खाई वर्णाभिमान है, तीसरी खाई आश्रमाभिमान है। सो तीव्रतर वैराग्यवाले इन तीनों खाइयोंको कूद जाते हैं अर्थात् स्त्रीपुत्रादिकोंमें मोहको त्यागकर फिर वर्णाश्रमके अभिमानको त्यागकर जीवन्मुक्त होकर विचरते हैं, वे फिर दूसरे प्रपंचकी रचना किसी प्रकारसे भी नहीं करते हैं और जिनको तीव्रवैराग्य होता है, वे प्रथमकी दो खाइयोंको कूदकर तीसरी आश्रम अभिमानरूपी खाईमें फँस जाते हैं। हम संन्यासी हैं, हम दण्डी हैं, सबसे उत्तम हैं, हमारे तुल्य दूसरा कौन है, वह मोक्षके अधिकारी नहीं होते हैं। क्योंकि उनका मिथ्या आश्रममें अभिमान बना है और मंद वैराग्यवान् प्रथमवाली खाईको कूदकर अर्थात् स्त्री पुत्रादिकोंमें मोहको त्याग करके दूसरी वर्णाभिमानरूपी जो खाई है, चेले मठादिक तिनमें फँस जाते हैं वह भी मोक्षके और ज्ञानके अधिकारी नहीं होते हैं। क्योंकि एक गृहस्थाश्रमरूपी खाईसे निकल दूसरी खाईमें अर्थात् नये प्रपंचकी रचनाको करने लग जाते हैं। और जो अतिमंद वैराग्यवान् हैं, वे घरको छोडकर ग्रामके बाहर रहकर संत नाम अपना धरकर सुपेद वस्त्रोंको और शिखा सूत्रको भी रखकर कथा वार्त्ता बाँचकर अपने घरकी और अपनी पालनाको करते हैं वह भी ज्ञानके अधिकारी नहीं हैं। क्योंकि उनका दाम्भिक व्यवहार है, इस प्रकारके मनुष्य पांचाल देशमें बहुत हैं और चौथे महामूढ पुरुष हैं, जो कि, वैराग्यकी बातोंको सुन घडी दो घडी वाहें वाहें हाय २ करके रहजाते हैं, उनसे तो वैराग्य दूर भाग जाता है॥ ३४ ॥

चित्तवृत्ती कहती है, हे विवेकाश्रम ! समुच्चयवादी कहता है कर्म और ज्ञान दोनोंको इकट्ठा करनेसे मुक्ति होती है । और वेदांती कहता है केवल ज्ञानसे ही मुक्ति होती है सो दोनोंमेंसे किसका कथन ठीक है ? विवेकाश्रम कहते हैं हे चित्तवृत्ते ! कर्म और ज्ञानका समुच्चय नहीं होसक्ता है । जिसको ऐसा अभिमान है, मैं इस कर्मका कर्ताहूं, मैं इस कर्मको करके इसके फलको भोगूंगा इसी पुरुषका कर्मोंमें अधिकार है और जिस पुरुषको ऐसा अभिमान नहीं है, किंतु जिस पुरुषकी ऐसी बुद्धि है, न हम कर्मके कर्ता हैं न हम तिसके फलके भोक्ता हैं, किंतु हम असंग सच्चिदानन्द स्वरूप हैं, उसी पुरुषका ज्ञान और मोक्षमें अधिकार है । दोनों विरोधी एक जगहमें नहीं रहसक्ते हैं । इसीमें एक दृष्टांत तुमको हम सुनाते हैंः—

एक जाटकी दो लडकी थीं, एक लडकीकी शादी किसानके साथ हुई थी और दूसरी लडकीकी शादी कुम्हारके साथ हुई थी । जब कि, लडकियोंकी शादीको हुए बहुत दिन गुजर गये, तब एक दिन जाटसे स्त्रीने कहा बहुत दिन हुए लडकियोंका कोई खत पत्र नहीं आया तुम जाकर उनके आनंद मंगलकी खबर लाओ । जाट घरसे निकलकर उस ग्राममें गया, जहांपर कि, दोनों लडकियें विवाही गईं थीं । पहले वह किसानके घरमें जाकर लडकीसे मिला और हाल चाल पूंछा, लडकीने कहा बापू खेतमें बीज फेंका है और बादल भी मिला है । यदि वर्षा न हुई तब तो हम उजड जायँगे । क्योंकि धानका बीज सब जलजायगा और जो वर्षा हो जायगी तब तो हम बस जायेंगे । फिर दूसरी कुम्हारके घरवाली लडकीके पास गया और जाटने पूंछा बच्ची सुख सांदकी खबर कहो । उसने कहा बापू और तो सब अच्छा है हमने बर्तनोंका आवाँ लगाया है और आजही तिसको आग दी है, इधरसे हमने आवाँको आग दी है, उधरसे बादल मिलकर आया है यदि वर्षा हो जायगी तब तो हम उजड जायँगे क्योंकि कच्चे बर्तन सब गलजायँगे । जो वर्षा नहीं होगी तब तो हम बस जायँगे, क्योंकि बर्तन हमारे सब पकजायँगे । जाट दोनों लडकियोंके हालको पूंछकर जब अपने घरमें आया तब स्त्रीने जाटसे पूंछा लडकियोंके हालको सुनाओ । जाटने कहा या तो किसान उजडेगा ।

या कुम्हार उजडेगा। दोनोंमेंसे एक तो जरूर उजडेगा यही सब हाल कह सुनाया। हे चित्तवृत्ते ! यह तो दृष्टांत है, अब इसको दार्ष्टान्तमें घटाते हैं, अन्तःकरणरूपी जाट है, तिसकी जो वृत्तियें हैं कर्तृत्व अकर्तृत्व वही तिसकी दो लडकियें हैं। यदि ब्रह्माकार वृत्ति उत्पन्न होजायगी तब कर्तृत्व भोक्तृत्वरूप वृत्ति उजड जायगी और जो दूसरी अहमाकार कर्तृत्व भोक्तृत्वरूप वृत्ति उत्पन्न होजायगी तब तो ब्रह्माकारवाली नहीं होगी। दोनों वृत्तियें परस्पर विरोधी हैं। इसलिये दोनोंमें एकही होगी दूसरी नहीं होगी, तब समुच्चय कैसे होसक्ता है ? किन्तु कदापि नहीं होसक्ता है। हे चित्तवृत्ते ! जैसे कोई अनजान बालक नशा खानेवालेकी संगतसे नशा खाने लगजाता है और जब पूरा नशाबाज होजाता है, तब दुःखको उठाता है, फिर जब कि तिसको किसी अच्छेकी संगत होजाती है, तब वह नशेको छोडकर अच्छा बनकर दुःखसे छूटजाता है तैसे आत्माभी निर्धार्मिक है। जैसी संगत इस जीवको होजाती है वैसाही यह अपनेको मानने लगजाता है. भेदवादीकी संगत होनेसे भेदवादी अभेदवादीकी संगत होनेसे अभेदवादी होजाता है। आत्मा असंग है, सब धर्म आत्मामें कल्पित हैं आत्मा नित्यशुद्ध बुद्ध मुक्तस्वरूप है ॥ ३५ ॥

हे चित्तवृत्ते ! एक और लौकिक दृष्टांतको तुम सुनोः—

एक लडका सात आठ बरसका अपने मुहल्लामें खेलता था अपने खेलमेंही वह लडका चिल्लाने लगा, उस मुहल्लामें मकान बहुत ऊंचे २ थे उसका आवाज टक्कर खाकर गुँज उठा तब आगेसेभी चिल्लानेका प्रतिध्वनिरूप शब्द हुवा लडकेने जाना कोई मेरी नक़ल करता है। लडकेने पूंछा तू कौन है आगेसे भी शब्द हुआ तू कौन है लडकेने कहा मैं तुमको मारूंगा उधरसेभी आवाज आई मैं तुमको मारूंगा लडकेने तिसको गाली दी, आगेसे भी गालीकी आवाज आई, तब लडकेने अपनी मातासे जाकर कहा कोई आदमी मेरेको चिढाता है, परन्तु दिखाई नहीं देता है। माताने कहा बेटा दूसरे मुहल्लामें इस वक्त कोई भी तुमको चिढानेवाला नहीं है। जब कि, तुम आवाज करते हो तब तुम्हाराही आवाज टक्कर खाकर गूँजता है। तुम जानते हो कोई दूसरा हमको चिढाता है, यह तुमको भ्रम है, तुम्हारेसे

बिना दूसरा कोई भी तुमको चिढानेवाला नहीं है, तुम अपने इस भयको दूर करो । माताके उपदेशसे लडकेका डर जाता रहा है । हे चित्तवृत्ते ! यह तो दृष्टांत है, अब इसको दार्ष्टांतमें सुनो । इस जीवके बिना दूसरा कोई भी इसको भय देनेवाला नहीं है, इस जीवका संकल्पही इसको भय देता है, अपने संकल्पसे यह जीव नरक स्वर्गादिकोंकी कल्पना करता है, फिर उनकी प्राप्तिके लिये कर्मोंकी कल्पना कर्ता है । फिर फलोंकी कल्पना कर्ता है, आपही कर्ता भोक्ता बनकर कर्मोंके फलोंको भोगता है । जैसे मकडी अपने मुखसे तार निकालकर आपही तिसके साथ क्रीडा करती है । जैसे बालक अपने परछांहीको देखकर आपही डरता है, तैसे जीवभी अपने संकल्पोंको करके आपही उनसे भयको प्राप्त होता है, अपने स्वरूपसे भूलकरही जीव दुःखको पाता है । इसीपर एक कविनेभी कहा है:-

कवित्त-रम्यो सब ब्रह्म नहीं कछु भ्रम तू जान न रम जो नाहिं मरे हैं ॥ एकोहि राम झूठी धूमधाम नहीं कोई काम तु काहि डरे हैं । ब्रह्म सो लाग द्वैतको त्याग स्वरूपमें जाग वृथा क्यों जरे हैं । कहे रामदयाल नहीं कोऊ काल तू आप सँभाली जो बेग तरे हैं ॥ १ ॥

हे चित्तवृत्ते ! जीव अपने अज्ञान करकेही भयको प्राप्त होता है, वास्तवसे इसको भय किसीका नहीं है, जब कि मन दूसरेकी कल्पना कर्ता है तभी भय खडा होता है ॥ देवीभागवते:-

न देहो न च जीवात्मा नेन्द्रियाणि परंतप ।
मन एव मनुष्याणां कारणं बंधमोक्षयोः ॥ १ ॥

हे परंतप ! बंध मोक्षमें देह और जीवात्मा तथा इन्द्रियें ये सबभी कारण नहीं हैं, किंतु मनुष्योंका मनही कारण है ॥ १ ॥

शुद्धो मुक्तः सदैवात्मा नैव बध्येत कर्हिचित् ।
बंधमोक्षौ मनःसंस्थौ तस्मिञ्छान्ते प्रशाम्यतः ॥ २ ॥

आत्मा सदैवकाल शुद्ध है, मुक्त है, किसी प्रकारसेभी वह बंधायमान नहीं होता है, बंध और मोक्ष मनसेही स्थित रहते हैं अर्थात् मनका संकल्पमात्र है, मनके शांत होनेपर वहभी शान्त होजाते हैं ॥ २ ॥

शत्रुर्मित्रमुदासीनो भेदाः सर्वे मनोगताः।
एकात्मत्वे कथं भेदः संभवेद्द्वैतदर्शनात् ॥ ३ ॥

शत्रु, मित्र और उदासीनता ये सर्व भेद मनमेंही हैं एक आत्माके निश्चय होनेसे फिर भेद कैसे होसक्ता है, किंतु कदापि नहीं होसक्ता है भेद तो द्वैतदर्शनहीसे होता है ॥ ३६ ॥

हे चित्तवृत्ते ! एक और लौकिक दृष्टांत तुमको सुनाते हैं:-

किसी नगरमें एक बनियां बडा धनिक रहताथा, रात्रिके समय तिसकी स्त्री एक लोटा जलका भरकर तिसके सोनेके पलंगके नीचे धर देतीथी सवेरे बनियां जब झाडे जाता था तब तिस लोटेको शौचकरनेके लिये लेजाताथा। दीपमालिका आनेका दिन जब कि नजदीक आगया तब तिस बनियांकी लडकीने लोटेमें गेरूको रगडकर पानी मिलाकर भर दिया और तिस लोटेको बापके पलंगके नीचे धर दिया। सवेरे अंधेरेमें वही गेरूवाला लोटा बनियांके हाथमें आगया बनियांने जंगल फिरकर तिस लोटेसे जब कि, शौच किया तब वह पृथिवी सब गेरूके रंगसे लाल होगई। बनियांने जाना यह सब खून पाखानेके रास्तासे हमारे भीतरसे गिरा है, बनियां घरमें आकर खाटपर गिरपडा और स्त्रीसे तिसने कहा आज मैं मरूंगा क्योंकि मेरे पेटसे पाखानेके रास्तासे बहुतसा खून गिरा है, जल्दी कुछ तू मुझसे दान पुण्य करावो स्त्री रोने लगी बनियांने कहा अब रोनेका समय नहीं है जल्दी एक गौको मँगाकर दान करावो और कुछ अन्न वगैराभी मँगाकर दान करावो। स्त्री सब वस्तुओंके मँगानेके फिकरमें हुई और बनियांभी धीरे २ सुस्त होने लगे इतनेमें बनियांकी लडकीने पलंगके नीचे जब कि गेरूके लोटेको खोजा और लोटा तिसको नहीं मिला लोटाके न मिलनेसे वह लडकी रोने लगी। बापने पूंछा तू क्यों रोती है? उसने कहा मैंने गेरू घोलकर लोटेमें आपके पलंगके नीचे रखा था न मालूम तिसको कौन उठा लेगया और यह दूसरा लोटा पानीका भरा हुआ इस जगहमें रखा है। मेरा लोटा नहीं दीखता है। लडकीकी वार्ताको सुनकर बनियां उठ बैठा और स्त्रीसे कहने लगा अब मैं अच्छा होगया दान पुण्य करानेकी कुछ जरूरत नहीं है। वह खून

नहीं था किन्तु गेरूका रंग था मेरेको भ्रम खूनका होगया था, अब वह भ्रम मेरा जाता रहा है । हे चित्तवृत्ते ! यह तो दृष्टांत है अब दार्ष्टान्तमें इसको सुनो । अनादि अज्ञानके सम्बंधसे इस जीवको अपने स्वरूपमें भ्रम होरहा है, तिसी भ्रम करके यह जीव अजर अमर आत्मामें जन्म मरणादिकोंको मान रहा है जब आप्तवक्ताके उपदेश करके इसका भ्रम दूर होजाता है तब यह अपनेको अजर अमर मानने लगजाता है तब जन्म मरणसे रहित होजाता है ॥ ३७ ॥

हे चित्तवृत्ते ! एक और लौकिक दृष्टांतको तुम सुनोः–

एक राजाने दो नौकरोंको विदेशमें किसी कामके लिये भेजा जब कि कुछ दिन बीतगये और उनको कोईभी खत पत्र न आया तब राजाने दोनों नौकरोंकी तरफ दो हुकमनामे लिखे और लिखा इनको पूज्य करके मानना । वह दोनों परवाने दोनों नौकरोंके पास जब कि पहुँचे उन दोनोंमेंसे एकने तो जो परवानेमें करनेको लिखा था तिस कामको करके परवानेको फेंक दिया, दूसरेने जो लिखा था उसको तो न देखा किन्तु परवानेको चौकीपर धरकर तिसकी धूप दीपसे नित्य पूजा करने लगा । जिसने लिखे हुए कामको करके परवानेको फेंक दिया था, राजा उसपर तो बडे प्रसन्न हुए और तिसको राजाने भारी दरजाभी दिया और जो परवानेकी चौकीपर धर कर केवल पूजाही करता रहा था, तिसपर राजा नाराज हुए और तिसको निकाल भी दिया । हे चित्तवृत्ते ! यह तो दृष्टांत है, अब दार्ष्टान्तमें सुनो । वेद शास्त्ररूपी परवाने याने हुकमनामे ईश्वरके भेजे हुए हैं, जो पुरुष उनपर अमल करता है अर्थात् कुछ उनमें लिखा है उसको धारण करता है, उसपर तो ईश्वर प्रसन्न होता है, और उसको मोक्ष देता है । जो कि उनमें लिखेको धारण नहीं करता है, किन्तु चौकीपर धरकर धूप दीपादिकोंसे आरती करता है उनके आगे घण्टोंको हिलाता है, उसपर ईश्वर नाराज होकर उसको जन्मोंकी परम्पराको देता है । इसीपर पंचदशीकारने भी लिखा हैः–

ग्रन्थमभ्यस्य मेधावी विचार्यं च पुनः पुनः ।
पलालमिव धान्यार्थी त्यजेद्ग्रन्थमशेषतः ॥ १ ॥

बुद्धिमान् पुरुष प्रथम ग्रन्थोंका अभ्यास करै, फिर पुनः २ उनका विचार करके धारण करै, फिर जैसे धान्यका अर्थी पुरुष धान्यको ग्रहण करके पलालीका त्याग करदेता है इसी प्रकार यह भी संपूर्ण ग्रन्थोंका फिर त्याग करदेवै ॥ १ ॥

हे चित्तवृत्ते ! केवल ग्रन्थोंके बाचनेसे आत्मबोध नहीं होता है, किन्तु धारण करनेसे होता है ॥ ३८ ॥

हे चित्तवृत्ते ! इसी विषयपर तुम्हारेको एक और दृष्टांत सुनाते हैं—एक पुरुष तीर्थ यात्रामें जाने लगा तब तिसने विचार किया यदि द्रव्यको साथ लेजायँगे तब तो रास्तामें चोरोंका भय है, कहीं लूटेही जायँगे । तब क्या करैंगे, हुंडी लिखवाकर लेजायँ तब अच्छा होगा, वहांपर जाकर शाहकी दूकानसे रुपैया लेलेवेंगे । तिस आदमीने हुंडी लिखवा ली एक दूसरा भी तिसके साथ तीर्थोंमें चला उसने भी हुंडी लिखवा ली वहांपर जब जाकर दोनों पहुँचे तब एकने तो शाहकी दूकानपर जाकर तिस हुंडीको दिखाकर अपना रुपैया लेलिया । उसको तो रुपैया मिलगया और दूसरा अपने डेरेपर बैठके तिस हुंडीका पाठ करने लगा । कई एक दिन पाठ करता रहा तब भी तिसको हुंडीका रुपैया नहीं मिला । यह तो दृष्टांत है, दार्ष्टान्तमें वेद शास्त्ररूपी सब हुंडियें हैं, इनके केवल पाठमात्र करनेसे आत्माका लाभ नहीं होता है, किन्तु इनमें जो उपदेश लिखा है, तिसपर चलनेसे आत्माका लाभ होता है ॥ ३९ ॥

दो प्रकारके राजा होते हैं एक न्यायकारी दूसरा अन्यायकारी जो कि, न्यायकारी होता है, वह कामको देखता है, अपनी खाली तारीफको नहीं सुनता है । जो नौकर तिसका अच्छा काम करता है, उसको भारी ओहदा देता है और जो नौकर कामको नहीं करता है केवल तिसकी तारीफकोही करता है, तिसको वह पसंद नहीं करता है और न तिसको कोई ओहदा देता है और जो अन्यायकारी है, वह कामको नहीं देखता है, किन्तु केवल अपनी तारीफकोही सुनता है । अन्यायकारी राजाको दोषका भागी कहा है, निर्दोष और धर्मात्मा राजा न्यायकारी होता है, जो सबको सम देखता है । तैसे ईश्वर भी न्यायकारी है वह कर्मकोही देखता है, जो पुरुष उत्तम

कर्मको करताहै अर्थात् वेदोक्त मार्गपर चलता है, उसीको मोक्ष देताहै। जो वेदोक्त मार्गपर तो नहीं चलता है, केवल वेदोंको और शास्त्रोंको लोकदिखलावेके लिये पाठोंको करता है या झूंठे पाखंडोंकोही करता है, उसको कदापि मोक्षको नहीं देता है ॥ ४० ॥

हे चित्तवृत्ते! जबतक इस जीवको देहादिकोंमें अहंता और गेहादिकोंमें ममता बनी है, तबतक इस जीवको कदापि सुख नहीं होता है। अहंता ममताके त्याग करनेसे इसको सुख होताहै सो अहंता ममताका त्याग करना बडाही कठिन है। इसीमें एक दृष्टांतको सुनातेहैं:-

एक कालमें नारदजी पृथिवीपर पर्यटन करते हुए वैकुण्ठमें जा निकले वहांपर भगवान्को अकेले बैठे हुए देखकर नारदजीने भगवान्से कहा महाराज आपका वैकुण्ठ तो आजकल खाली पडाहै कोईभी पुरुष यहाँपर नहीं दिखाताहै, क्या वैकुण्ठमेंभी कोई आनेकी इच्छा नहीं करताहै। यहाँपर तो सर्व प्रकारका सुखहै, किसी प्रकारकाभी यहांपर दुःख नहींहै फिर क्यों वैकुण्ठ खालीहै? भगवान्ने कहा नारदजी यद्यपि यहाँपर सर्व प्रकारका सुख है तबभी वैकुंण्ठमें आनेकी इच्छा किसीकोभी नहीं होतीहै और हमाराभी मन अकेले नहीं लगताहै, दूसरा कोई हो तब दोघडी तिससे बात चीतही करैं, कोई सेवा करनेवालाभी नहींहै हम क्या करैं? मर्त्यलोक निवासी कोईभी वैकुण्ठमें आनेकी इच्छा नहीं करताहै। नारदने कहा ये कैसी वार्ता है? वैकुण्ठका तो नाम सुनकर सब लोक आपसे आप चले आवेंगे। भगवान्ने कहा अच्छा तुम जाकर दो चार आदमियोंको लावो कुछ सेवाका तो काम चलै, फिर देखाजायगा। नारदजी बडे उत्साहके साथ चले और आकर एक बूढेसे नारदने कहा बाबा वैकुण्ठको चलोगे? नारदकी बातको सुनकर वह बूढा बडा बिगडा और नारदजीसे कहने लगा अभागे तूही वैकुण्ठमें जा जिसका न कोई आगेहै न पीछेहै मैं क्यों जाऊं मेरे पुत्र और पोते और स्त्री धनादिक सब मौजूद हैं। जो निपूता हो सो वैकुण्ठमें जाय। नारदजी चुपचाप होकर वहांसे चलपडे आगे एक और युवावस्थावालेसे नारदजीने

कहा वैकुण्ठको चलोगे ? उसने नारदसे कहा बाबा वैकुण्ठ तो बूढोंके लिये बनाहै, जो कि, किसी कामलायक न हो वह वैकुण्ठमें जाय, हम तो सब काम करसक्तेहैं, हम क्यों वैकुण्ठमें जायँ ? वहाँसे थोडीदूर जाकर फिर एक पुरुषसे नारदने कहा वैकुण्ठको जावोगे ? उसने कहा किसी लूले लंगडेको खोजो, यहांपर तुम्हारी दाल नहीं गलतीहै। नारदजीने बहुतसे मनुष्योंको वैकुण्ठ जानेके लिये कहा परंतु किसीनेभी कबूल न किया। तब नारदजीने एक वृद्ध साहूकारको तिलक छापे लगायकर दूकानमें बैठेहुये देखा नारदने अपने मनमें विचार किया यह भगवान्का भक्त दीखताहै, यह अवश्यही वैकुण्ठको चलेगा और जो ये एकभी चलदे तब हमारीभी बात रहजाय, क्योंकि हम भगवान्से कह आयेहैं हम किसीको लावेंगे और भगवान्को भी सेवा करनेसे आराम मिलजाय। नारदजी तिस सेठके पास जाकर बैठगये और सीताराम २ करके तिस सेठके कानमें नारदजीने कहा सेठजी! संसारका सुख तो आपने सब देखही लियाहै, अब चलकर कुछकाल वैकुण्ठके सुखको भोगो। सेठने कहा महाराज! मेरी भी येही सलाह है परंतु अभी लडका सयाना नहीं है, यह जरा सयाना होजाय और दूकानके कामकाजको सँभाल ले तब चलूंगा, आप कुछ दिन पीछे फिर आना। नारदजी चले गये और कुछ दिन पीछे फिर उसके पास आये और उससे कहने लगे अब तो तुम्हारा लडका सयाना होगया है अब चलो। उसने कहा अभी इसके संतती नहीं हुई है इसके पुत्र हो ले तब चलूंगा नारदजी चले आये। फिर कुछ कालके पीछे तिस सेठसे जाकर कहने लगे अब तो चलो अब तो तुम्हारे पोताभी हो गयाहै। सेठने कहा महाराज! अभी इसकी शादी नहीं हुई है इसके विवाहको देखकर चलूंगा। नारदजी फिर कुछ कालके पीछे आये और सेठके लिये पूछा कहाँ हैं तिसके लडकेने कहा वे तो मरगये नारदजीने ध्यान लगाकर देखा तो सर्प बनकर अपने द्रव्यपर बैठेथे। नारदने कहा अब तो चलो। उसने कहा मैं अपने द्रव्यकी रक्षा करताहूं अभी लडका द्रव्यकी रक्षालायक नहीं है जब ये रक्षालायक होजायगा तब चलूंगा। कुछ दिन पीछे फिर गये

तब वह कुत्ता बनकर द्वारपर बैठाथा, नारदजीने कहा अब तो चलो, तब तिसने कहा महाराज पतोहें अनजान हैं मैं द्वारपर बैठकर चोर चाकरंकी रक्षा करताहूं, नहीं तो चोर घरमेंसे मालको निकालकर लेजायँ । तब नारदजीने तिस सेठकी स्त्रीसे कहा तुमही वैकुंठको चलो, तिसने कहा महाराज ! अभी दो चार काम घरके बाकी हैं, वह होजांय तब मैं चलूंगी । फिर थोडे दिनोंके पीछे नारदजी जब गये तब वह सेठानीभी मरकर कुतिया बनकर द्वारपर बैठी हुई और कुत्तोंसे खराब हो रहीथी नारदने कहा अब तो चलो । उन्होंने कहा अभी तो हम इसी जन्ममें बड़ी सुखी हैं, फिर चलेंगी । नारदजी हारकर वैकुण्ठमें जाकर भगवान्से कहने लगे महाराज आपने सत्य कहा है संसारी लोक ऐसी ममतामें फँसे हैं जो कोई भी वैकुण्ठमें आनेकी इच्छाको नहीं करता है । हे चित्तवृत्ते ! यह संसार असाररूप भी है और अति मलिनभी है, तब भी संसारी लोक ऐसी मोह ममतामें फँसे हैं जो इसके त्यागकी इच्छाको नहीं करते हैं ॥ ४१ ॥

चित्तवृत्ति कहती है । हे विवेकाश्रम ! जो वस्तु मलिन होती है उससे तो मनुष्यमात्रको घृणा होती है, फिर संसारी लोकोंको क्यों नहीं घृणा होती है ? विवेकाश्रम कहते हैं, हे चित्तवृत्ते ! मोह ममतामें जो फँसे हैं उनको घृणा नहीं होती है । जैसे भंगीको मैलाके देखनेसे घृणा नहीं होती है तैसे महामलिन घृणाका पात्र जो गृहस्थाश्रम है, जिसमें जो कि, नित्यही अपने बाल बच्चोंके पुरीष मूत्रको उठाना और धोना पडता है, घरमें किसी जगहमें मूता है, किसी जगहमें पुरीष किया है, कहीं सींड पडा है, कहीं थूक पडा है, कोई हाय २ करता है, कोई वाह २ करता है, ऐसे मलिन व्यवहारसे संसारियोंको घृणा नहीं फुरती है । क्योंकि उनका स्वभावही वैसा होजाता है । इसीपर एक दृष्टांत कहते हैं:-

किसी नगरके बाहर एक महात्मा रहतेथे, एकदिन राजाने जाकर उनसे प्रार्थना की महाराज ! हमारे घरमें चलकर चरण धरिये जो वह पवित्र होजाय । प्रथम तो महात्माने नहीं माना, जब कि, राजाने बहुतसी विनती की, तब

राजाके साथ चलपडे, जब राजाके घरमें जाकर बैठे, तब थोडी देरके पीछे महात्माने कहा राजन्! हम चलेंगे तुम्हारे घरमें बडी दुर्गंधी आती है राजाने कहा महाराज! यहांपर दुर्गंधीका कौन काम है? यहांपर तो बडी सफाई है। महात्माने कहा राजन्! तुमको वह मालूम नहीं देती है। क्योंकि तुम्हारा स्वभावभूत हो रहा है, चलो हम तुमको दिखावेंगे। महात्मा राजाको साथ लेकर उस बाजारमें गये जिस बाजारमें कच्चे चामके कूपे बनतेथे, वहांपर जाकर खडे होगये राजाने कहा महाराज! यहांपर तो सडे हुए चर्मकी बडी दुर्गंधी आती है, महात्माने एक चर्मकारसे पूंछा क्यों भाई यहांपर कुछ दुर्गंधी है? उसने कहा यहां दुर्गंधी कोई नहीं है। महात्माने राजासे कहा देखो यहांके रहनेवाले कहते हैं यहांपर दुर्गंधी नहीं है फिर आपको कैसे आती है, राजाने कहा इनका दीमाग गंदा होगया इसीलिये इनको नहीं आती है। महात्माने कहा इसी तरह आपके यहांकी दुर्गंधी जो है सो आपको भी नहीं आती है क्योंकि, वह आपके दिमागमें घुसगई है जो वस्तु स्वभावभूत होजाती है उससे घृणा नहीं होती है। सो गृहस्थाश्रमकी दुर्गंधीभी आपकी स्वभावभूत होगई है, इसलिये आपको उससे घृणा नहीं होती है। राजाने कहा ठीक है। हे चित्तवृत्ते! गृहस्थाश्रम घृणा करनेका स्थान है, क्योंकि अनेक प्रकारके क्लेश इसमें रात्रिदिन बनेही रहते हैं परन्तु मोह ममताके जालमें फँसे हुए जो पुरुष हैं, उनके अन्तःकरण अति मलीन होगये हैं, इसलिये उनको उससे घृणा नहीं होती है और जिनका अन्तःकरण सत्संग करके शुद्ध होगया है, उनको घृणा तो होती है वह बिगारी पकडे हुएकी तरह गृहस्थका काम करते हैं, खुशीसे नहीं करते हैं ॥ ४२ ॥

हे चित्तवृत्ते! इसी विषयपर एक और दृष्टांत तुमको सुनाते हैं:—

किसी नगरके मुहल्लामें एक धनी पुरुष अपने द्वारपर खडाथा, इतनेमें एक भंगी मैलेकी दौरीको उठाये हुए उस रास्तासे निकला, तब धनिकने उस भंगीसे कहा अरे नीच इस मैलेको नंगा मत लेजायाकर, क्योंकि इसको देखकर लोकोंके जी मिचलाने लगते हैं, किसी कपडासे इसको ढककर

लेजायाकर भंगीने कहा मैं कपडा कहांसे पाऊं जो इसको ढकूं । धनिकने एक सुपेद रूमाल तिसको देदिया और कहा इससे इसको ढककर लेजा। भंगीने उस रूमालको उस मैलेकी दौरीपर डालदिया और चलपडा जब कि, वह कुछ दूर निकलगया, तब वहांपर तीन पुरुष खडेथे। उन्होंने जाना इस दौरीमें कोई अच्छी वस्तुको यह लिये जाता है । भंगीसे उन्होंने कहा इसमें क्या है हमको दिखला दे । भंगीने कहा आपके देखने लायक यह नहीं है, ऐसा कह करके भंगी चलपडा । तीनोंने भंगीका कहा न माना, तिसके पीछे २ चलपडे, आगे एक पुरुष खडा था, उसने उनसे कहा क्यों मैलेके पीछे चले जाते हो ? इसमें मैला है, कोई उत्तम वस्तु नहीं है । एक तो तिसके कहनेपर पीछेको लौट गया, दो फिर भी न हटे किंतु भंगीके पीछे पीछेही चलने लगे, कुछ दूर जाकर फिर भंगीने उनसे कहा इसमें कोई अच्छी वस्तु नहीं है किंतु मैला है । तुम क्यों दिक्क होते हो । दूसरा भी पीछेको हटा। तीसरेने कहा हम बिना देखे नहीं हटेंगे हमको तुम दिखला देओ। जब कि भंगी एक तंग गलीमें पहुँचा तब उससे कहा आवो देखो ज्योंहीं वह आगे देखनेको बढा और भंगीने मैलापरसे रूमालको उठाया और मैलेकी दुर्गंधी सब तिसकी नासिका और मुखमें गई और वह भागा त्योंहीं उस तंग गलीमें वह गिरा और कई एक जगह तिसको चोटभी लगी। हे चित्तवृत्ते ! यह तो दृष्टांत है, अब इसको दार्ष्टांतमें सुनो । संसारमें उत्तम मध्यम कनिष्ठ ये तीन प्रकारके पुरुष हैं और स्त्रीका शरीररूपी एक मैलेकी दौरी है, ऊपरसे सुपेद चर्मरूपी रूमालसे ढकी हुई है, विषयी पुरुषरूपी भंगी तिसको लिये जाता है, तीनों पुरुष तिसको अच्छी वस्तु जानकर तिसके पीछे चले। आगे कोई महात्मा खडेथे उन्होंने कहा इसके पीछे तुम मत खराब होवो। यह तो एक मैलेकी दौरी है, जोकि उत्तम था वह तो उनके वाक्य-पर विश्वास करके पीछेको लौट गया, जो मध्यम था वह कुछ दूर जाकर लौटा, जो कनिष्ठ था वह भी लौटा तो सही, परंतु धक्के और चोटको खाकर शिर फटाकर अनेक प्रकारके क्लेशोंको सह करके पश्चात् उसने भी तिसका त्याग किया और जो अति मूर्ख हैं वे इसीमेंही जन्मभर दुःख पाते रहते हैं उनको कभी भी घृणा नहीं होती है ॥ ४३ ॥

हे चित्तवृत्ते ! संसारमें जीवोंको जो ममता होरही है, येही दुःखका हेतु है। जिसको ममता नहीं है, वह घरमें रह करकेभी सुखी हैं, जिसको ममता बनी है वह घरका त्याग करकेभी दुःखी है। इसीमें एक दृष्टांतको सुनाते हैं:—

एक राजा बडा सत्संगी था महात्माका संग सदैवकालही करताथा और उसके नगरके बाहर बनमें एक महात्मा रहतेथे, नित्यही उनके पास जाया करताथा। एकदिन राजाने महात्मासे कहा महाराज राजकाजमें बडा दुःख होता है इस दुःखकी निवृत्तिका कोई उपाय आप कहिये। महात्माने कहा राजन् ! तुम अपने राजको हमारे प्रति दान करदेवो। राजाने तुरंतही जल लेकर राज्यको महात्माके प्रति दान करदिया। महात्माने कहा राजन् ! अब तुम्हारा इस राजमें कुछ ममता है या नहीं ? राजाने कहा हमारी अब इस राज्यमें कुछभी ममता नहीं है चाहे बने चाहे बिगडे। महात्माने कहा अब तुम हमारी तरफसे इसका इन्तजाम करो और जो कुछ तुम्हारा खर्चहो वह अपनी तनखाह जानकर लिया करो। नौकर वही धर्मात्मा कहाजाता है जो मालिकका काम अच्छा करता है, राजा अपनेको नौकर जानकर राजकाजको करने लगे फिर राजासे एकदिन महात्माने पूंछा राजन् ! राजकाजमें तुमको कुछ विक्षेप तो नहीं होता है ? राजाने कहा हमारी अब राज्यमें ममताही नहीं है विक्षेप हमको क्यों हो ? महात्माने कहा ठीक है हे चित्तवृत्ते ! जो पुरुष गृहमें रहकरकेभी ममतासे रहित होकर गृहके कामोंको करता है उसको विक्षेप नहीं होता है परंतु ऐसा होना अति कठिन है ॥ ४४ ॥

हे चित्तवृत्ते ! जबतक पुरुषका मन अंतर आत्माकी ओर नहीं लगता है, तबतक पुरुष विषयोंकी तरफ दौडता है, मनको अंतर मुख करनेके लिये शास्त्रकारोंने योगाभ्यास आदिक अनेक साधन कहे हैं। प्रथम मनको स्थूल पदार्थमें लगाना कहा है, स्थूलमें जब कि लगने लगता है तब धीरे २ सूक्ष्ममें जाकर ठहर जाता है, बिना स्थूलमें लगानेसे सूक्ष्ममें नहीं लग सक्ता है। योगसूत्रमें लिखा है जो वस्तु अपनेको अति प्यारीहो, उसीमें मनको लगाय किसी मनुष्यकी वा देवताकी मूर्तिमें या सूर्य्य चन्द्रमा आदिक

तारोंमें निरोध करै विना मनके निरोध करनेसे महान् सुखका लाभ नहीं होता है केवल ज्ञानकी बातोंसेभी सुख नहीं होता है। अभ्यास और वैराग्यकोही मनके निरोधका साधन लिखा है। तात्पर्य यह है मनका निरोध किसीतरहसे होसके उसी तरहसे सुखका हेतु है। इसीमें एक दृष्टांत तुमको सुनाते हैं:—

हे चित्तवृत्ते ! किसी नगरमें एक भंगी राजाके घरमें नित्यही पाखाना कमानेको जाता था दैवयोगसे एक दिन जब वह पाखाना कमानेको गया तब रानीको उसने सिंहासनपर बैठीहुई देखलिया देखतेही उसका मन रानीमें चला गया और किसी तरहसे वह अपने घरतक पहुँचा, आतेही वह गिर पडा और अपनी स्त्रीसे उसने कहा अब मैं दोचार घडीमें मरूंगा। स्त्रीने हाल जब पूंछा तब उसने सब हाल बतादिया। स्त्रीने कहा तुम धीरज धरो, मैं इसका कोई उपाय करूंगी स्त्रीने रानीसे जाकर कहा हमारा पति मरता है इसका कोई इलाज तुम बतावो सब हाल पतिका रानीसे कह दिया। आगे रानी बडी बुद्धिमान् थी उसने कहा तुम पतीसे जाकर कहो वह साधुका भेष बनाकर बाहर नदीके किनारेपर बैठकर रात्रिदिन हमारा ध्यान करै और किसीकी तरफ बिलकुल न देखे अंतर मनमें मेरेकोही देखै थोडे दिनके पीछे मैं उसी जगहमें उसके पास आऊंगी उसने जाकर पतिसे रानीके मिलनेका उपाय कह दिया। वह साधुका भेष बनाकर नदीके किनारेपर पद्मासन लगाकर रानीका ध्यान करने लगा। कोई पुरुष कुछ आगे धरजाय चाहे कोई उठा कर ले जाय वह किसीकी तरफभी न देखै। थोडेही दिनोंमें नगरमें बड़ी चरचा फैलगई, एक महात्मा ऐसे योगिराज आये हैं जो आठोंपहर अपनी समाधिमें ही स्थित रहते हैं। अब बहुतसे लोक उनके पास जाने लगे। राजातक खबर पहुँची राजाभी एक दिन उनके दर्शनको गये, परन्तु उसने राजाकी तरफ भी आँख खोलकर नहीं देखा। ऐसी उसकी वृत्ति रानीके ध्यानमें जमी जो बाहरके संसारकी उसको कुछ भी खबर न रही और वृत्तिके एकाकार होजानेसे वृत्तिमें चेतनका प्रतिबिंब भी स्थिर होगया, तिस प्रतिबिंबके स्थिर होजानेसे उसको अंतर आत्मसुखका लाभ होगया तिस आत्मसुखके आगे विषयसुख

सब अतिफीके और बेरस माळूम होते हैं । रानीने राजासे कहा मेरेको हुक्म हो तो मैं भी उन महात्माका दर्शन कर आऊं । राजाने कहा जाओ रानी वहाँपर गई कनात लगाई गई गिरदा पहरा खडा होगया । रानीने समीप जाकर उनसे कहा जरा आंखको खोलकर देखो मैं वही रानीहूं जिसके मिलनेके लिये आपने इतना आडंबर किया है उसने कहा मेरेको अब वह रानी मिली है जिसके सामने तुम्हारी जैसी करोडों रानियें हाथ जोडकर खडी हैं, अब तू चलीजा मैं महान् रानीके साथ जाकर मिलगयाहूं । आंख खोल करके भी उसने रानीकी तरफ न देखा रानी अपने घरको लौटकर चली आई । हे चित्तवृत्ते ! जितना भारी सुख है सो मनके निरोधमें ही है और जितना भारी दुःख है सो मनके इतस्ततः स्वतंत्र होकर भ्रमण करनेमेंही है ॥ ४९ ॥

हे चित्तवृत्ते ! एक और भी दृष्टांत तुमको मनुष्य जन्मपर सुनाते हैं:—

एक राजाकी तीनसौ साठ रानी थीं और प्रत्येक रानीके पास राजा एक २ रात्रिको जाते थे, अर्थात् बरसकी तीनसौ साठ रात्रि होती हैं । सो हिसाबसे तीन सौ साठ रानीपर बटी हुई थीं । जिस रानीके घरमें राजाके आनेकी जिस दिन पारी होती थी वह रानी उस दिन अपने घरमें बडी तैयारी करतीथी, क्योंकि फिर सालभर पीछे तिसकी पारी पडतीथी । जिस दिन सबसे छोटी रानीकी पारी पडी तिसने अपने घरमें बहुतसी तैयारी करी, जब कि, चार पाँच घडी रात्रि व्यतीत होगई और राजाको आनेमें देर होगई । क्योंकि, राजाको उस दिन कोई काम पेश आगया राजा उस काममें रुक गये और इधर रानीको नींदने सताया तब रानीने अपनी लौंडीसे कहा मैं तो सो जातीहूं, क्योंकि, मेरेको नींदने बहुत सताया है और तूं जागती रहो, जब राजा साहिब आवें तब हमको जगा देना । लौंडीसे ऐसे कहकर रानी तो सोगई । अर्द्ध रात्रिके बीतजानेपर राजा वहांपर गये और रानीको सोती देखकर बडे क्रुद्ध हुए । लौंडी राजाके सामने कुछ बोल न सकी किन्तु रानीको न जगासकी । राजाभी थके थे वहभी जाकर सोगये । सबेरे राजा उठकर अपने कामपर चले गये । पीछे जब कि रानीकी नींद

खुली तब उसने लौंडीसे पूंछा राजा साहिब आये थे लौंडीने कहा हां आये थे तब कहा हमको तुमने क्यों नहीं जगाया ? लौंडीने कहा राजाके क्रोधके आगे मेरे होश बिगड गये थे. कैसे जगाती । तब रानी रोने लगी और रानीने कहा कब फिर तीनसौ साठ रात्रि बीतेंगी । जो राजा फिर मिलेंगे । ऐसे कहकर पश्चात्ताप करके रोने लगी । हे चित्तवृत्ते ! यह तो दृष्टांत है अब इसको दार्ष्टान्तमें लेना । चौरासी लाख योनियोंमेंसे फिरता २ यह जीव मनुष्ययोनिमें आता है, इस मनुष्ययोनिमेंभी यदि इसको अपने स्वरूपका बोध न हुवा तब फिर कब चौरासी लाख योनि व्यतीत होंगी, जो इसको फिर मनुष्यजन्म मिलेगा । इस प्रकारका इसकोभी अन्तमें पश्चात्तापही करना पडेगा ॥ ४६ ॥

हे चित्तवृत्ते ! इसी विषयमें हम तुमको एक और दृष्टांत सुनाते हैं:—

एक राजाने किसी दूसरे राजापर चढाई की और उस राजाके देशको इस राजाने जीत लिया कुछ कालतक राजा उसीदेशमें रहा, जब राजाने अपने देशमें आनेकी तैयारी की तब अपने घरमें सब रानियोंके प्रति राजाने लिखा जिस २ वस्तुकी जिसको जरूरत हो वह लिखे उसके लिये मैं वही वस्तुको खरीद करके लेता आऊंगा । सब रानियोंने उस देशके भूषण वस्त्रोंके लानेके लिये राजाको लिखा, जो कि, सबसे छोटी रानी थी उसने एक सादे कागज पर एकका अङ्क लिखकर लिफाफामें बंद करके राजाकी तरफ खतको भेज दिया राजाने सबके खतोंको बाँचकर जिसने जो २ वस्तु लिखी थी उसके लिये मँगाकर संदूकोंमें बंद करके रखवादी । जब कि, तिस छोटी रानीके खतको बाँचा तब उसमें कुछभी नहीं लिखा था । केवल एकका एक अंकही लिखा था । राजाने वजीरसे कहा यह रानी कैसी मूर्ख है ? इसने खाली अंक लिखकर भेज दिया है अब इसका क्या मतलब है आप समझाइये । वजीरने कहा सब रानियोंमें येही रानी चतुर है, इस एक अंक लिखनेका यह मतलब है हमको एक तुम्हारीही चाहना है और किसी वस्तुकी चाहना नहीं है, राजाने कहा ठीक है । जब राजा अपने नगरमें आये तब जो २ वस्तु जिसके लिये लाये थे सो सो वस्तु उसके घरमें भिजवादी और आप राजासाहिब उस छोटी रानीके घरमें चले गये । राजाके वहांपर जानेसे बाकीकी सब विभूति राजाके

साथही तिस रानीके घरमें चली गई । हे चित्तवृत्ते ! यह तो दृष्टांत है, अब इसको दार्ष्टान्तमें घटाओ । संसारमें जितनेक सकामी पुरुष ईश्वरकी भक्ति उपासनाको जिस २ फलके लिये करते हैं उसी २ फलको पाते हैं, उससे अधिकको नहीं पाते हैं । जो कामनासे रहित होकर केवल तिसी एक ब्रह्मकी प्राप्तिके लिये उपासनाको करता है, वही तिस निर्गुण ब्रह्मको प्राप्त होता है, वही जन्म मरणरूपी संसारचक्रसे छूट जाता है । दूसरा किसी प्रकारसे भी तिस चक्रसे नहीं छूट सक्ता है । इस लिये मुक्तिकी इच्छावालेको उचित है कि, निष्काम होकर तिस एकहीकी उपासना करै ॥ ४७ ॥

विवेकाश्रम कहते हैं हे चित्तवृत्ते ! एक और दृष्टांतको तुम सुनोः—

किसी नगरमें दो पुरुष परस्पर मित्र थे और इकट्ठे भी रहते थे और दोनोंको यह बीमारी थी जो जहांपर एक आदमी खडा हो वहांपर दो दिखाते थे, अर्थात् एक २ के दो २ उनको दिखाते थे । एक दिन दोनोंने परस्पर विचार किया चलकर किसी वैद्यके पास इस बीमारीका इलाज करना चाहिये। दोनों एक वैद्यके पास गये और वैद्यसे अपना हाल कहा हमको एकके दो २ दीखते हैं, हम इसकी दवाई करैंगे । वैद्यने उनसे कहा हमको तो एकके तीन दीखते हैं । इन्होंने कहा कैसा भी हो हम तुम्हारीही दवा करेंगे । दोनोंमेंसे एकने विचार किया हमसे तो वैद्यको अधिक बीमारी है यह हमारी क्या दवाई करैगा । वह तो ऐसा विचार करके अपने घरको चला गया । दूसरा जो अनजान था वह तिस वैद्यके पास बैठ गया और तिसकी दवाईको करने लगा थोडे दिनमें तिसकोभी एक २ के तीन २ दिखाने लगगये । यह तो दृष्टांत है अब दार्ष्टांतमें इसको सुनो । इस जीवको ईश्वर जीवका भेदरूपी द्वैत तो पहलेही दिखाताथा, तिस द्वैतके दूर करनेके लिये यह गुरुके पास गया आगे गुरु ऐसा मिला जो उसने त्रैत लगा दिया । एक हम हैं दूसरा ईश्वर है तीसरी प्रकृति याने माया है और तीनों नित्य हैं, अथवा तीन जो ब्रह्मा विष्णु महेश देवता हैं सो तीनों ईश्वर हैं, इन तीनोंकी उपासनासे मुक्ति होती है । इस तरहका त्रैत लगा दिया । इसतरहके जो गुरु हैं उनके उपदेशसे मोक्ष कदापि नहीं होसक्ती है मोक्ष उसी गुरुके उपदेशसे होसक्ती है जो एकात्मवादी है ॥ ४८ ॥

हे चित्तवृत्ते ! जिस कालमें यह जीव माताके गर्भमें आता है और फिर पिताके वीर्यसे और माताके रक्तसे जिस कालमें इसका शरीर बनकर गर्भमें तैयार होजाता है उस कालमें जीवको अपने पूर्वके अनेक जन्म याद आतेहैं, और अनेक जन्मोंमें जो दुःख सुख भोगे हैं वहभी सब इसको याद आते हैं, तब यह ईश्वरसे प्रार्थना करता है, अबकी बार जो मैं जन्मको लेऊंगा तब अवश्यही आपकी उपासना करूंगा ऐसा बार २ कहता है, जब कि जन्म लेता है तब माया मोहमें पडकर तिस करारको भूल जाता है इसीसे फिर जन्म मरणको प्राप्त होता है और वह पुरुषभी नहीं होसक्ता है । पुरुष वही कहाता है जो अपने वचनकी पालना करता है । हे चित्तवृत्ते ! इसीमें हम तुमको एक दृष्टांत सुनाते हैं:–

किसी नगरके बाहर जंगलमें एक महात्मा रहते थे और नित्यही वह दोपहरके समय नगरमें भिक्षा मांगनेको जाते थे रास्तेमें एक वेश्याका मकान था जब कि वह महात्मा उस मकानके समीप जातेथे तब वह वेश्या उनसे नित्यही पूंछतीथी आप स्त्री हैं या पुरुष हैं ? तब महात्मा कहतेथे इसका जवाब हम फिर देंगे । इसी तरह नित्यही उनकी आपसमें बातें होतीथीं । कईबरस इसी तरह कहते सुनते बीत गये । एक दिन उन महात्माका देहांत होगया जब नगरमें उनके मरनेकी खबर फैली तब बहुतसे लोक गये । उस वेश्याने जब सुना वहभी गई, आगे वहांपर लोकोंकी बडी भीड लगीथी उस वेश्याने कहा हटो हमकोभी दर्शन कर लेने देवो, लोक जब थोडासा हटगये तब वेश्याने उनका नाम लेकर पुकारा और कहा तुम स्त्री हो या पुरुष हो ? जब कि तीन बार वेश्याने कहा महात्मा सत्यवादी होते हैं । आपने कहाथा हम तुम्हारे प्रश्नका उत्तर फिर देंगे सो बिना उत्तर दिये क्यों मरगये यदि हमारे प्रश्नका उत्तर न देकर मरजावोगे तब असत्यवादी ठहरोगे । जब कि, वेश्याने ऐसे कहा तब महात्मा उठकर कहने लगे हम पुरुष हैं हम पुरुष हैं, वेश्याने कहा आप तो पहलेसे ही जानते थे हम पुरुष हैं तब फिर आपने क्यों न कह दिया । महात्माने कहा बाहरके चिह्नोंसे आदमी पुरुष नहीं होसक्ताहै किंतु जो अपने वचनकी पालना करता है वह पुरुष कहा जाता है, हम तुमसे तभी कह देते जो हम पुरुष हैं और बीचमें किसी तरहका विघ्न

पडजाता तब हम कैसे पुरुष होसक्ते ? अब तो हमारी आयु समाप्त होचुकी है और किसी तरहका अब विघ्नभी नहीं पडसक्ता है । इस लिये अब हम कह सक्ते हैं जो हम पुरुष हैं । वेश्याने कहा ठीक है । हे चित्तवृत्ते ! जो आदमी तिस गर्भवाले करारको परमार्थदृष्टिसेही पूरा करता है वही पुरुष है, ऊपरके चिह्नोंसे पारमार्थिक पुरुष नहीं होसक्ता है ॥ ४९ ॥

हे चित्तवृत्ते ! एक और लौकिक दृष्टांतको तुम सुनो:–

दक्षिण देशमें वंजरा और गरुडगंगा नदीका जहाँपर संगम होता है, वहांपर देवशर्मा नाम करके एक ब्राह्मण रहताथा । और तिसकी स्त्रीका नाम सुधर्मा था, तिस ब्राह्मणके घरमें लडका कोई नहीं था । पुत्रकी उत्पत्तिके लिये वह ब्राह्मण वंजरा और गरुडगंगाकी उपासना करता रहा । जब उपासना करते २ तिसकी उमर साठ बरससे ऊपरकी होगई, तब तिसके घरमें एक अंधा लडका पैदा हुवा. उस अंधे लडकेके भी पैदा होनेसे तिसको बडा हर्ष हुवा और तिसको बडे लाड प्यारसे वह पालन करने लगा । जब कि, वह लडका पाँच बरसका हुवा तब तिसका यज्ञोपवीत उसने बडी धूम धामसे कराया और फिर तिसको विद्या पढाने लगा, थोडेहीं बरसोंमें वह अंधा पढकर पंडित होगया । एक दिन वह अंधा अपने आसनपर बैठा था और बाहरसे तिसका पिता आकर जब तिसके पास बैठा तब अंधेने बापसे पूंछा हे पिता ! पुरुष किस पाप करके अंधा होजाता है, पिताने कहा हे पुत्र ! जो पुरुष पूर्व जन्ममें रत्नोंकी चोरी करता है वह उत्तर जन्ममें अंधा होता है । अंधेने कहा हे पिता ! यह वार्ता नहीं है, क्योंकि, शास्त्रकारोंने ऐसा नियम करदिया है ॥ " कारणगुणा हि कार्य्यगुणानारभन्ते " कारणके जो गुण होते हैं वही कार्य्यके गुणोंको भी आरंभ करते हैं अर्थात् कारणके गुणही कार्य्यमेंभी आजाते हैं । हे पिता ! मैं जानताहूं जिस हेतुसे तुम अंधेहो इसी हेतुसे मैंभी तुम्हारे घरमें अंधा पैदा हुवाहूं । पुत्रकी वार्ताको सुनकर पिताने क्रोधसे कहा मैं कैसे अंधाहूँ, पुत्रने कहा हे पिता ! साक्षात् मुक्तिको देनेवाला जो वंजरा और गरुडगंगाका संगम है उसकी उपासना तुम पुत्रकी कामना करके की है, इसीसे मैं जानताहूं जो तुमही अंधे हो मैं अंधा नहींहूं । हे पिता !

ब्रह्मास्त्रको धारण करकेभी तुमने एक मच्छरकोही मारा इसीसे तुमही अंधे हो । हे पिता ! वेद शास्त्रको पढकर एक मूत्रके कीटकी जो इच्छा करता है, वही पुरुष अंधा कहा जाता है । जैसे और मूत्रसे अनेक कृमि उत्पन्न होते हैं, तैसे पुत्रभी एक मूत्रका कृमि है । हे पिता ! जिस पुत्रकी उत्पत्तिके लिये तुमने जन्मभर तप किया है वह पुत्र तो विनाही तपके सूकर कूकरादिकोंकेभी उत्पन्न होते हैं । हे पिता ! पुत्रकरके किसीकीभी गति न हुई है न होवेगी । अपने पुरुषार्थसेही गति होती है । जो पुरुष संसार बंधनसे छूटना चाहता है वह पुत्रोंकाभी त्याग करदेता है । यदि पुत्रसे गति होती तब वह पुत्रोंका त्याग क्यों करदेता और बहुतसे राजोंनेभी आत्मसुखलाभके लिये तप किया है इसीसे साबित होता है कि पुत्रसे गति नहीं होती है, जो पुत्रसेही गति मानता है वही अंधा है ॥

य आत्मज्योतिरुत्सृज्य उदयास्तमयवर्जितम् ।
उदयास्तमयं ज्योतिः सेवते सोऽन्ध ईर्यते ॥ १ ॥

जो पुरुष अन्तरहृदयमें ज्योतिमय नित्य आत्माका त्याग करके उत्पत्ति नाशवाली सूर्य चन्द्रमा आदि ज्योतियोंकी उपासना करता है वही अंधा है । नेत्रहीन पुरुष अंधा नहीं है ॥ १ ॥

हे पिता ! जैसे ब्रह्म नित्य शुद्ध बुद्ध है तैसे जीवभी नित्य शुद्ध है और यह जितना जगत् दीखता है सो सब भ्रममात्र है, जैसे मरुभूमिमें जो जल दीखता है वह जल मरुभूमि रूपही है । तैसे यह जगत्भी भ्रमकरके अधिष्ठान चेतनमें दीखता हैं, सो अधिष्ठानरूपही है हे पिता ! यह जो पुरुष कहता है यह मेरी स्त्री है, यह मेरा पुत्र है, यह मेरा धन है, गृह है, ये सब वासनाकरकेही दीखता है, वासनाकरकेही यह जीव बंधको प्राप्तहोता है, वासनाका त्याग करनेसे परमानंद प्राप्त हो जाता है और वासना करकेही यह अज्ञानी बना है, वासनाके त्याग करदेनेसे ज्ञानवान् बनजाता है ।

हे पिता ! सच्चिदानंदरूप ब्रह्मको ज्ञानवान् पुरुष ज्ञानरूपी चक्षु करके देखते हैं, अज्ञानी जीव तिसको ज्ञानरूपी चक्षु करके नहीं देखसक्ते हैं । वह

अज्ञानी पुरुष ही अंधे कहे जाते हैं । जैसे अंधा पुरुष सूर्यको नहीं देखसक्ता है, तैसे भेदवादी पुरुष भी सर्वत्र आत्माको नहीं देख सक्ता है । हे पिता ! तुम भेदबुद्धिको दूर करके सर्वत्र एकही आत्माको देखो । पुत्रके उपदेश करके देवशर्माभी आत्मज्ञानको प्राप्त हुवा ॥ ९० ॥

हे चित्तवृत्ते ! एक और निर्मोही राजाका इतिहास तुमको सुनाते हैं:–

किसी नगरमें एक धर्मात्मा निर्मोही नाम करके राजा रहताथा तिस राजाका पुत्र एकदिन बनमें शिकार खेलनेको गया, वहाँपर तिसको बडी प्यास लगी, तब वह बनमें एक ऋषिके आश्रमपर गया ऋषिने तिसको जल पिलाकर पूंछा तुम किसके लडकेहो ? उसने कहा मैं निर्मोही राजाका लडकाहूँ, ऋषि तिसकी वार्त्ताको सुनकर कहने लगा निर्मोही और राजा ये दो बातें एकमें कैसे होसक्ती हैं ? जो निर्मोही होगा वह राजा नहीं होगा जो राजा होगा वह निर्मोही नहीं होगा । राजाके लडकेने ऋषिसे कहा यदि आपका विश्वास नहो तो जाकर मालूम करलीजिये, याने परीक्षा कर-लीजिये । ऋषिने राजपुत्रसे कहा हमारे आनेतक तुम इसी हमारे आश्रमपर बैठो मैं जाकर परीक्षा करके आताहूं । ऋषि जब राजभवनमें गये तब द्वारपर राजाकी लौंडी खडीथी उससे ऋषिने जाकर कहा ।

सवाल ऋषिका दोहा ।

तू सुन चेरी स्यामकी, बात सुनावों तोहिं ।
कुँवर विनास्यो सिंहने, आसन परयो मोहिं ॥ १ ॥

जवाब लौंडीका दोहा ।

न मैं चेरी स्यामकी, नहिं कोइ मेरा स्याम ।
प्रारब्ध वश मेल यह, सुनो ऋषी अभिराम ॥ २ ॥

ऋषि लडकेकी स्त्रीसे कहते हैं:–

दोहा ।

तू सुन चातुर सुन्दरी, अबला यौवनवान् ।
देवी वाहन दलमल्यो, तुम्हरो श्रीभगवान् ॥ ३ ॥

लडकेकी स्त्री कहती है:-

दोहा ।

तपिया पूरब जन्मकी, क्या जानत हैं लोक ।
मिले कर्मवश आन हम, अब विधि कौन सँयोग ॥ ४ ॥

फिर ऋषिने कुँवरकी मातासे कहा:-

दोहा ।

रानी तुमको विपत्ति अति, सुत खायो मृगराज ।
हमने भोजन न कियो, तिस मृतकके काज ॥ ५ ॥

ऋषिसे रानी कहती हैं:-

दोहा ।

एक वृक्ष डाले घने, पंछी बैठे आय ।
यह पाटी पीरी भई, उड उड चहुँ दिशि जाय ॥ ६ ॥

ऋषिने राजासे कहा:-

दोहा ।

राजा मुखते राम कहो, पल पल जात घडी ।
सुत खायो मृग राजने, मेरे पास खडी ॥ ७ ॥

ऋषिसे राजा कहते हैं:-

दोहा ।

तपिया तप क्यों छांडियो, इहाँ पलक नहिं सोग ।
वासा जगत् सरायका, सभी मुसाफिर लोग ॥ ८ ॥

जब कि ऋषिने सबके उत्तरोंको सुना तब ऋषिको विश्वास होगया जो ठीक राजा निर्मोही है, बल्कि राजाका घरभर निर्मोही है। ऋषिने आकर अपने आश्रमपर राजपुत्रसे कहा कि, आपने सत्य कहाथा । हमने परीक्षा करली, ठीक राजा निर्मोही है । विवेकाश्रम कहते हैं हे चित्तवृत्ते ! जो इस प्रकार निर्मोही है वही ज्ञानी है और वही जीवन्मुक्त है ॥ ९१ ॥

चित्तवृत्ति कहती है हे विवेकाश्रम ! आपने कहा है कि, संपूर्ण जगत्में एकही चेतन आत्मा व्यापक है और वही आत्मा संपूर्ण शरीरमेंभी व्यापक है। जब कि, एकही आत्मा ऊंच नीच सर्व शरीरमें व्यापक है तब फिर एक जीवको सुख होनेसे सर्व जीवोंको सुख होना चाहिये, एकको दुःख होनेसे सर्व जीवोंको दुःख होना चाहिये, एकके मृत्यु होजानेसे सर्वकी मृत्यु हो जानी चाहिये, एकका जन्म होनेसे सर्वका जन्म होना चाहिये। विवेकाश्रम कहते हैं हे चित्तवृत्ते ! जैसे एकही आकाश अनेक घटादिकोंमें व्यापक होकर स्थित है, एक घटके फूट जानेसे सब घट नहीं फूट जाते हैं, एक घटके उत्पन्न होनेसे सब घट उत्पन्न नहीं होजाते। क्योंकि घटादिरूप उपाधियें सब भिन्न २ और फिर घटादिकोंकी उत्पत्ति नाशसे आकाशकी उत्पत्ति तथा नाश नहीं होता है। क्योंकि आकाश व्यापक है, उपाधियें परिच्छिन्न हैं। तैसे एक शरीरकी उत्पत्ति नाशसे भी आत्माकी उत्पत्ति नाश नहीं होता है। क्योंकि आत्मा व्यापक है निरवयव है, उपाधियें सर्व सावयव हैं और परिच्छिन्न हैं। जैसे किसी एक घटमें धूम या धूली आदिकोंके भरजानेसे सर्व घटोंमें धूमादिक नहीं भर जाते हैं तैसे एक शरीरमें सुख या दुःख होनेसे सर्व शरीरोंमें नहीं होते हैं॥ ९२॥

और दृष्टांतको कहते हैं:—

एक शरीरके संपूर्ण हस्त पादादिकोंमें एकही आत्मा नख शिखतक व्यापक है, परन्तु पादमें दुःख होनेसे हाथमें दुःख नहीं होता है। हाथमें सुख होनेसे पादमें सुख नहीं होता है। एकही कालमें पादमें शीतलता और शरीरमें उष्णता होनेसे सर्व शरीरमें उष्णता शीतलता नहीं होती है। आत्मा तो संपूर्ण शरीरके अवयवोंमें एकही है, फिर सुख दुःखादिक क्यों नहीं बराबरही एक कालमें होते हैं, जैसे कि, एक शरीर संपूर्ण अवयवोंमें एक आत्माके होने पर भी सुख दुःखादि बराबर सर्व अवयवोंमें नहीं होते हैं, तैसे ही ब्रह्मांड भरके शरीरोंमें एक आत्माके होनेसे भी सर्व शरीरोंमें सुख दुःख बराबर नहीं होते हैं, क्योंकि संपूर्ण शरीर एकही विराटके अवयव हैं, विराटके शरीरमें आत्मा एकही है। हे चित्तवृत्ते ! एक आत्माके होनेमें कोई भी संदेह नहीं है और नाना आत्माके माननेमें श्रुतियुक्तिकाभी विरोध आता है। प्रथम श्रतियोंके विरोधको दिखाते हैं।

कैवल्योपनिषद:-

अचिन्त्यमव्यक्तमनन्तरूपं शिवं प्रशान्त-
ममृतं ब्रह्मयोनिम् ॥ तमादिमध्यान्तविहीन-
मेकं विभुं चिदानन्दमरूपमद्भुतम् ॥ १ ॥

वह ब्रह्म अचिन्त्य है, अनन्तरूप है, कल्याणरूप है, शांतस्वरूप है, अमृत है, मायाकाभी कारण है और आदि मध्य अन्तसे भी हीन है, विभु है, एक है, आनन्दरूप है, अद्भुत है ॥ १ ॥

यत्परं ब्रह्म सर्वात्मा विश्वस्यायतनं महत् ।
सूक्ष्मात्सूक्ष्मतरं नित्यं स त्वमेव त्वमेव तत् ॥ २ ॥

जो ब्रह्म सर्व प्राणियोंका आत्मा है संपूर्ण विश्वका आधार है, सूक्ष्मसेभी सूक्ष्म है, नित्य है, सो तूही है और तू वही है ॥ २ ॥

श्वेताश्वतरोपनिषद:-

एको देवः सर्वभूतेषु गूढः सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरा-
त्मा । कर्माध्यक्षः सर्वभूताधिवासः साक्षी चेता
केवलो निर्गुणश्च ॥ १ ॥

एकही चेतनदेव संपूर्ण भूतोंमें छिपाहुआ है, सर्वमें व्यापक है, संपूर्ण भूतोंका अन्तरात्मा है, कर्मोंकाभी अध्यक्ष याने ज्ञाता है, संपूर्ण भूतोंके निवासका स्थानभी है, साक्षी है, चेतन है, द्वैतसे रहित है, निर्गुण है ॥ १ ॥

नैव स्त्री न पुमानेष न चैवायं नपुंसकः ।
यद्यच्छरीरमादत्ते तेनतेन स युज्यते ॥ २ ॥

न यह आत्मा स्त्री है, न पुरुष है, न नपुंसक है किन्तु जिस शरीरको धारण करता है तिसी २ के साथ जुडजाता है ॥ २ ॥

सर्वेन्द्रियगुणाभासं सर्वेन्द्रियविवर्जितम् ।
सर्वस्य प्रभुमीशानं सर्वस्य शरणं बृहत् ॥ ३ ॥

संपूर्ण इन्द्रियोंके गुणोंका प्रकाशक है और आप संपूर्ण इन्द्रियोंसे रहित है सर्वका स्वामी है, सर्वका प्रेरक है और सर्वका आश्रयभी है ॥ ३ ॥

अपाणिपादो जवनो ग्रहीता पश्यत्यचक्षुः स शृणोत्यकर्णः। स वेत्ति वेद्यं न च तस्यास्ति वेत्ता तमाहुरग्र्यं पुरुषं महान्तम् ॥ ४ ॥

तिस चेतनके न हाथ है न पाद है, फिरभी बडे वेगसे चलता है और ग्रहण करता है, विनाही नेत्रोंके देखता है, विनाही कानोंके सुनता है, और जानने योग्य पदार्थोंको जानता है, तिसको जाननेवाला दूसरा कोईभी नहीं है, तिसको आदिपुरुष और सबसे महान् कहते हैं ॥ ४ ॥

इत्यादि अनेक श्रुति वाक्य जीव ब्रह्मके अभेदको और चेतनकी एकताको कथन करते हैं और युक्तियोंसेभी एकही चेतन सावित होता है ॥

चित्तवृत्ती कहती है हे विवेकाश्रम ! जीव ईश्वरके स्वरूपको भिन्न २ करके तू मेरे प्रति कहो, फिर उनकी ऐक्यताको कहो। विवेकाश्रम कहते हैं हे चित्तवृत्ते ! जीव ईश्वरके स्वरूपको मैं आपसे मतभेदसे दिखाताहूं। प्रकटार्थकारका यह मत है कि, अनादि अनिर्वचनीय जो माया है, तिस मायामें जो चेतनका प्रतिबिंब है, तिस प्रतिबिंबका नाम तो ईश्वर है और तिस मायाका आवरण विक्षेप शक्तिवाला जो अविद्यानामवाला भाग है तिस अविद्याके जो अन्तःकरणरूपी अनेक प्रदेश हैं उनमें जो चेतनका प्रतिबिंब है, उसका नाम जीव है।

प्रश्न–वह माया चेतनसे भिन्न है या अभिन्न है ?।

उत्तर–वह माया चेतनसे भिन्न नहीं है, क्योंकि भिन्न माननेमें "नेह नानास्ति किञ्चन" इत्यादि श्रुतियोंसे विरोध होगा और अभिन्न भी नहीं कहसक्ते हैं। क्योंकि जड चेतनका अभेद कदापि नहीं होसक्ता है, और माया चेतनका भेदाऽभेदभी नहीं कह सक्ते हैं अर्थात् चेतनसे माया भिन्नभी है और अभिन्नभी है, इसमें कोई दृष्टांत नहीं मिलता है और जड चेतनका भेदाऽभेद किसी प्रकारसेभी नहीं होसक्ता है। क्योंकि उभय विरोधी धर्म एकमें नहीं रह सक्ते हैं, इस लिये भेदाऽभेदभी नहीं बनता है। फिर यदि मायाको सत्य माना जाय तब अद्वैत श्रुतिसे विरोध आता है। यदि असत्य माना जाय तब

मायाको जड जगत्की कारणता नहीं बनती है । क्योंकि असत्से जगत्की उत्पत्ति नहीं होसकती है । असत् नाम अभावका है, यदि अभावसे उत्पत्ति मानी जायगी तब घटरूपी कार्यके लिये मृत्तिकाकी कुछभी जरूरत नहीं होगी, सर्वत्रही सब वस्तुओंका अभाव विद्यमान है, सर्वत्र सब पदार्थोंकी उत्पत्ति होनी चाहिये, ऐसा तो नहीं देखते हैं, इस लिये अभावसे भाव पदार्थकी उत्पत्ति नहीं होती है इसलिये माया असत्यरूप भी नहीं है और सत्असत् उभयरूपभी माया नहीं है । क्योंकि विरोधी धर्म दो एकमें रह सक्ते हैं और माया सावयव या निरवयवभी नहीं है, यदि मायाको सावयव माना जायगा तब तिसका कोई दूसरा कारण मानना पडेगा क्योंकि जो सावयव पदार्थ होता है वह जरूर किसी कारणसे उत्पन्न होता है । इसलिये तिसको सावयवभी नहीं मान सक्ते हैं, कारण अनवस्था आदिक दोष आवेंगे और मायाको निरवयवभी नहीं मान सक्ते हैं, क्योंकि निरवयव मायासे सावयव जगत्की उत्पत्तिभी नहीं होसक्ती है, और सावयव निरवयव दोनों रूप एकमें रहभी नहीं सक्ते हैं जो सावयव होगा, वह कदापि निरवयव नहीं होसक्ता है । जो निरवयव होगा वह कदापि सावयव नहीं होसक्ता है । एक तो दोनों परस्पर विरोधी हैं, दूसरा इसमें कोई दृष्टांतभी नहीं मिलता है इस वास्ते मायाका स्वरूप अनिर्वचनीय है । अनिर्वचनीयका अर्थ क्या है ? जिसका कुछभी निर्वचन न होसक्ता प्रथमतो मायाके कार्यकाही कोईभी निर्वचन नहीं करसक्ता है । देखो अतिछोटेसे वटके बीजमें इतना बडा वटका वृक्ष रहता है और भावरूप करकेही रहता है, अभावरूप करके नहीं रहता । क्योंकि अभावकी उत्पत्ति नहीं होती है फिर हम पूंछतें हैं इतने छोटेसे बीजमें अनेक शाखा और पत्तोंके सहित इतना बडा वृक्ष किसतरहसे रह सक्ता है । इसको आप किसी तरहसेभी नहीं बतला सक्ते हैं । फिर हरएक बीजमें कारणरूप करके कार्य विद्यमान है, कार्योंमें अनेक प्रकारकी रचना हमको दिखाई पडती है कारणमें वह नहीं दिखाती है और सूक्ष्मरूप तिसमें तिसकी सब रचना विद्यमान है तिस छोटेसे बीजमें इतनी बडी रचना क्योंकर रह सक्ती है ?

इसका निर्वचनभी तुमसे कुछ नहीं बनैगा, तब अर्थसेही कार्य्यभी अनिर्वचनीय सिद्ध होगा । जिसका कार्य अनिर्वचनीय है, तिसका कारण तो अर्थसेही अनिर्वचनीय सिद्ध हुवा और साइन्स वालोंने पैसठ तत्त्व मानेहैं, जल और अग्निको इन्होंने स्वतंत्र तत्त्व नहीं मानाहै, किंतु और तत्त्वोंके संयोगसे इनकी उत्पत्ति उन्होंने मानी है । दो प्रकारकी भिन्न २ वायुके मिलनेसे जलकी उत्पत्ति इन्होंने मानीहै । हम पूछते हैं उन दो प्रकारकी वायुमें प्रथम जल था या नहीं था । यदि कहो था तब पृथक् तत्त्व जल साबित होगया । यदि कहो उन दो प्रकारकी वायुमें जल नहीं था तब उनके संयोगसेभी जल उत्पन्न नहीं होसक्ताहै । क्योंकि अभावसे भावकी उत्पत्ति कदापि नहीं होसक्तीहै । और जलका निर्वचनभी कुछ न हुवा इसी प्रकार एक २ वृक्षके पत्तेका निर्वचन करोगे तब सैकडों बरसों तकभी नहीं होगा और न पूर्व हुवाहै । जिस मायाके अनंत कार्योंमेंसे एक कार्य्यकाभी निर्वचन नहीं होसक्ता है, उस कारणरूप मायाका कौन निर्वचन करसक्ताहै । फिर जब पुरुष सो जाताहै, तब इसको अपने भीतर बडे २ देश, पर्वत, नदियें, हाथी, घोडे आदिक दिखाते हैं और जिस नाडीमें मनके जानेसे स्वप्न आताहै वह नाडी बालसे भी महीनहै, उसमें सुईके नोककी भी जगह नहीं है और हाथी घोडे आदिकोंका कोई कारणभी बीजादिक वहांपर नहीं है और जाग्रत् होनेपर सब हाथी घोडे आदिक लयभी होजातेहैं । अब इसका निर्वचन कौन करसक्ताहै, जो कहाँसे वह सब पैदा होतेहैं और कहाँपर लय होजातेहैं । जैसे स्वप्नके पदार्थोंका और उनके कारणका कुछ निर्वचन नहीं होसक्ताहै । तैसे माया और मायाके कार्यकाभी कुछ निर्वचन नहीं होसक्ताहै । तब दोनोंही अनिर्वचनीय साबित हुए उस अनिर्वचनीय मायामें जोकि चेतनका प्रतिबिंब है, उसका नाम तो ईश्वर है मायामें आवरण विक्षेप शक्तिवाले जो कि परिछिन्न अनंत प्रदेश हैं उन्हींका नाम अविद्या है । उन प्रदेशोंमें जो कि चेतनका प्रतिबिंबहै उसका नाम जीवहै, प्रदेशोंके अनंत होनेसे जीवभी अनंत हैं । इस मतमें एकही अनिर्वचनीय

प्रकृतिमें प्रदेश प्रदेशीरूपकी कल्पना करके जीव और ईश्वरको प्रतिबिंबरूप करके माना है ॥ १ ॥

अब तत्त्वविवेककारके मतको दिखलाते हैं:-

त्रिगुणात्मिका एक मूल प्रकृति है, तीनों गुणोंकी साम्यावस्थाका नामही मूलप्रकृतिहै । वह मूलप्रकृति आपही माया और अविद्या रूपोंवाली होजाती है । और एकही चेतनको जीव ईश्वर दो रूपोंवालाभी कर देती है । शुद्ध सत्त्वगुण प्रधान वही प्रकृति माया कहलाती है । और मलिन सत्त्वप्रधान वही प्रकृति अविद्या कहलाती है तिस मायामें जोकि चेतनका प्रतिबिंब पडताहै तिसका नाम ईश्वर है और अविद्यामें जो प्रतिबिंबहै तिसका नाम जीव है "जीवेशावाभासेन करोति माया च अविद्या च स्वयमेव भवति" । वह मूलप्रकृति जीव ईश्वरको अपनेमें आभास करके कर देतीहै और आपही माया और अविद्यारूपभी हो जातीहै यही श्रुति जीवेश्वरकी सिद्धिमें प्रमाणहै और एकही प्रकृतिमें सत्त्व गुणकी शुद्धि अशुद्धिसे माया अविद्याका भेदभी कल्पना किया है ॥ १ ॥

अब अपरमतसे कहते हैं:-

एकही मूलप्रकृति विक्षेप प्रधानतासे माया और आवरण शक्ति प्रधानतासे अविद्या कही जातीहै । माया ईश्वरकी उपाधि है और अविद्या जीवका उपाधिहै और बिंबरूप साधारण चेतनके वह आश्रितभी है, तथापि 'अज्ञोहं' ऐसा जीवकोही अनुभव होताहै, ईश्वरको नहीं होता । क्योंकि जीवकी उपाधिमेंही आवरणविक्षेप शक्तिहै, ईश्वरकी उपाधिमें वह नहीं है इसलिये ईश्वरको 'अज्ञोहम्' ऐसा नहीं होताहै । इस मतमें आवरण विक्षेप शक्तिका भेद कल्पना करके जीव ईश्वरका भेद माना है ॥ ३ ॥

अब संक्षेपसे शारीरककारके मतको दिखातेहैं:-

वह कहताहै "कार्य्योपाधिरयं जीवः कारणोपाधिरीश्वरः" कार्योपाधिवाला जीवहै, कारणोपाधिवाला ईश्वर है । इस श्रुतिके अनुसार अविद्यामें प्रतिबिंबका

नाम ईश्वर है और अविद्याका कार्य्य जो अन्तःकरण तिसमें प्रतिबिंबका नाम जीव है और जहांपर बिम्ब एक हो, वहांपर उपाधिके भेदसे बिना प्रतिबिम्बका भेद नहीं बनता है । इसलिये ईश्वरकी उपाधि अविद्या भिन्न है और जीवकी उपाधि अन्तःकरण भिन्न है । दोनों उपाधियोंके भेद होनेसे जीव ईश्वरका भेद है, अविद्या एक है, इसलिये ईश्वरभी एक है, अन्तःकरण अनन्त हैं, जीवभी अनन्त हैं, अविद्याका सम्बन्ध ईश्वरके साथ है, अन्तःकरणका संबन्ध जीवके साथहै । जैसे घटकरके आकाशका अवच्छेद मानते हैं, तैसे यदि अन्तःकरण करके चेतनका अवच्छेद माना जावैगा तब दोष आवैगा सो दिखाते हैं । इस लोकमें ब्राह्मणादि शरीरमें गत जो अन्तःकरण, तदवच्छिन्न जो चेतन प्रदेश है, सो तो कर्मोंका कर्ता होगा और परलोकमें देवादिशरीरमें जो अन्तःकरण तदवच्छिन्न चेतन प्रदेश भोक्ता होगा जो कि इस लोकमें अन्तःकरणावच्छिन्न चेतन प्रदेश कर्मोंका कर्ता था वह तो भोक्ता नहीं होगा, क्योंकि वह परलोकमें देवादिशरीरमें नहीं है और जो देवादिशरीरमें अन्तःकरणावच्छिन्न चेतन प्रदेश है, वह इस लोकमें नहीं है, वह कर्ता न हुआ तब अन्य करके किये हुए कर्मोंका फल अन्यही भोगेगा । यही अवच्छेद वादमें दोष आता है, इसी हेतुसे अन्तःकरणावच्छिन्न चेतन जीव नहीं होसक्ता है, किन्तु अन्तःकरणमें जो कि चेतनका प्रतिबिम्ब है वह जीव होसक्ता है । घटरूप उपाधिके गमनागमन होनेपरभी जैसे तिस घटरूप उपाधिमें एकही सूर्य्यका प्रतिबिम्ब सर्वत्र उसी घटमें पडता है, प्रतिबिम्बका भेद नहीं होता है । तैसे अन्तःकरणरूपी उपाधिके गमनाऽगमन होनेपरभी एकही चेतनका प्रतिबिम्ब तिसमें पडता है, तब जो कर्ता होगा वही भोक्ताभी होगा, कोईभी दोष नहीं आवेगा ॥ ४ ॥

अब अवच्छेदवादीके मतको दिखाते हैं:—

अन्तःकरणावच्छिन्न चेतनका नाम जीव है, अन्तःकरणानवच्छिन्न चेतनका नाम ईश्वर है, इस मतमें कोईभी दोष नहीं आता है, किंतु प्रतिबिम्बवादमेंही दोष आता है सो दिखाते हैं । जैसे जलसे बाहर आकाशमें स्थित जो सूर्य्य है, तिसीका प्रतिबिम्ब जलमें पडता है तैसे उपाधियोंसे बाहर स्थित चेतनको

भी प्रतिबिम्ब उपाधियोंमें मानना पडैगा तब ब्रह्मांडसे बाहर कहीं स्थित चेतन सिद्ध होगा । ब्रह्मांडके अन्तर्गत नहीं सिद्ध होगा । तब फिर चेतनभी परिच्छिन्न होजायगा परिच्छिन्न होनेसे व्यापक नहीं सिद्ध होगा, किंतु नाशी सिद्ध होगा ? एक तो प्रतिबिम्बवादमें यह दोष आवेगा, दूसरा व्यापक चेतन निरवयव निराकारक प्रतिबिम्ब कहनाभी नहीं बनता है, क्योंकि ऐसा देखनेमें आता है। कि जलसे बहिर्गत मेघाकाशका जलमें प्रतिबिम्ब पडता है, जलगत आकाशका जलमें प्रतिबिम्ब नहीं पडता है । तैसेही ब्रह्माडके बहिर्गत चेतनकाही प्रतिबिम्बभी मानना होगा । ब्रह्मांडके अन्तर्गत चेतनका तो नहीं मानना होगा, तब फिर 'विज्ञाने तिष्ठन्' जो विज्ञानके अन्तरस्थित होकर प्रेरणा कर्ता है इत्यादि श्रुतियोंसे विरोधभी जरूर आवैगा और ईश्वरभी ब्रह्मांडसे बाहिर सिद्ध होगा इसी हेतुसे प्रतिबिम्बवाद असंगत है । यदि उपाधिके अन्तर्गतकाभी प्रतिबिम्ब माना जावैगा तब जैसे जलसे बहिर्गत मुखका जलमें प्रतिबिम्ब पडता है, तैसे जलके अन्तर्गत मुखकाभी जलमें प्रतिबिम्ब पडना चाहिये सो तो देखनेमें नहीं आता है। और जैसे जलसे बहिर्गत मुखका प्रतिबिम्ब पडता है तैसे अन्तःकरणसे बहिर्गत चेतनकाभी प्रतिबिम्ब अन्तःकरणमें कहना होगा । तबभी पूर्वोक्त श्रुतिसे विरोध बनाही रहेगा । और जो वादीने अवच्छेदवादमें कर्ताभिन्न भोक्ताभिन्न होजानेका दोष दिया है वह दोष प्रतिबिम्बवादमेंभी तुल्यही लगता है । तथाहि यदि सम्पूर्ण अन्तःकरणोंमें ब्रह्मांडसे बहिर्गत अर्थात् व्यवहित चेतनका प्रतिबिम्ब माना जावै तब तो इस लोक परलोकमें प्रतिबिंबका भेद सिद्ध नहीं होगा । तथापि एक तो ब्रह्मांडके बहिर्गत समग्र चेतनका अन्तःकरणमें प्रतिबिंब किसी प्रकारसेभी नहीं पडसक्ता है और न तिसके एकही देशका प्रतिबिंब पडसक्ताहै । क्योंकि ब्रह्मांडसे बहिर्गत समग्र चेतनके साथ या तिसके एक देशके साथ अन्तःकरणकी सन्निधि नहीं है और बिना सन्निधिके प्रतिबिंब पड नहीं सक्ताहै। जैसे ब्रह्मांडसे बहिर्गत आकाशका जलमें प्रतिबिंब नहीं पडसक्ताहै, तैसे ब्रह्मांडसे बहिर्गत चेतनकाभी प्रतिबिंब नहीं पडसक्ता है। यदि ब्रह्मांडके अन्तर्गत अन्तःकरण सन्निहित चेतनका प्रतिबिंब अन्तःकरणमें मानोगे तबभी ब्रह्मांडभरके अन्तर्गत चेतनका प्रतिबिंब अन्तःकरणमें नहीं मान

सकोगे। क्योंकि ब्रह्मांडभरके चेतनकी अंतःकरणके साथ सन्निधि नहीं है, किंतु ब्रह्मांडके अन्तर्गत जो चेतन तिसीके किसी प्रदेशके साथ अन्तःकरणकी सन्निधि होगी उसी चेतनके प्रदेशका प्रतिबिंबभी तुमको मानना पडैगा। तब फिर पूर्ववाला दोष लगाही रहेगा। अन्तःकरणके गमनाऽगमन करनेसे बिंबके भेदसे प्रतिबिंबका भेदभी अवश्यही होगा, तब फिर कृतहानि अकृतकी प्राप्तिरूप दोष होगा। यदि प्रतिबिंबरूप जीवकी अन्तःकरण रूप उपाधिका त्याग करके अविद्याको जीवकी उपाधि मानैगा तब अविद्याका गमन बनैगा नहीं। तब इस लोक परलोकमें प्रतिबिंबका भेदभी सिद्ध नहीं होगा और प्रतिबिंबके भेदके न सिद्ध होनेसे पूर्वोक्त दोषभी नहीं आवैगा? सो अवच्छेदवादमें हमभी अविद्या अवच्छिन्न चेतनकोही जीव मान लेवेंगे। हमारे मतमेंभी अविद्याके गमनाऽगमनके अभाव होनेसे चेतनका भेद नहीं होगा, चेतनके भेदका अभाव होनेसे पूर्वोक्त दोषभी नहीं आवैगा। इन्ही हेतुओंसे प्रतिबिंबका निषेध करके अवच्छेदवादीने अन्तःकरणावच्छिन्न चेतनकोही जीव माना है और अन्तःकरण अनवच्छिन्न चेतनको तिसने ईश्वर माना है॥ ९॥

अब औरके मतको दिखाते हैं:—

अन्य कोई कहता है प्रतिबिंबवाद और अवच्छेदवादमें श्रुतिका विरोध दूर नहीं होता है। श्रुति कहती है जो जीवात्माके अन्तःस्थित होकर जीवात्माको प्रेरणा करता है सोई ईश्वर है, सो जीवात्माके अन्तस्थित होनाही प्रथम ईश्वरको नहीं बनता है सो दिखाते हैं। अवच्छेदवादमें अन्तःकरणके भीतर जो चेतन आगया है, उसीको जीव माना है और अन्तःकरणके बाहर जो चेतन है उसको ईश्वर माना है। अब इस मतमें अन्तःकरणके अंतर ईश्वर है नहीं, तब जीवको प्रेरणा कैसे करैगा और तिसके कर्मोंको कैसे जानेगा। यदि कहो वह ईश्वर चेतन व्यापक है. तिसके भीतरभी रहेगा बाहर भी रहेगा सो नहीं बनता। निरवयव निराकार दो पदार्थ एक स्थानमें नहीं रह सक्ते हैं जो रहेगा तब वह उपाधि करके परिच्छिन्न होजायगा परिच्छिन्न होनेसे वह जीवही होगा सो परिच्छेदवाला जीव तो तुमने पहलेही मान लिया है दो जीव

एक अन्तःकरणमें तुमनेभी माने नहीं हैं और न जीव ईश्वर दोकी उपाधि अन्तःकरण होसक्ता है, इसी युक्तिसे श्रुतिका विरोध बनाही रहेगा फिर यही दोष प्रतिबिंबवादमेंभी होगा । पूर्वोक्त मतमें अविद्यामें प्रतिबिम्बको ईश्वर माना है और अन्तःकरणमें प्रतिबिंबको जीव माना है वहाँ अविद्यामें जो प्रतिबिंब है, जब अन्तःकरणमें नहीं है और प्रतिबिंबका प्रतिबिंब बनता नहीं । तब प्रतिबिंबवादमेंभी जीवके अन्तर्गत ईश्वर न रहा तिस मतमें भी दोष बराबरही लगारहा । और प्रकटार्थ करके मतमेंभी यही दोष लगाही रहैगा । क्योंकि, उसने भी मायामें प्रतिबिंबको ईश्वर माना है और मायाके प्रदेशोंमें चेतनके प्रतिबिंबको जीव माना है । अब इस मतमेंभी मायामें जो प्रतिबिंब है, वह मायाके प्रदेशोंमें नहीं है और जो आवरण विक्षेप शक्तिवाले प्रदेशोंमें प्रतिबिंब है मायामें वह नहीं है । तबभी जीवके अन्तर्गत ईश्वर साबित न हुआ और दो प्रतिबिंब एक उपाधिमें नहीं रह सक्ते हैं । यदि कहो जलमें सूर्य और आकाश तथा इतर वृक्षादिकोंका प्रतिबिंब एकही जलरूप उपाधिमें देखते हैं सो दृष्टांत यहांपर नहीं घटता है क्योंकि सूर्य्य और वृक्षादि सब भिन्न २ सावयव पदार्थ हैं उनका प्रतिबिंब जलरूप उपाधिमें पडभी सक्ता है । परन्तु एकही आकाशके दो प्रतिबिंब एकही घटमें जैसे नहीं पडसक्ते हैं । तैसे एकही चेतनके एकही उपाधिमें दो प्रतिबिंब नहीं पडसक्ते हैं । तब जीवके अन्तर्गत ईश्वरभी सिद्ध न हुवा और पूर्वोक्त दोष लगाही रहा । और जिसके मतमें एकही प्रकृतिके माया अविद्या दो भेद मानकर जीव ईश्वरका भेद सिद्ध भया उस मतमेंभी मायामें जो प्रतिबिंब है वह अविद्यामें नहीं है अविद्यामें भिन्न है, मायामें भिन्न है, इस मतमेंभी जीवके अन्तर्गत ईश्वर सिद्ध नहीं होता है श्रुति विरोध इस मतमेंभी हट नहीं सक्ता है । सांख्यमतवालोंने ईश्वरको नहीं माना है किन्तु जीवकोही चेतनरूप करके व्यापक मानाहै अर्थात् इनके मतमें ब्रह्माण्डभरके जीव व्यापक हैं और चेतनरूप हैं, असंग हैं, निराकार निरवयवहैं, जीव कर्ता नहीं भोक्ता है कर्त्री प्रकृति है, इनके मतमें एक तो यह दोष पडताहै जो जड प्रकृतिको कर्तृत्वपना नहीं बनता है, यदि जडको कर्ता माना जावैगा तब मृत्तिका आपही घटको बनालेगी । घटके बनानेके लिये कुलालकी आवश्य-

कता नहीं होगी । दूसरा निरवयव निराकार अनेक विभु एक देशमें रह नहीं सक्ते हैं । इन दोनोंमें कोईभी दृष्टांत नहीं मिलता है । और नैयायिक जीव और ईश्वर दोनोंको विभु और जड मानता है चेतनता उनका गुण मानता है। इसके मतमेंभी एक तो वही दोष आवैगा जो बहुतसे विभु एक देशमें नहीं रह सक्ते हैं । यदि मानेंगे तब कर्मोंका संकर होजायगा और जीवोंके कर्म ईश्वरमेंभी जारहेंगे । क्योंकि दोनों निराकार व्यापक हैं भेदक तो कोई ईश्वर जीवके अन्तरमें नहीं है दोनोंको निराकार होनेसे दोनों एकही होजायँगे तब जीव ईश्वरकी कल्पनाभी इनकी मिथ्या होजायगी । फिर जड निराकार होभी नहीं सक्ता है । यदि मानेंगे तब शून्यवादही सिद्ध होगा और जडका धर्म चेतनताभी नहीं होसक्ती है । इसमेंभी कोई दृष्टांत नहीं मिलता है इसलिये इनका मत श्रुतियुक्तिसे विरुद्ध होनेसे असंगत है वैष्णव और आचारी लोक जीवात्माको निरवयव और अणु परिमाणवाला मानते हैं और चेतनभी मानते हैं, चेतन निरवयव विना उपाधिके अणु परिमाणवाला नहीं होसक्ता है और फिर केवल चेतनमें चेतन रहभी नहीं सक्ता है । इस मतमेंभी ईश्वरको प्रेरणा करनी जीवको नहीं बनती है । इसी तरह औरभी मतोंवालोंने अपने ईश्वर भिन्न २ माने हैं और फिर भिन्न उनके लोक माने हैं । उन सबके मत तो सर्वथा श्रुति युक्ति विरुद्ध हो त्यागने योग्य हैं । पूर्व जो मत दिखाये हैं उनको यदि सूक्ष्मदृष्टिसे देखाजाय तब उन सब मतोंमें जीव ईश्वरका भेद सिद्ध नहीं होता है । इसीसे यह वार्ताभी साबित होती है जो भेद कल्पित है, वास्तवसे अभेदही है । अब अपने मतको दिखाते हैं । न तो प्रतिबिंबरूप जीव है और न अवच्छेदरूपही जीव है, किंतु जैसे कर्णको सूतपुत्र भ्रम हुआ था जो मैं सूतपुत्र हूँ और अपनेको सूतपुत्र करकेही मानता था और वास्तवसे वह सूतपुत्र नहीं था, तैसे अवच्छेद और प्रतिबिम्ब भावसे रहित ब्रह्मको अनादि अविद्याके सम्बंधसे अपनेमें जीवत्वका भ्रम हुआ है और अपनी अविद्या करके जीवभावको प्राप्त जो ब्रह्म है, उसीने सर्व प्रपंचकी कल्पना की है अर्थात् वही ब्रह्मही सर्व प्रपंचका कल्पना करनेवाला है । जैसे और संपूर्ण जगत्की तिसने कल्पन की है । तैसे सर्वज्ञत्वादि धर्मोंवाले ईश्वरकी कल्पनाभी

तिसी जीवने ही की है। अर्थात् ईश्वरभी जीव करकेही कल्पित है। जैसे स्वप्नमें जीव सर्वज्ञत्वादिक गुणों करके विशिष्ट ईश्वरकी कल्पना करके तिसकी उपासनाको कर्ता है और कल्पित उपासनाके कल्पित फलकोंभी प्राप्त होता हैं, तैसे जाग्रत्‌मेंभी जीव ईश्वरकी कल्पना करके तिसकी उपासना करके कल्पित फलको प्रात होता है। वास्तयसे जीवत्व ईश्वरत्व दोनों धर्म चेतनमें कल्पित हैं। एक चेतनमें धर्मही सत्य है ॥ ६ ॥

अब एक जीववाद और अनेक जीववादको दिखाते हैं:—

एक जीववादी कहता है एकही शरीर सजीव है, बाकीके सब शरीर स्वप्नके शरीरोंकी तरह निर्जीव हैं. इसलिये जीव एकहीहै नाना जीव नहीं हैं।

प्रश्न—जैसे एक शरीरमें हिताऽहित प्राप्ति परिहारार्थ चेष्टा प्रतीत होती है तैसे संपूर्ण शरीरोंमेंभी हिताऽहित प्राप्ति परिहारार्थ चेष्टा प्रतीत होती है इसवास्ते ऐसा कथन नहीं बनता है जो एकही शरीर सजीव है और बाकीके शरीर सब निर्जीव हैं।

उत्तर—जैसे स्वप्नकालमें स्वप्नके द्रष्टाकी दृष्टिसे स्वप्नके कल्पेहुए जीव सब चेष्टावाले प्रतीत होते हैं, परन्तु वास्तवसे वह सब निर्जीवहैं तैसे जाग्रत्‌के द्रष्टा करके कल्पे हुए जीवभी सब चेष्टावाले प्रतीत होते हैं, परन्तु वास्तवसे वह सब निर्जीव हैं। जैसे स्वप्नका कल्पित निद्राहै तैसे जाग्रत्‌का कल्पक अज्ञानहै। जैसे जबतक निद्रा नाश नहीं होती है तबतक स्वप्नका सर्व व्यवहार होता है तैसे जबतक आत्मज्ञान करके अज्ञानका नाश नहीं होता है, तबतक जाग्रत्‌काभी सर्व व्यवहार होताहै जैसे स्वप्नसे जागाहुवा पुरुष स्वप्नरूप भ्रांति सिद्ध अपर पुरुषकी मुक्तिको दूसरेके प्रति कथन करता है, तैसे जीवकी भ्रांति सिद्ध शुकादिकोंकी मुक्तिको तिसके प्रति शास्त्रबोधन करता है। जैसे स्वप्नमें स्वप्नका द्रष्टा गुरु और ईश्वरकी कल्पना करके उनकी उपासनाको करता है और उनसे विद्या आदिक फलको प्राप्त होता है तैसे जाग्रत्‌का द्रष्टाभी जाग्रत्‌में गुरु ईश्वरकी कल्पनाको करके उनसे आत्मविद्याको प्राप्त होकर मोक्षको प्राप्त होता है ॥ १ ॥

अब एक जीववादमें दूसरेके मतको दिखाते हैं:-

पूर्व जो एक जीववादीने कहा है, एक शरीर सजीव है अपर शरीर सब निर्जीव हैं ऐसा तिसका कथन ठीक नहीं है क्योंकि वह एक जीव एकही शरीरमें रहता है और शरीरोंमें नहीं रहता है। इस अर्थको सिद्ध करनेवाली कोईभी प्रबल युक्ति नहीं मिलती है और श्रुतियोंमें जीवसे भिन्न ईश्वरको सिद्ध किया है और तिसी ईश्वरकोही जगत्का कर्ता भी कहा है जीवको जगत्का कर्ता नहीं कहा है। किंतु ब्रह्मका प्रतिबिंब रूप हिरण्यगर्भही मुख्य एक जीव है और बिंबरूप ब्रह्मको ईश्वर कहा है, सो जीवसे भिन्न करके माना है, वही हिरण्यगर्भ भौतिक प्रपंचका कर्ता माना है उसीको कारणोपाधिभी कहा है। तिसी हिरण्यगर्भ मुख्य एक जीवके अपर जीव सब प्रतिबिंब रूपभी हैं और जैसे पटपर लिखेहुए चित्रमें मनुष्योंके जो शरीर हैं, तिनपर दिये हुए जो पटाभास हैं उनके समान यह सब जीवभी जीवाभास रूप हैं और वह सब जीवाभास रूपही संसारी जीव हैं। जैसे हिरण्यगर्भका शरीर मुख्य जीव होनेसे सजीव है, तैसे अपर शरीरभी जीवाभास होनेसे सजीव हैं॥ २॥

तीसरे एक जीववादीके मतको दिखाते हैं:-

पूर्व मतमें कहा है कि, बिंबरूप ईश्वर है, तिसका प्रतिबिंबरूप हिरण्यगर्भही एक जीव है, अपर जीव सब तिसका प्रतिबिंब रूप हैं। प्रथम तो प्रतिबिंबका प्रतिबिंब नहीं होसक्ता है, दूसरा हिरण्यगर्भका कल्प २ में भेद है, इससे यह वार्ता नहीं सिद्ध होती है जो किस हिरण्यगर्भका शरीर सजीव है और वही मुख्य जीव है और इसमें कोई निश्चित प्रमाणभी नहीं मिलता है। जो हिरण्यगर्भका शरीर मुख्य जीवसे सजीव है और अपर शरीर जीवाभासरूप जीवाभासोंसे सब सजीव हैं ये क्लिष्ट कल्पना है, किंतु अविद्यामें जो कि चेतनब्रह्मका प्रतिबिंब है सोई जीव है अविद्याके एक होनेसे वह जीवभी एकही है वह एकही जीव भोगके लिये संपूर्ण शरीरोंको आश्रयण करता है, तिसी एक एक जीवके प्रतिबिंबरूपही अपर सब जीव हैं। उन्हीं प्रतिबिंबाभासरूप जीवोंसे अपर शरीर सब जीवाभासरूप हैं और एक जीवात्माको मुख्य अमुख्यरूप करके

जीवपनेकी कल्पना करनी असंगत है और जैसे देवदत्तको अपने एकही शरीरके अवयवरूपी शिरमें सुख भान होता है और पादमें दुःख भान होता है, तैसे एकही जीवको सर्वशरीरोंमें अंगीकार करनेसे देवदत्तके शरीरमें हमको सुख है, यज्ञदत्तके शरीरमें हमको दुःख है । इस प्रकार सर्व शरीरोंमें तिस एकही जीवको सुख दुःखका अनुभव होना चाहिये और होता नहीं है। तथापि शरीरका भेद सुख दुःखके अनुसंधानका साधक है, जैसे प्रथम शरीरमें और उत्तर शरीरमें जीव एक है, तबभी प्रथम शरीरका याने पूर्व जन्मवाले शरीरके सुख दुःखका अनुसंधान होता नहीं तिसके अनुसंधानका साधक शरीरका भेद है तैसेही सब शरीरोंमें जो सुख दुःखका अनुसंधान है, तिसका साधकभी शरीरका भेद है ॥

इस मतमें अनेक शरीरोंमें एकही जीव अंगीकार किया है:—

एक जीववादमें तीन मतोंको दिखादिया है, अब अनेक जीववादमें मतभेदको दिखाते हैं:—

अनेक जीववादके प्रथम मतको दिखाते हैं:—

तद्यो यो देवानां प्रत्यबुध्यत स एव तदभवत् ॥ १ ॥

देवतोंमेंसे जिस २ ने ब्रह्मको जाना सो २ ब्रह्मरूपही होगया । इत्यादि श्रुतियोंमें जीवके भेदसे बद्ध और मुक्तकी व्यवस्था कही है। सो इस रीतिसे एक जीववादमें बद्ध मुक्तकी व्यवस्था बनती नहीं है, क्योंकि श्रुति कहती है देवतोंमेंसे जिसने ब्रह्मका साक्षात्कार किया है वही ब्रह्मरूप हुआ है व जिसने नहीं किया वह ब्रह्मरूप नहीं हुआ । इस श्रुतिने ज्ञानीको मोक्ष और अज्ञानीको बंध कहा है । यदि एकही जीव मानाजावैगा तब यह बंधमोक्षकी व्यवस्था नहीं बनैगी । इस लिये अनेक जीववाद मानना चाहिये, जिस हेतुसे अन्तःकरण अनेक हैं इसी हेतुसे अन्तःकरण उपाधिवाले जीवभी अनेक हैं और अन्तःकरणोंका उपादान कारण जो मूल अज्ञान है वह एक है । वह अज्ञान शुद्ध ब्रह्मकेही आश्रित है और तिसको विषय करता है । तिस अज्ञानकी निवृत्तिका नामही मोक्ष है और वह मूल अज्ञान सांश है, अर्थात् अंशों-

वाला है निरंश नहीं है । और फिर वह अज्ञान अनिर्वचनीय है तिसके अंश भी अनिर्वचनीय हैं । अन्तःकरणरूपी तिस अज्ञानके अंश हैं जिस अन्तःकरणरूपी अज्ञानके अंशमें ज्ञान उत्पन्न होता है उसी अंशकी निवृत्ति होती है, इतर अंशोंकी नहीं होती है ॥ १ ॥

अनेक जीववादमें अब दूसरे मतको दिखाते हैं:—

जीव चेतनका जो कि, अज्ञानसे सम्बन्ध है सोई बंध है और अज्ञानके सम्बन्धके नाशका नामही मुक्ति है, अज्ञानकी निवृत्तिका नाम मुक्ति नहीं है । केवल अज्ञानके सम्बन्धाऽभाव मात्रसेही बंधकी निवृत्ति होसक्ती है । यदि ऐसा नहीं मानोगे तब मूल अज्ञानका विरोधि जो ज्ञान तिसके उदय होनेसे, जैसे अग्निके सम्बन्धसे तूलका पिंड समग्र जलजाता है तैसे ज्ञानके सम्बन्धसे समग्र अज्ञानभी भस्म होजावेगा तब फिर बंध मोक्षकी व्यवस्थाभी नहीं बनैगी । इन पूर्वोक्त युक्तियोंसे जीव नहीं सिद्ध होते हैं, जीव एक नहीं है ॥ २ ॥

अनेक जीववादमें अब तीसरे मतको दिखाते हैं:—

और कोई कहता है "अहमज्ञः ब्रह्म न जानामि" मैं अज्ञहूँ ब्रह्मको मैं नहीं जानताहूँ । इस अनुभवसे यह सिद्ध होता है कि, जीवही अज्ञानका आश्रय है, विषयि नहीं है । और शुद्ध ब्रह्म अज्ञानका विषय है, आश्रय नहीं है, और अज्ञानके अंशरूप अन्तःकरण अनंत हैं, इसलिये तिनमें प्रतिबिंबरूप जीवभी अनेक हैं । जैसे एकही जाति अनेक व्यक्तियोंमें रहती है, तैसे एकही अज्ञान अनेक जीवोंमें रहता है, जिस अन्तःकरणमें ज्ञानकी उत्पत्ति होती है, ज्ञानकरके तिसी अन्तःकरणकी निवृत्ति होती है । अन्तःकरणकी निवृत्ति होनेपर प्रतिबिंबकीभी निवृत्ति होजाती है, अर्थात् अपने बिंबमें प्रतिबिंब लय होजाता है । प्रतिबिंबके निवृत्त होनेके समकालमेंही अज्ञान भी तिस उपाधिको त्याग देता है वही मोक्ष है । "जहात्येनां भुक्तभोगामजोऽन्यः" यह श्रुतिभी इसमें प्रमाण है, इस पक्षमें अज्ञानका सम्बन्धही बन्ध है, तिसकी निवृत्ति मोक्ष है ॥ ३ ॥

अनेक जीववादमें अब चतुर्थ मतको दिखाते हैं:—

अविद्या अनेक तदुपाधिक जीवभी अनेक हैं, जिस जीवकी आत्मविद्या-करके अविद्या निवृत्ति होजाती है, वही मोक्ष होजाता है । जिसकी अविद्या निवृत्त नहीं होती है तिसको बन्ध बनाही रहता है और अविद्याका नाश होनेपर तिसके नाशके संस्कार बाकी बने रहते हैं । इसलिये जीवन्मुक्तिभी बनजाती है । विदेह मुक्तिमें वह संस्कार भी नाश होजाते हैं । इस मतमें अज्ञानकी निवृत्तिका नामही मोक्ष है अज्ञानके असंबन्धका नाम मोक्ष नहीं है, और अज्ञानके अनेक होनेमें प्रत्यक्षही प्रमाण है । क्योंकि प्रत्येक जीवको 'अज्ञोहं' ऐसा होता है और सबमें अज्ञानके अनेक अंश हैं । अज्ञान एक है, इसमें प्रत्यक्ष प्रमाण नहीं देखते हैं, इस लिये अज्ञान एकही है ॥ ४ ॥

प्रश्न–अनेक जीववादमें हम पूंछते हैं, एक जीवकी अविद्यासे यह प्रपंच रचा गया है । या संपूर्ण जीवोंकी अविद्यासे यह प्रपंच रचा गया है ?

उत्तर–कोई तो ऐसा कहते हैं, जैसे अनेक तंतुओंसे एक पट रचित है, तैसे सब जीवोंकी संपूर्ण अविद्याका परिणाम प्रपंच है । अथवा संपूर्ण अविद्याका विषय जो ब्रह्म है, तिसका विवर्त प्रपंच है । जैसे एक तंतुके नाश होजानेसे पटका नाश नहीं होता है, [illegible] एकके मुक्त होजानेसे तिसकी अविद्याका नाश होनेपरभी तत्साधारण प्रपंचका नाश नहीं होता है । [illegible] तंतुके नाश कालमें [illegible] तंतुओंसे अपर पटकी तरह अपर सर्व जीवोंकी सर्व अविद्यासे साधारण प्रपंच बना रहता है । इस मतमें संपूर्ण जीवोंकी सर्व अविद्याका प्रपंच एक माना है ॥ १ ॥

अब इसी विषयमें दूसरे मतको दिखाते हैं:–

संपूर्ण अविद्याओंका कार्य्य जो प्रपंच है, सो अविद्याके भेदसे प्रत्येक जीवके प्रति प्रपंच भिन्न २ है और स्व स्व अविद्याकृत गगनादि प्रपंचभी जीव २ का भिन्न २ है । यद्यपि जहांपर एक कालमें बहुतसे पुरुषोंको शुक्तिमें रजतका भ्रम हुआ वहांपर सर्व पुरुषोंके सर्व अज्ञानोंसे एक २ जनकी उत्पत्ति बनती है । इससे तो यह साबित हुआ कि जीव २ के अज्ञानके भेदसे अज्ञानकृत रज-तका भेदभी कहना बनता है । तथापि तहांपर दैवयोगसे एक पुरुषको शुक्तिके

ज्ञान सहित अज्ञान उपादान :रजतका नाश होनेपरभी अपर पुरुषको रजत भ्रम बनाही रहता है । इस हेतुसे वहांपर रजतका भेद अवश्यही मानना पडेगा। जैसे शुक्तिके अज्ञानसे शुक्ति रजतका भेद है अर्थात् अपनी २ रजत भिन्न २ शुक्तिके अज्ञानसे जैसे रची हुई है तैसे जीव २ का प्रपंचभी अपना २ भिन्न २ ही रचाहुआ है, किन्तु एक नहीं है। और एक पुरुषसे दूसरा पुरुष वहांपर कहता है कि, शुक्ति रजतमें जो रजत तुमने देखा है वही रजत हमने भी देखा है यह प्रतीतिभी भ्रममात्र है । तैसे जो घट तुमने देखा है सोई घट हमनेभी देखा है यह प्रतीतिभी भ्रममात्र है । इस मतमें संपूर्ण अविद्याओंका कार्य्य प्रपंचको मान करके भी भिन्न २ ही प्रपंचको माना है ॥ २ ॥

अब इसी विषयमें तीसरे मतको दिखाते हैं:—

गगनादि प्रपंच जीवकी अविद्याका परिणाम नहीं है, किन्तु जीवाश्रित जो अविद्या तिस अविद्याके समूहसे भिन्न जो माया सो सर्व जीवोंके साधारण प्रपंचका परिणामी उपादान है, सो माया ईश्वरके आश्रित है और तिस मायाका कार्य्य प्रपंचभी एकही है इसीसे एकत्व प्रतीति सबकी भ्रमरूप एकही है " माया च अविद्या च मायिनं तु महेश्वरम् " इस श्रुतिसे अविद्यासे भिन्न ईश्वर आश्रित माया प्रतीत होती है और जीवोंकी अविद्याका आवरण-[illegible]में और शुक्ति रजतादिक प्रातिभासिक विक्षेपमें उपयोग है इस मतमें [illegible]चको ईश्वराश्रित मायाका कार्य्य मानकर सर्व जीवोंका साधारण [illegible]माना है ॥ ३ ॥

जीवन्मुक्तिका विचार।

अविद्यामें आवरण विक्षेप दो शक्तियें हैं ब्रह्मज्ञान करके आवरण शक्तिका नाश होता है, विक्षेप शक्तिवान् मूल अज्ञानका नाश नहीं होता है प्रारब्ध कर्मरूप प्रतिबंधकके नाश होनेसे आवरण रहित चेतनसे विक्षेपशक्तिवान् अविद्याका नाश होता है । इस मतमें विक्षेपशक्तिवान् अविद्याकोही अविद्याका लेश माना है। तिस लेशकी निवृत्ति वृत्तिके संस्कारोंके सहित चेतनसे मानी है ॥ १ ॥

और कोई कहता है कि, जैसे लशुनके बासनके धोनेसे भी तिसमें लशुनकी वास रहजाती है तैसे तत्त्वबोधसे अंतःकरणका उपादानकारण जो अविद्या तिसकी निवृत्ति होनेपरभी अविद्याजन्य देहादिकोंकी स्थितिका कारण कोई वासना विशेष रहजाती है उसीका नाम लेश अविद्या है तिसी लेश अविद्या करके देहादिकोंकी प्रतीति जीवन्मुक्तकी बनी रहती है ॥ २ ॥

और कोई कहता है, जैसे दग्धपटमें स्वकार्य्य करणकी सामर्थ्य नहीं रहती है तैसे तत्त्वज्ञान करके बाधित दृढकार्य्य करनेमें असमर्थ जो मूल अविद्या सोई लेश अविद्या कहलाती है ॥ ३ ॥

और कोई कहता है कि, विरोधी साक्षात्कारके उदय होनेसे लेश अविद्याभी नहीं रहती है ब्रह्म साक्षात्कारके उदय मात्रसे कार्यसहित वासनासहित अविद्याकी निवृत्ति होजाती है । जीवन्मुक्तिका बोधक जो शास्त्र सो श्रवण विधिका अर्थवाद मात्र है । जीवन्मुक्तिमें तिसका तात्पर्य नहीं है किन्तु श्रवणकी प्रवृत्तिमें तिसका तात्पर्य है ॥ ४ ॥

प्रश्न–ज्ञानके उदय कालमें और उपाधिके लयकालमें जीवत्वभावसे रहित जो आत्मा है तिसका ईश्वरसे अभेद होताहै, अथवा शुद्ध ब्रह्मसे अभेद होताहै।

एक जीववादीका तो इसमें यह मत है कि, एकही जीव है और मूल अज्ञानभी एकही है तिस जीवको जिस किसी अन्तःकरणमें ज्ञानको उदय होनेसे कार्यसहित अज्ञानका तिसी क्षणमें बाध होता है, अज्ञानके बाध होनेपर निर्विशेष चैतन्यरूपसे अवस्थानका नामही मुक्ति हैं । इस मतमें शुद्ध ब्रह्मकी प्राप्तिका नामही मुक्ति है ॥ १ ॥

और जो प्रतिबिंबकोही जीव ईश्वररूप करके मानता है, तिसका यह मत है । अनेक उपाधियोंमें एकका प्रतिबिंब होनेपर जिस उपाधिका नाश होताहै तिसका प्रतिबिंब अपने बिंबरूपसे स्थित होजाता है । दूसरे प्रतिबिंबसे तिसका अभेद होता नहीं किन्तु अपने बिंबसेही तिसका अभेद होता है । इस मतमेंभी मुक्तपुरुषका शुद्ध ब्रह्मसेही अभेद होता है ॥ २ ॥

अब जीवप्रतिबिंब ईश्वरबिंबवादीके मतसे कहते हैं:—

जैसे अनेक दर्पणोंमें एक मुखका प्रतिबिंब होनेपरभी जब कि एक दर्पण नष्ट होजाता है तब तिसका प्रतिबिंब बिंबरूपसे स्थिर होजाता है। मुखमात्र रूपसे स्थित नहीं होता है, किन्तु तिसकालमें अपर दर्पणोंकी समीपतासे मुखके प्रतिबिंबत्वका अभाव होता नहीं है; तैसे :एक ब्रह्म चेतनका अनेक उपाधियोंमें प्रतिबिंब होनेपरभी एक उपाधिमें आत्मज्ञानके उदयकालमें तिस उपाधिका बाध होनेसे तिसके प्रतिबिंबका सर्वज्ञ सर्वकर्ता, सर्वेश्वर सत्यकामादि गुणोंवाले बिंबरूपसे तिसका अभेद होजाता है। यद्यपि अविद्याके अभाव होनेसे सत्य कामादि गुण विशिष्टकी प्राप्ति संभव भी नहीं है और ईश्वरका ईश्वरत्व और सत्य कामादि गुणविशिष्टत्व स्वअविद्याकृत नहीं है, किन्तु बद्ध पुरुषकी अविद्याकृत है इसलिये सत्य कामादि गुणोंका कथन भी बन जाता है ॥ ३ ॥

चित्तवृत्ती कहती है—हे विवेकाश्रम ! एक वेदांतमें आपने बहुतसे मत कहे हैं और हरएक मतवालोंने जीव ईश्वरका स्वरूप भिन्न २ तरहका माना है और मुक्तिमेंभी कुछ फरक माना है. तब किसका मत ठीक है और किसका ठीक नहीं है और किसके मतमें विश्वास करनेसे कल्याण होता है ? तब विवेकाश्रम कहता है, हे चित्तवृत्ते ! सबकेही मत ठीक हैं, क्योंकि सबका तात्पर्य आत्मबोधमें है अपनेको ब्रह्मरूप निश्चय करनेसे पुरुषका कल्याण होता है। सो सबका तात्पर्य जीवकोही ब्रह्मरूप कथन करनेमें है, किसी मतसे तुम अपनेको ब्रह्मरूप निश्चय करलेवो सो कहाभी है:—

यया यया भवेत्पुंसां व्युत्पत्तिः प्रत्यगात्मनि ।
सा सैव प्रक्रिया साध्वी ज्ञेया सर्वात्मना बुधैः ॥ १ ॥

जिस रीतिसे पुरुषोंको प्रत्यगात्माका बोध हो वही साध्वी प्रक्रिया तिसके [illegible]ये बुद्धिमानोंको जानने योग्य है ॥ १ ॥

हे चित्तवृत्ते ! पूर्वोक्त सर्वमतोंका तात्पर्य अद्वैत आत्माके बोधमें है, वह बोध किसी रीतिसे हो वही रीति उत्तम है। विना अद्वैत बोधके कदापि मुक्ति नहीं होती है। और जितने भेदवादी मत हैं, यह सब बंधनमें फँसाने वाले हैं, छुडाने वाले नहीं हैं। इस लिये भेदवादियोंका संगभी मोक्षका विरोधी है।

मोक्षस्य नहि वासोऽस्ति न ग्रामान्तरमेव वा ।
अज्ञानहृदयग्रन्थिनाशो मोक्ष इति स्मृतः ॥ १ ॥

किसी देशमें मोक्षका वास नहीं है, न किसी ग्रामके भीतर मोक्षका वास है, किन्तु हृदयमें जो अज्ञानकी ग्रन्थि है तिसके नाशका नामही मोक्ष है ॥ १ ॥

अनात्मभूते देहादावात्मबुद्धिस्तु देहिनाम् ।
साऽविद्या तत्कृतो बंधस्तन्नाशो मोक्ष उच्यते ॥ २ ॥

अनात्मरूप जो देहादिक हैं, उनमें जो जीवोंकी आत्मबुद्धि है उसीका नाम अविद्या है तिस अविद्याकृतही बन्ध है, तिसके नाशका नाम मोक्ष है ॥ २ ॥

कामानां हृदये वासः संसार इति कीर्तितः ।
तेषां सर्वात्मना नाशो मोक्ष उक्तो मनीषिभिः ॥

कामनाओंका जो हृदयमें निवास है तिसका नाम संसार है । उन कामनाओंका जो सर्वरूपसे नाश होजाना है, तिसीका नाम मोक्ष है ॥ ३ ॥

हे चित्तवृत्ते ! और सब मतोंवालोंकी मुक्ति अनित्य है, क्योंकि, वह सब मोक्षावस्थामें भी भेद मानते हैं और लोकांतरकी प्राप्तिको वह मोक्ष मानते हैं । इससे उनकी मुक्ती वेदविरुद्ध भी है और अनित्य भी है और वेदमें कहीं भी मुक्तका पुनरागमन नहीं लिखा है सो दिखाते हैं । व्याससूत्रम्:—

अनावृत्तिः शब्दादनावृत्तिः शब्दात् ॥ १ ॥

श्रुतिमें मुक्तकी अनावृत्ति कही है "नच पुनरावर्त्तते नच पुनरावर्तते"॥ मुक्तहुवा पुरुष फिर हठकरके संसारमें नहीं आताहै, फिर हठकरके संसारमें नहीं आता है ॥ १ ॥ गीतायामपि—

यद्गत्वा न निवर्तंते तद्धाम परमं मम ।

जिस पदको प्राप्त होकर फिर लौटकर नहीं आता है, वही मेरा परम स्वरूप है । सांख्यसूत्रम्:—

न मुक्तस्य पुनर्बंधयोगोपि अनावृत्तिश्रुतेः ।

मुक्त पुरुषको फिर बंधका सम्बन्ध नहीं होताहै, क्योंकि श्रुतियोंमें अनावृत्ति शब्द श्रवण किया है ॥

यदा सर्वे प्रभिद्यन्ते हृदयस्येह ग्रन्थयः ।
अथ मर्त्योऽमृतो भवत्येतावदनुशासनम् ॥ १ ॥

जिस कालमें विद्वान्के हृदयकी ग्रन्थियाँ सब भेदन होजाती हैं, इससे अनंतर वह अमृत अर्थात् मोक्ष होजाता है, यही वेदका अनुशासन है ॥ १ ॥

ज्ञात्वा देवं सर्वपाशापहानिः
क्षीणैः क्लेशैर्जन्ममृत्युप्रहाणिः ॥ १ ॥

परब्रह्मको जानकर संपूर्ण पाशोंसे छूट जाताहै, अविद्या आदिक क्लेशोंके नाश होनेसे जन्म मरणसे भी छूट जाता है ॥ १ ॥

हे चित्तवृत्ते ! मुक्त पुरुषका पुनरागमन किसीप्रकारसे भी नहीं होता है, क्योंकि अनेक श्रुतियें इसमें प्रमाण हैं । उनमेंसे कुछ पीछे दिखाई भी हैं, अब युक्तिसे भी दिखाते हैं । मुक्त होजानेपर कोई कर्मोंका संस्कार बाकी रहता है या नहीं रहता है, यदि कहो रहता है; तब मुक्त न हुवा, क्योंकि मुक्त नाम कर्मबन्धनसे छूटजानेका है, जिसके ज्ञानरूपी अग्नि करके संपूर्ण कर्मोंका नाश होजाय वही मुक्त कहाता है । जिसका कोई एक कर्म शेष रहजाय वह मुक्त नहीं कहाता है, क्योंकि जन्मका हेतु तो कर्म है, वह तो तिसका शेष बैठा है, तब मुक्त कैसे होसक्ता है, किन्तु कदापि नहीं होसक्ता है, यदि कहो मुक्त पुरुषका कोई भी कर्म शेष नहीं रहता है, अर्थात् कोई भी कर्मोंका संस्कार नहीं रहता है, तब फिर तिसका पुनरागमन नहीं बनताहै । क्योंकि जन्मका हेतु जो कर्मोंका संस्कार वह तो तिसके बैठे हैं, फिर मुक्त कैसे होसक्ता है किंतु कदापि नहीं होसक्ता है ।

चित्तवृत्ति कहती है हे विवेकाश्रम ! आपने पीछे आत्माको प्रकाशरूप कहाहै और अज्ञानको तमरूप करके कहा है । जैसे प्रकाशरूप सूर्यमें तमरूप अंधकार किसी प्रकारसेभी नहीं रहसक्ता है, तैसे प्रकाश स्वरूप चेतनमें भी अज्ञान नहीं रहसक्ता है । तब फिर चेतनके आश्रित होकर कैसे अज्ञान

रहता है मेरे इस संशयको तुम दूर करो । वैराग्याश्रम कहते हैं हे चित्तवृत्ते ! यह शंका भेदवादियोंकी है, जो भेदवादी ऐसी शंकाको करते हैं, उनसे हम पूंछते हैं, ईश्वरको तो वहभी प्रकाशस्वरूप मानते हैं और जगत्को तमरूप करके मानते हैं । प्रकाशस्वरूप ईश्वरमें तमरूप जगत् कैसे रहसक्ता है ? फिर प्रकृतिको वह जड मानते हैं, जो जड होता है वही तमरूपभी होता है, वह प्रकृति तिस व्यापक चेतनमें कैसे उनके मतमें रहती है ? फिर शुद्ध ईश्वरमें वह इच्छादिक गुणोंको मानते हैं, शुद्धमें वह इच्छा आदिक गुण कैसे रहते हैं ? यदि रहेंगे तब तिसकी शुद्धता न रहेगी और जीवके साथ गुणों करके तुल्यताभी होजायगी । क्योंकि जीवभी इच्छा आदिक गुणोंवाला है. फिर व्यापक प्रकाश स्वरूप चेतनमें अन्धकाररूपी रात्रि कैसे रहती है ? यदि कहो तिस ईश्वरमें प्रकृति और जगत् तथा रात्रि नहीं रहती है तब ईश्वर व्यापक सिद्ध नहीं होगा फिर उन भेदवादियोंका आत्माभी चेतन है, शुद्ध है क्योंकि जो चेतन होता है, वह शुद्धभी होता है तब फिर जिस कालमें तिसमें एक वस्तुका ज्ञान रहता है तिसकालमें इतर वस्तुओंका अज्ञानभी रहता है और ब्रह्मांडके अन्तर्वर्ति करोडों पदार्थोंका अज्ञान सदैवकालमें तिसमें बना रहता है और यह तो आप कहही नहीं सक्ते हैं जो उसमें संपूर्ण पदार्थोंका ज्ञानही बना रहता है यदि ऐसे कहोगे तब तुमको सर्वज्ञ होना चाहिये, सो तो नहीं है इसीसे सिद्ध होता है कि तुम्हारे आत्मामें अनंत पदार्थोंका अज्ञान बैठा है, वह फिर कैसे रहता है ? और यदि कहो वह अज्ञान इस बाहरके तमकी तरह नहीं है तब हमारा अज्ञान भी बाहरी तमकी तरह नहीं है । इससे विलक्षण है। जैसे तुम्हारा अज्ञान तुम्हारे चेतनमें रहताहै, तैसे हमारा अज्ञानभी चेतनकेही आश्रित रहता है । यदि कहो हमारा आत्मा शुद्ध नहीं, तब हम पूंछते हैं कि, तुम्हारे आत्माको अशुद्ध किसने किया है ? एक पदार्थ जो शुद्ध होता है सो दूसरे पदार्थके सम्बन्धसे अशुद्ध होजाता है, जैसे शुद्ध जल मलके सम्बन्धसे या किसी और दुर्गंधिवाले पदार्थके सम्बन्धसे अशुद्ध होसक्ता है क्योंकि वह दोनों सावयव पदार्थ हैं, आत्मा निरवयव निराकार तिसके साथ दूसरे मलिन पदार्थका सम्बंधही किसी प्रकारसे नहीं बनता है । तब वह अशुद्ध कैसे

होगया ? सावयवका निरवयवके साथ संयोग या समवाय कोईभी सम्बंध नहीं बनता है, क्योंकि संयोगसम्बंध सावयव पदार्थोंकाही होता है सावयव निर-वयवका संयोगसम्बंध किसी प्रकारसेभी नहीं होता है । फिर कार्यकारणका समवाय सम्बन्ध होता है, सो चेतन किसीभी जडकार्य्यका उपादानकारण नहीं है और जड चेतनका कोई सम्बन्ध भी माना नहीं है, तब कैसे तुम्हारा आत्मा अशुद्ध होगया । यदि कहो कर्मोंके संस्कार तिसमें रहते हैं इसीसे वह अशुद्ध होगया है, सोभी नहीं । क्योंकि विना शरीरके केवल आत्मा कर्म कर्ताही नहीं है और लोकमेंभी शरीरकोही कर्म करते सब कोई देखता है, आत्माको किसीने नहीं देखा और शरीरके किये हुए कर्म आत्माको लगभी नहीं सक्ते हैं। क्योंकि ऐसा नियम है । यज्ञदत्तका कर्म देवदत्तको नहीं लगसक्ता है। यदि कहो शरीरके साथ आत्माका संबन्ध होनेसे शरीरकरके करे हुए कर्म आत्मामें चलेजाते हैं, सोभी नहीं क्योंकि शरीरके साथ संयोगादि संबंध निरवयव चेतनके बनतेही नहीं हैं । यदि कहो कल्पित सम्बंध मानेंगे तब तुम्हारा मतही जाता रहेगा और फिर जैसे कल्पित संबन्ध शरीरका आत्माके साथ मानते हो ऐसेही तुमको कल्पित संबन्ध अज्ञानकाभी मानना पडैगा। यदि कहो आत्मा अशुद्ध नहीं है, भ्रांति करके अपनेको अशुद्ध मानता है तब उसी भ्रांतिको हम अज्ञान कहते हैं, फिर शुद्धको भ्रांति कैसे होगई । और तिस भ्रांतिका स्वरूप क्या है ? यदि कहो वह भ्रांति अनादि है और कुछ कही नहीं जाती है, तब फिर उसीको अनादि अनिर्वचनीय अज्ञान क्यों नहीं तुम मान लेतेहो ? यदि प्रकाशस्वरूप आत्मा अज्ञानका विरोधी होता तब तुम्हारे आत्मामें अनेक पदार्थोंका अज्ञान और भ्रान्ति कैसे रहती ? और रहती है इसीसे सिद्ध होता है आत्मा अज्ञानका विरोधी नहीं है । जैसे जीवात्मा अज्ञानका विरोधी नहीं है, तैसे ईश्वरात्माभी अज्ञानका विरोधी नहीं है। क्योंकि समसत्ताक पदार्थ परस्पर विरोधी होते हैं, विषम सत्ताक पदार्थ परस्पर विरोधी नहीं होते हैं। जैसे एक अधिकरणमें समसत्तावाले अर्थात् व्यावहारिक सत्तावाले घट पट दो पदार्थ नहीं रहसक्ते हैं, जिस जगह-पर घट रक्खा रहेगा, उसी जगहमें पट नहीं रक्खा जाता है, किन्तु उस

जगहसे दूसरी जगहमें पट रक्खा जावैगा, परन्तु विषम सत्तावाले दो पदार्थ एकही जगहमें रह जाते हैं जैसे व्यावहारिक शुक्तिमें प्रातिभासिक रजत रहती है शुक्तिकी व्यावहारिक सत्ता है, रजतकी प्रातिभासिक सत्ता है फिर जैसे व्यावहारिक अन्तःकरणमें प्रातिभासिक स्वप्नके पदार्थ रहते हैं, तैसेही पारमार्थिक सत्ता चेतनकी है प्रातिभासिक सत्ता अज्ञानकी है, वह भी चेतनमें रहसक्ता है । क्योंकि चेतन अज्ञानका साधक है, बाधक नहीं है । जैसे सामान्य अग्नि सब काष्ठोंमें रहती है, परन्तु काष्ठका विरोधी नहीं है, अर्थात् काष्ठको जलाती नहीं है, किंतु विशेष अग्नि जोकि प्रज्वलित हो रही है वही काष्ठोंकी विरोधी है, तथा काष्ठोंको जला देती है । तैसे सामान्य चेतनभी किसीका विरोधी नहीं है, किंतु वृत्ति प्रतिबिंबित जो विशेष चेतन है, वही अज्ञानका विरोधी है अर्थात् अज्ञानका नाशक है । हे चित्तवृत्ते ! इस रीतिसे चेतनमें अज्ञान रहता है वह अज्ञानभी कल्पितही है केवल चेतनही नित्य है । और सदैवकाल एक रस अपनी महिमामें ज्योंका त्यों स्थित रहता है । चित्तवृत्ति कहती है हे भ्रातः ! तुम्हारी कृपादृष्टिसे और तुम्हारे अमृतरूपी वचनोंको सुनकर मैं कृतार्थ होगईहूं । अब मेरेको कुछभी संदेह नहीं रहा है मैंने आपकी दयादृष्टिसे अपने आत्माको जान लिया है । ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

दोहा ।

संमत एक अरु नव पुनि, पंचहि नव पुनि आन ।
सिंह मास तिथि एकादशी, पूर्ण ग्रन्थ यह जान ॥ १ ॥

इति श्रीस्वामिहंसदासशिष्येण स्वामिपरमानन्दसमाख्याधरेण विरचिते ज्ञानवैराग्यप्रकाशनामकग्रन्थे ज्ञाननिरूपणं नाम द्वितीयः किरणः ॥ २ ॥

॥ समाप्तोऽयं ग्रंथः ॥

विक्रय्यपुस्तक (वेदान्तग्रन्थ-भाषा)

नाम.	कि. रु. अ
अनुभवप्रकाश-(वेदांत) योगेश्वर श्री १०८ बनानाथजीकृत मारवाडी भाषा इसमें-गुरुकी महिमा, योगीकी प्रशंसा, सन्तोंका प्रभाव, मनकी चेतावनी, वेदान्तके पद, तत्त्वमस्यादि वाक्योंका सार, आसावरी, सोरठ, वसन्त, गूजरी आदि अनेक रागोंमें वर्णन किया है.	०-
अभिलाखसागर-भाषामें स्वामी अभिलाखदास उदासी कृत । इसमें वन्दनविचार, ग्रन्थविचार, मार्गविचार, भजनविचार, जडब्रह्म-विचार, चैतन्यब्रह्मविचार 'निराकारब्रह्मविचार, मिथ्याब्रह्मविचार, अहंब्रह्मविचार, ब्रह्मविचार, वर्तमान ब्रह्मविचारादि विषय अच्छी-रीतिसे वर्णित हैं	१-
अध्यात्मप्रकाश-श्रीशुकदेवजीप्रणीत-कवित्त, दोहे, सोरठे, छन्द, चौपाई इत्यादिमें वेदान्तका अपूर्व ग्रन्थ है	०-
अमृतधारा-वेदान्त भाषाछन्दोंमें भगवानदास निरंजनीकृत वेदान्तकी प्रक्रिया छन्दोंमें लिखीगई है	०-१
आत्मपुराण-भाषामें दशोपनिषद्का भावार्थ श्रीमत्परमहंस परिव्राज-काचार्य चिद्घनानन्द स्वामीकृत	१२-
आनन्दामृतवर्षिणी-आनन्दगिरि स्वामिकृत-गीताके कठिन शब्दोंका प्रतिपादन अर्थात् यह वेदांतका मूल है.	०-१
एकादशस्कन्ध-भाषामें चतुर्दासजी कृत भागवतके एकादशस्कन्धकी वेदान्त रसमय कथा सुगम रीतिसे वर्णित है	०-१
गर्भगीताभाषा-श्रीकृष्णार्जुनसंवाद अत्यन्त स्पष्टरीतिसे लिखा गया है	०-१
गुप्तनादभाषा-मिसेस एनीबिसेण्टकृत-फ्रिमेशन थियोसोफी भैरवी इत्यादिका सार	०-१

